Sakar Yaadein

साकार यादें

साकार यादें

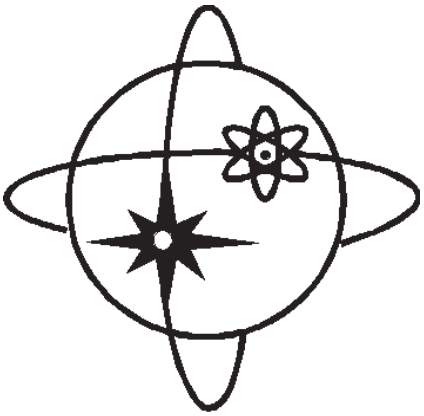

कृति

(संकलन)

स्पार्क *(SpARC)*

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय
एवं
राजयोग एज्युकेशन एवं शोध प्रतिष्ठान
पाण्डव भवन, आबू पर्वत, राजस्थान

स्पार्क (SpARC - Spiritual Applications Research Centre)

स्पार्क (SpARC) एक अनुसन्धान प्रभाग (Research Wing) है जो कि देश तथा विदेश के अनेक स्थानों पर कार्य कर रहा है। स्पार्क (SpARC) शब्द का विस्तार (Fullform) Spiritual Applications Research Centre है और इसका लक्ष्य है विश्व नव-निर्माण के कार्य में अध्यात्म एवं विज्ञान को एक-दूसरे का सहयोगी बनाना। इसी लक्ष्य-पूर्ति के लिये स्पार्क मनन-चिंतन और विचार सागर मंथन के द्वारा ईश्वरीय ज्ञान को वैज्ञानिक पृष्ठभूमि और विज्ञान के विरोधोक्ति युक्त शाखाओं को आध्यात्मिक पृष्ठभूमि प्रदान करते हुए दोनों को एक-दूसरे के समीप लाकर आपस में मिलकर कार्य करने के लिए तैयार कर रहा है।

इस कार्य में तीव्र गति से अग्रसर होने के लिए तथा जीवन के समस्त पहलुओं में आध्यात्मिकता का प्रयोग और उपयोग से प्राप्त परिणामों को सर्वमान्य बनाने के लिए प्रभावशाली विधि, साधन और तकनीक का विकास करने आदि कार्य में **स्पार्क सर्व प्रकार के अनुसन्धानों को प्रोत्साहित करता है।**

लोकल चैप्टर:

स्पार्क की गतिविधियों को और अधिक गतिशील बनाने के लिए देश-विदेश में स्पार्क के लोकल चैप्टर्स चल रहे हैं। एक अथवा एक से अधिक सेवाकेन्द्र, शहर, राज्य अथवा देश के 5 से अधिक बी.के. भाई-बहनों के समूह जब मिलकर स्पार्क के गतिविधि को कार्यान्वित करते हैं उसे स्पार्क लोकल चैप्टर (Local Chapter) कहा जाता है। किसी भी स्थान पर लोकल चैप्टर शुरू करने के लिए यह आवश्यक है कि उस स्थान के सेवाकेन्द्र की प्रभारी बहन की स्वीकृति से सेवाकन्द्र पर 5 से अधिक दैवी भाई-बहनों का एक ग्रुप तैयार किया जाए। सभी भाई-बहनें सप्ताह में, 15 दिन में या मास में कम से कम एक बार आपस में मिलकर ईश्वरीय ज्ञान बिन्दु पर रूह-रिहान, विचार-सागर मंथन करें तथा कार्यशाला और परिचर्चा आदि कार्यक्रम का आयोजन करें। ब्र.कु. भाई-बहनों के आध्यात्मिक उन्नत्ति के साथ-साथ अन्य आत्माओं की सेवा करने के लिए नवीन विधियों का निर्माण कर सकें।

अमृत सूची

(1) अतीत की मीठी यादें - दादी प्रकाशमणि, मधुवन 1

1.बाबा आपको क्या वरदानी बोल बोलते थे और बाबा के साथ रहते आपने क्या-क्या सीखा? 1
2. जब बाबा अव्यक्त हुए, उस दिन बाबा की दिनचर्या कैसी रही? 2
3. जब बाबा ने देह का त्याग कर सूक्ष्म वतन को अपना सिंहासन बनाया वह अनुभव सुनाइये। 2
4. तब से अब तक के आपके अनुभव क्या है? 3
5. दादीजी, आप यज्ञ का क्या स्वरूप देखना चाहती है? 3
6. प्रश्नः- दादी जी, अब आपके मन में किस लक्ष्य को पाने की प्रेरणा रहती हैं? 4
7. ईश्वरीय परविार के लिए आपका प्रेरणादायक संदेश 4

(2) शिववाबा और ब्रह्मावाबा की अद्भूत कार्य विधि -दादी प्रकाशमणी, मधुवन..... 4

1. हरेक में जो अच्छा गुण हो, उसके अनुसार उसे व्यस्त कर देना 4
2. सबको प्यार तथा सम्मान देकर आगे बढ़ाना 5
3. सच्चे पिता का सम्बन्ध 6
4. हाथ उठाना और निश्चय पत्र लिखवाना 7
5. दौड और होड 8
6. समय की पहचान 8
7. विकारों के लिये कडे शब्दों का प्रयोग 9
8. ज्ञान के कायदे समझाना और धर्मराजपुरी की सजायें बताना 10
9. स्वयं मेहनत करके दिखाना 12
10. खुशी में लाना और हल्का करना 12

(3) पिताश्री निद्राजीत थे - दीदी मनमोहिनी, माऊण्ट आबू 13

1. पिताश्री निद्राजीत 13

(4) एक वार की वात है - दीदी मनमोहिनी, मधुवन 15

1. उचित सम्मान और स्नेह देकर ही ज्ञान देना चाहिए 15
2. कर्तव्य निभाने में सूक्ष्म बातों का ध्यान 15
3. भूल के प्रति अलबेले 16

(5) सर्व श्रेष्ठ ऋषि जिन्हें हमें फोलो करना है - दीदी मनमोहिनी, मधुवन 16

1. प्रत्यक्ष साक्षात्कार 17
2. मैं-पन का सम्पूर्ण त्याग 17
3. ब्रह्मा बाबा सर्वश्रेष्ठ योगी 18
4. अन्तिम दिनों में 18
5. एक आकर्षक दृश्य 18

6. नारायणी नशे में बाबा 18

(6) बाबा ने मुझे निश्चिंत बना दिया - दादी जानकी, मधुबन 19

1. बाबा ने मुझे निश्चिंत बनाया 20
2. बाबा ने सिखाया बच्ची कभी किसी बातों में मत आना 20
3. बिना पूछे ही समाधान 20
4. जनक समान उपराम 20
5. मस्त फकीर बनने का वरदान 20

(7) कर्मभोग भी सेवा करने का साधन - दादी मनोहर इन्द्रा, ज्ञान सरोवर 21

1. अचल स्थिति 21
2. बम्बई जाने के लिए विदा 21
3. बीमारी भी ईश्वरीय सेवा के लिए एक निमित्त कारण 22
4. एक थे जिस्मानी सर्जन, दूसरे थे रुहानी सर्जन 22
5. डॉक्टर के प्रति बाबा के मुखारविन्द से 23
6. अस्पताल में ईश्वरीय संदेश 23
7. अपकारियों पर भी उपकार 23
8. सभी को अविनाशी ज्ञान रत्नों की सौगात 24

(8)भोलेनाथ के भण्डारे की भोली भण्डारी का अलौकिक अनुभव -भोली दादी, मधुबन 25

(9) ईश्वरीय सेवा की धूम - दादी शान्तामणी, शान्तिवन 27

1. सभी को इस यज्ञ में पधारने के लिए निमंत्रण 27
2. कापारी (बेहद) खुशी 28
3. पाण्डव भवन में सदा खुशी के नगाडे बजें 28
4. सम्मेलन के अवसर पर बाबा का देहली पधारना 28

(10) सबसे गुण लेने की शिक्षा, जो बाबा ने दी - दादी धैर्य पुष्पा, नई दिल्ली 29

1. सागर से गम्भीरता आदि गुण 29
2. प्रकृति के तत्त्वों से गुण 30
3. फूलों और फलों से गुण 31

(11) पाण्डव भवन और बाबा का बगीचा - ईशु दादी, माउण्ट आबू 35

1. होगा वही जो होना होगा 36
2. सरकारी अधिकारियों से भेंट 36
3. सूई की नोक के बराबर भी जगह नहीं। 37
4. तीन कदमों में तीन लोक ले लेंगे 37
5. पाण्डव भवन का निर्माण 37
6. राज ऋषियों अथवा भावी राजकुमारों का शिक्षा स्थल 38

7. बाबा के साथ कदम-कदम में पद्मा-पद्म की कमाई 38
8. इसका नाम पाण्डव भवन 39
9. मधुबन के अंगूर 39
10. बाबा की कुटिया 40
11. इस तपोवन में बाबा की तपस्या 40
12. बाबा का बगीचा 41
13. आप कली हो, फूल हो या फल हो? 41
14. नेष्ठी अवस्था 42
15. सादगी और सद्-व्यवहार 42

(12) भागीरथ बाबा - बी.के. जगदीशभाई, दिल्ली 44

1. शिवबाबा से ऐसी घनिष्ठता का आधार 44
2. पिता तुल्य संरक्षण, स्नेह और सहायता देने में निपुण 45
3. अभय और शक्ति रूप बनने का वरदान 46
4. सभी में योग्यता भरने की कला में निष्णात 46

(13) निराले बाबा - बी.के. जगदीश भाई, दिल्ली 47

1. नेष्ठी और देहातीत बनाने वाली शक्ति शाली दृष्टि 47
2. शिव बाबा से अनन्य प्रीति 47
3. ज्ञान और प्रेम का अद्भूत मेल 48
4. ज्ञान और प्रेम साहित्य वितरण के रूप में 49
5. हर परिस्थति में बाबा की याद 49
6. शिव बाबा के यज्ञ की संभाल 50
7. अद्भूत संतुलन 50

(14) गुण मूर्ति, ज्ञान मूर्ति, स्नेह मूर्ति प्यारे बाबा का अनोखा जीवन - बी.के. जगदीश भाई, दिल्ली 51

1. आत्मिक दृष्टि 51
2. सब के शुभ चिन्तक 53
3. अपार उत्साह और अदम्य हिम्मत 54
4. माताओं का सम्मान 55
5. साधन उच्च 55
6. सादगी और बचत 56
7. सदा स्नेही और सदा सहयोगी 56
8. निर्भयता तथा सभी को सम्मान देने का गुण 57
9. आत्मा निर्भरता 57
10. शिष्टता 58
11. विनोद 58

(15) निद्राजीत ब्रह्मा बाबा - बी.के. जगदीश चन्द्रजी, दिल्ली 59

1. आलस्य और अलबेलेपन से अतीत तथा निद्राजीत 59

(16) ऐसे हैं अनुभव के कुछ चित्र - बी.के. जगदीश चन्द्र 60

(17) ऐसे थे हमारे और जगत् के बाबा! - बी.के. जगदीश भाई, दिल्ली 64

1. ईश्वरीय सेवार्थ सदा प्रोत्साहन 64
2. ईश्वरीय सेवा की तीव्र गति 65
3. जितनी सेवा की तीव्र गति की पराकाष्ठा उतनी ही प्रेम की पराकाष्टा 66
4. साहित्य कार्य में बाबा की मार्ग प्रर्दशना 67
5. चित्रों के बारे में बाबा के महत्व पूर्ण निर्देश 67
6. ज्ञान की गरिमा और महत्ता 68
7. खेलते समय भी ज्ञान के बोल 69
8. घारणा स्वरूप 69
9. याद रूपी यात्रा की रफ्तार 70

(18) कैसी अद्भूत थी वह सुहावनी घडियाँ - बी.के. जगदीश चन्द्र, दिल्ली 70

1. याद की तार कैसे जोडी जाती हैं? 71

(19) पिताश्री के जीवन से सीखी कई अनुभव की बातें - बी.के. रमेश भाई, मुम्बई 73

(20) ब्रह्मा बाबा के जीवन सम्पर्क के कुछ अनुभव मोती - बी.के. रमेश भाई, मुम्बई ... 76

(21) कानून की ईश्वरीय परीभाषा - बी.के. रमेश भाई, मुम्बई 77

1. बाबा से एक प्रश्न 78
2. बाबा द्वारा कानून के एक अद्भूत रहस्य का स्पष्टीकरण 78
3. स्वयं भी कानून का पूरा पालन करना 79
4. कानून में जडता नहीं 79
5. यथा योग्य सम्मति 80

(22) तुम्हारी याद आती है - बी.के. बीजमोहन भाई, दिल्ली 81

(23) गहरे पानी पैठ - बी.के. बृजमोहन भाई, दिल्ली 82

1. कितने गुणग्राही थे पिताश्रीजी 83

(24) मैं और मेरे बाबा - बी.के. मोहिनी बहन, मधुबन 84

1. बाबा ने मुझे जीना सिखाया 85
2. यज्ञ की सेवा 85
3. निद्राजीत बनाया 86
4. दुनिया के मायावी आकर्षणों से छुडाया 86
5. जानीजाननहार बाबा 86

(25) हीरे जैसा जीवन, हीरे में चुम्बक जैसा आकर्षण और फूलों जैसी सुगन्ध - बी.के. रोजी बहन, मद्रास 87

1. बाबा के व्यक्तित्व में एक निराला आकर्षण 87
2. शिक्षक के रूप में बाबा सदा उच्च लक्ष्य हमारे सामने रखते 87
3. बाबा स्नेह से, साक्षी होकर, कल्याण भावना से ज्ञान देते 87
4. बाबा सदा कार्य की सम्पूर्णता पर ध्यान देते थे। 88
5. बाबा ज्ञान मुरलियों पर कितना ध्यान खिचवाते 88
6. बच्चों को कितना सम्भालते थे पिताश्रीजी। 88
7. रहमदिल कितने थे बाबा और दानी स्वभाव के भी। 88
8. बाबा समय-पालन भी सिखाते और सेवा के लिए सदा तत्पर रहना भी 89
9. कितनी सम्भाल करते थे पिताश्रीजी यज्ञ की। 89
10. त्याग मूर्ति और पूर्णतः अनासक्त पिताश्रीजी 89
11. बाबा द्वारा मिली सावधानी 90

(26) एक बार की बात है - बी.के. चक्रधारी बहन, दिल्ली 91

(27) ऐसी थी बाबा की मीठी युक्तियाँ - कुंज दादी, पटना 92

(28) मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मुझे त्रिलोकी मिल गयी है - बी.के. हरदेवी बहन 92

(29) स्मृतियों के मोती - बी.के. गुरबख्श भाई, दिल्ली 93

1. बचपन की मधुर स्मृतियाँ लौटाने वाले बाबा। 93
2. समय का पाबन्द बाबा 93
3. पिताश्रीजी बेहद हितैषी 93
4. बाबा एक कुशल खिलाडी 93
5. सोते समय भी दूसरों को सुख देने का ख्याल 94
6. बेसहारों के सहारा 94

(30) बाबा में रुहानियत का आकर्षण - बी.के. ओम प्रकाश भाई, इन्दोर 94

1. भावना का आदर 95
2. सेवा की अति लगन 95

(31) सिकीलधे बाप और सिकीलधे बच्चों से न्यारी बातें और बातों की गहरी परतें 96

1. बच्चों को तकलीफ मत देना 96
2. शौक फूलों का - परंतु कौन-से फूल? 97

(32)मम्मा-बाबा के साथ के अलौकिक अनुभव -कैलास दीदी (गांधीनगर, गुजरात) ... 97

1. मातेश्वरी जगदम्बा माँ का मीठी-मीठी शिक्षाओं भरा पत्र 97
2. साकार बाबा के संग पहली यादगार मुलाकात 98
3. मुझे स्वयं भगवान ने पढाया 99
4. जानी जाननहार बाबा 101

5. बाबा साकार में होते अव्यक्त नजर आते थे 101
6. वो दिन आज भी हमें याद है 103

(33) मातेश्वरी जी की शारीरिक यात्रा और देह मुक्ति - बी.के. शीलइन्द्रा बहन, मुम्बई 104

1. विकट रोगी की परिस्थिति में स्थिति कैसी हों? 104
2. बाबा की वाणियों में अग्रिम शिक्षा 105
3. यह ईश्वरीय संस्था क्या है? 105
4. माँ से सभी प्रभावित, सभी संतुष्ट 105
5. माँ में सम्पूर्णता के चिह्न 106
6. चिकित्सकों की घोषणा 106
7. माँ की अभय एवं निश्चिंत अवस्था 106
8. विदेही अवस्था और प्रेरणा दायक नियमित जीवन 106
9. बाबा की गम्भीरता और दिव्य कार्य विधि 106
10. व्याधि और शारीरिक उपाधि से विदा की घडी निकट 107
11. यज्ञ निवासियों से मुलाकात 107
12. अन्तिम विदा 107
13. सभी यज्ञ वत्सों को सूचना देने में बाबा की दिव्य युक्ति 108
14. पहले ही से वत्सों को तैयार करना 108
15. बाबा की ज्ञान युक्त, स्नेह युक्त काव्यमयी वाणी 109
16. बाबा के न्यारे और प्यारे पन की स्पष्ट झलक 110
17. मातेश्वरी जी के बारे में शिवबाबा द्वारा स्पष्टीकरण एवं संदेश 110
18. यह जगदम्बा की यात्रा है, जरा ध्यान से निकले 110

(34) मातेश्वरी जी के दिव्य जीवन की झाँकी - बी.के.रमेश भाई, मुम्बई 112

(35) मैं और मातेश्वरी - बी.के. ब्रिजमोहन भाई, दिल्ली 115

(36) यज्ञ माता श्री सरस्वती - बी.के. शारदा बहन, पटना 118

अतीत की मीठी यादें

- दादी प्रकाशमणि, मधुबन

अनेका अनेक मनुष्यात्माओं को दिव्य प्रकाश से प्रकाशित करने वाली दादी प्रकाशमणि की अलौकिक सुगन्ध से शिवबाबा की वाटिका महक रही है। उनका त्यागी और योगी जीवन अनेक आत्माओं को प्रेरणा दे रहा है। उनका रुहानियत सम्पन्न चेहरा अनेक चेहरों में रुहानियत का बीज अंकुरित कर रहा है। आपके मुख की दिव्य मुस्कान, दूसरों के दु:खों का अंत कर देती हैं। आप इस समय प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की मुख्य प्रशासिका हैं। जैसे परमपिता से रुहों का असीम प्यार है वैसे ही दादीजी ने सभी आत्माओं के दिल को जीत कर इस संगठन को एकता के सूत्र में बाँधा है। ईश्वरीय परिवार आपकी सेवाओं से गौरान्वित है। यहाँ, ब्रह्माबाबा के सम्पूर्ण स्थिति प्राप्त कर अव्यक्त होने के समय के दादीजी के अनुभव, उनके ही योग-युक्त भावों में प्रस्तुत हैं...।

मैं कई वर्षो से बम्बई सेवा पर उपस्थित थी। वहाँ भेजकर बाबा ने मुझे कहा था कि - 'बच्ची, जैसे बाबा सभी को संतुष्ट करता है, वैसे ही सभी को संतुष्ट करो।' और जैसे कि बाबा ने मुझे वरदान दे दिया था।

मुझे यह सदा उमंग रहता था कि मैं बाबा की सभी प्रेरणाओं को कैच करुँ। और यह मेरा अनेक बार का अनुभव है कि बाबा का पत्र आने से पूर्व ही मैं बाबा की प्रेरणाओं को जान लेती थी। जिन महान सेवा के लिए बाबा ने मुझे भेजा था, मैं पूर्णतया निभाती थी, सभी के प्रति सेवाभावी होकर रहने की कामना रखती थी। इस प्रकार मैं दिसम्बर १९६८ को पार्टी लेकर मधुबन आई थी। उसी समय दीदी सेवाकेन्द्रों पर चक्कर लगाने दिल्ली की ओर जाने वाली थी इसलिए मैं वहीं मधुबन में बाबा के पास रह गई। और ये कुछ ही दिन बाबा के साथ रहना, कि बाबा ने मुझे सब कुछ सीखा दिया।

मैंने देखा कि बाबा जब किसी भी बच्चे से मिलता है तो थोडे शब्दों में उसकी समस्याओं को हल करके, उसे हल्का कर देता हैं।

मैं देखती थी कि बाबा यज्ञ के कार्य करते सदा उपराम नजर आते थे। ऐसा लगता था कि निराकार शिवबाबा सदा ही उनके तन में बिराजमान हैं। परंतु वास्तव में वह साकार बाबा ही निराकार हो चुके थे। बाबा फरिश्ता बन चुके थे।

बाबा ने मुझे एक हप्ते में ही सब-कुछ सीखा दिया कि पार्टियों को बाबा की भासना कैसे देनी हैं या सबको पूर्णतया कैसे सम्भालना है। बच्चों की स्थिति पर कैसे ध्यान रखना है, सब यज्ञ वत्सों को कैसे संतुष्ट करना है। आदि... आदि।

एक दिन बाबा ने मुझ से कहा, 'कुमारका, अगर बाबा एक तरफ बैठ जाए तो तुम यज्ञ को सम्भाल सकती हो?' मैंने बडे ही फखुर से उत्तर दिया, 'हाँ बाबा, क्यों नहीं।' मुझे क्या पता था कि बाबा के ये बोल सम्पूर्ण सत्य होंगे और हमारा प्यारा बाबा सचमुच ही देह से न्यारा होकर वतन में बैठने जा रहा है। तब बाबा को अपने सम्पूर्ण फरिश्ता बनने का स्पष्ट अनुभव था।

1.वावा आपको क्या वरदानी वोल वोलते थे और वावा के साथ रहते आपने क्या-क्या सीखा?

बाबा कहा करते थे - 'ये बच्ची माला में नम्बर वन है। ये वफादार बच्ची है।' कभी बाबा कहते थे कि - 'ये बाबा की सम्पूर्ण पवित्र कन्या है। ये सच्ची आज्ञाकारी बच्ची है।'

मैं सदा ही ऐसे समझती थी - 'जैसे कि मेरे दिल में बाबा और बाबा के दिल में मैं हूँ, मुझे बाबा की सम्पूर्ण श्रीमत पर चलना है। कुछ भी छिपाना नहीं है। और मुझे सदा ये उमंग रहता था कि मैं बाबा की आशाओं का चिराग बन कर रहूँ।'

बाबा कहा करते थे कि 'कुमारका बडी नदी है। ये महारथी बच्ची है' इस प्रकार मुझे यह महसूस होता था कि 'जैसा मेरे मन में बाबा के प्रति अथाह प्यार व आदर है, बाबा भी मुझे सच्चे प्यार व सम्मान की दृष्टि से निहारता है।' बाबा के साथ रहते हुए मैंने बाबा के जीवन से अत्याधिक उदारता और राजाओं जैसी शालीनता सीखी। मैंने बाबा से कार्य व्यवहार में रहते हुए उपराम रहने की कला सीखी, बाबा ने मुझे क्या नहीं सीखाया। सीखाया ही नहीं वरदानों से इतना सजाया जो आज भी बाबा के वे चरित्र नयनों से ओझल नहीं होते।

2. जव वावा अव्यक्त हुए, उस दिन वावा की दिनचर्या कैसी रही?

उस १८ जनवरी के स्मृति पटल पर अमिट रूप से अंकित दिवस पर सवेरे से ही बाबा का स्वास्थ्य ठीक नहीं था। यज्ञ के इतिहास में और बाबा के तपस्वी जीवन में केवल यह एक ही समय था जबकि बाबा ने प्रात: की मुरली नहीं चलाई थी, परंतु उस दिन सर्वोच्च स्थिति में, ईश्वरीय खुशी में स्थित थे।

जब हमने डॉक्टर को मंगाने को कहा तो बाबा ने उसी मस्ती में कहा था - 'बच्ची डॉक्टर क्या करेगा, मैं तो सुप्रीम सर्जन से बातें कर रहा हूँ।'

उस दिन बाबा ने कहा - 'आओ, आज बच्चों को पत्र लिखूँ।' और बाबा के हाथ में थी वह लाल कलम, जिसके सुन्दर अक्षर सभी के दिलों को खीचते थे। बाबा ने सभी पत्रों के उत्तर दिये। बाबा ने लिखा था, 'बच्चे सदा एकमत होकर, एक की याद में रहना है और सदा शक्ति को आगे रखना है। तब ही सेवा में सफलता होगी।' ये अंतिम पत्र कई बच्चों ने अपने दिल में छुपा कर रख लिए थे। कितनी सौभाग्यशाली थी वे आत्माएँ जिन्हें स्वयं सृष्टि रचता ब्रह्मा ने अपने हस्तों से पत्र लिखे थे।

फिर शाम को जल्दी ही क्लास प्रारम्भ हुई। मैंने कहा - 'बाबा, सभी इन्तजार कर रहे होंगे, आज जल्दी ही आप क्लास में चलें।' उस दिन ८.०० बजे ही क्लास में चले और साकार रूप में वे अन्तिम महावाक्य तो सम्पूर्ण गीता ज्ञान का सार है... दिल में समाने तुल्य है... बाबा ने कहा था - '**बच्चे, सिमर-सिमर सुख पाओ, कहल-कलेश मिटें सब तन के, जीवन मुक्ति पाओ।**'

'**बच्चे, निन्दा हमारी जो करें, मित्र हमारा सोई, तुम्हें किसी की भी निन्दा नहीं करनी चाहिए और किसी से वैर-विरोध भी नहीं रखना।**'

इस प्रकार याद की यात्रा पर बल देते हुये यज्ञ पिता, बाबा खडे होकर गेट की ओर चले और फिर गेट पर रुक गये... बोले - '**बच्चे, निर्विकारी, निराकारी और निरहंकारी बनो।** जैसे बेहद का बाप सम्पूर्ण व सदा निर्विकारी है, सदा निराकार है, निरहंकारी है वैसे ही बच्चों को भी बनना है।' और फिर उस अन्तिम घडी की पूर्व परछाई फेंकते हुए बाबा के मुख से ये शब्द निकले - '**अच्छा बच्चे, विदाई।**' ये शब्द बाबा ने केवल उसी रात बोले थे, जब बाबा साकार तन से बच्चों से सदा के लिए विदाई लेने जा रहे थे। नहीं तो बाबा सदा बच्चों को गुडनाईट ही कहा करते थे।

3. जब बाबा ने देह का त्याग कर सूक्ष्म वतन को अपना सिंहासन बनाया वह अनुभव सुनाइये।

मुरली सुनाने के बाद बाबा अपने कमरे में गये। हम ४ बहनें भी बाबा के साथ गई, तब बाबा के चेहरे पर सम्पूर्ण शान्ति व दिव्यता झलक रही थी। बाबा चारपाई पर नीचे पैर करके बैठे थे, तब उस अन्तिम घडी में, मेरा हाथ बाबा के हाथ में था। बाबा मुझे दृष्टि दे रहे थे। दृष्टि देते-देते बाबा शरीर से उड चले और मेरे हाथ में बाबा का हाथ ढीला पड गया। मुझे ऐसा आभास हुआ था कि बाबा मुझे हाथ में हाथ देकर अपनी सारी शक्तियाँ व उत्तर दायित्व दे गये।

हमारी समझ में कुछ नहीं आया। हमने बाबा को लेटा दिया, इतने में ही डॉक्टर आ गया और उसने चेक करके कहा कि 'बाबा अब नहीं रहे...।' परंतु मुझे ये आभास नहीं हुआ था कि 'बाबा चला गया।' मैं यही कह रही थी कि 'बाबा है... सबका प्यारा बाबा है... बाबा साथ रहेगा...।'

बाबा ने मुझ में अथाह शक्ति भर दी थी। मैं सब जगह फोन कर रही थी। मैं कहती थी - 'ड्रामा की भावि, ड्रामा याद है, बाबा अव्यक्त हो गये। जो भी आना चाहे भले पधारे। कोई भी आँसू न बहाये, बाबा तो अभी भी हमारे साथ हैं।'

बाबा ने हाथ में हाथ देकर मेरी हिम्मत बढा दी थी। मैं अडोल थी। मुझे यह संकल्प मात्र भी नहीं आ रहा था कि 'क्या हो गया' या 'अब क्या होगा' मेरी दिल भी नहीं भरी, मेरे नयन भी नहीं भरे थे। मुझे पूर्ण विश्वास था कि हमारी पढाई तो अंत तक चलती रहेगी।

और इसके बाद २१ जनवरी का वह दिन आया जब उस बाबा के पार्थिव शरीर का, जिसने लौकिक बाप से भी अधिक हमारी पालना की, हमें दुलार दिया, जिसकी गोद में खेलकर हम छोटे से बडे हुए, जिसके द्वारा हमें भगवान मिला, वरदान मिले और जिसने हम में अनेक विशेषताएँ भरी, हमने अंतिम संस्कार किया।

फिर शाम के समय अव्यक्त बाबा का प्रथम बार संदेशी के तन में आना हुआ। बाबा ने दीदी-दादी को यज्ञ की पूर्ण जिम्मेदारी दी। बाबा ने हम दोनों के सिर पर कलश रखा। अव्यक्त बाबा ने संदेश दिया था - 'बच्चे, फिक्र न करो, बाबा तुम बच्चों के लिए वतन में तैयारी करने गया है। मेरा प्यारा बच्चा मेरे पास है। बाबा ने स्वयं को गुप्त कर शक्तियों को प्रत्यक्ष करने के लिये ये पार्ट बजाया है।' ये बोल मेरे कानों में गूँजते रहते थे।

इस प्रकार यज्ञ रूपी जहाज में अनेक वत्सों को बिठाकर, ३३ वर्षो से जहाज को अनेक तूफानों और विघ्नों के बीच सुरक्षित रखकर, जो नाविक असीम साहस के साथ, अडोलता पूर्वक चला आ रहा था, अब वह हमारे हाथों में जहाज की बागडोर देकर, हमारा पूर्ण सहयोगी बनने के लिये उडकर वतन में जा बैठा।

4. तब से अब तक के आपके अनुभव क्या है?

मुझे यह आभास रहता है कि 'बाबा सदा मेरे साथ हैं। वही सब-कुछ करा रहा है। वह मेरे ऊपर हैं, मेरे कन्धों पर हैं, मेरे नयनों में हैं। मुझे बाबा की दिव्य प्रेरणाएँ प्राप्त होती हैं। जैसे कि हम दादी-दीदी बाबा की दो भूजाएँ हैं, वही अपनी भूजाओं को चलाता है।

कोई भी यज्ञ का जब बडा कार्य आता है तो मैं भी स्वयं को निमित्त ही समझती हूँ। मुझे कभी भी बोझ महसूस नहीं होता। जब कोई हमसे श्रीमत लेने आता है तो मैं तुरन्त योगयुक्त होकर बाबा से पूछ कर ही श्रीमत देती हूँ। मुझे यह भान नहीं रहता कि मैं श्रीमत दे रही हूँ। मुझे यह ख्याल रहता है कि यज्ञ में बाबा के अनेक बच्चे आते है अपना अधिकार लेने। सभी बच्चे अपना अधिकार लेकर ही जाएँ।'

अपनी पवित्रता की स्थिति के बारे में तो यही कहूँगी कि जैसे ही शुरु से ही बाबा ने मुझे पवित्रता का वरदान दे दिया है। मुझे अपना जीवन पूर्णतया वरदानी लगता है।

5. दादीजी, आप यज्ञ का क्या स्वरूप देखना चाहती है?

ये मधुबन बाबा का महान तीर्थ है। ये मधुबन ज्ञानसागर ब्रह्मपुत्रा व नदियों का संगम है। सारी विश्व ही बाबा की है। अत: इस अब्बा के घर से प्रत्येक आत्मा अँचली ले ले। अपना अधिकार ले लें। यहाँ से सब शान्ति की अँचली ले जाएँ। सबको ज्ञान व योग की अँचली प्राप्त हो। यहीं से सब अँचली लेकर कल्याण को प्राप्त हों। इस शिवबाबा के रुद्र गीता ज्ञान-यज्ञ में सभी अपने मनोविकारों की आहुति डालकर, अपने पापों को भस्म करके सुख शान्ति प्राप्त करें।

6. प्रश्न:- दादी जी, अव आपके मन में किस लक्ष्य को पाने की प्रेरणा रहती हैं?

मुझे य तीव्र प्रेरणा रहती है कि इस मधुबन पॉवर हाऊस में हम लाईट हाऊस बनकर रहें। ताकि बाबा के प्रकाश की किरणों से सर्व आत्माओं का अंधकार दूर हो सके और सभी अपने घर शान्तिधाम का रास्ता देख सके।

दूसरी बात - जैसे बाबा जब बच्चों से मिलते थे तो सब अनुभव करते थे कि बाबा हमसे मिला परंतु जैसे कि बाबा ने कुछ देखा ही नहीं, बाबा ने सब समाचार सुना, परंतु जैसे कि कुछ सुना ही नहीं। यही सम्पूर्ण उपराम रहने का मेरा पुरुषार्थ रहता है कि मैं देखते हुए भी न देखुँ... ।

7. ईश्वरीय परविार के लिए आपका प्रेरणादायक संदेश

बाबा के हम सभी महारथी बच्चे एक हैं। हम सब एक हैं। हम सदा एक हैं। हम एक ही श्रीमत से सारे विश्व को एक बनायेंगे। नई दुनिया में एक धर्म, एक राज्य होगा, यही हमारी एकता का प्रमाण है। हमारी एकता, पवित्रता और शान्ति की शक्ति ही सारे विश्व को बदलने वाली है।

इस प्रकार जिनका सम्पूर्ण जीवन सृष्टि के प्रथम पुरुष प्रजापिता ब्रह्मा व परमपिता परमात्मा के साथ उनकी छत्रछाया में बीता। जिन्हों ने अपने नयनों से भगवान को नव सृष्टि रचते देखा उन सर्व के स्नेह व आदर की पात्र दादी जी ने अति अव्यक्त रूप से अतीत की यादों का वर्णन किया और करते-करते दादीजी और हम बाबा के चरित्रों की यादों में खो गये।

शिवबाबा और ब्रह्माबाबा की अद्भूत कार्य विधि

-दादी प्रकाशमणी, मधुवन

इस कलियुगी सृष्टि में सभी मनुष्यों के संस्कार सतयुग के देवताओं के संस्कारों की तुलना में तो तमोप्रधान अथवा आसुरी बन चुके हैं। अब उन संस्कारों को पलटकर फिर से मनुष्य को देवता अथवा सतोगुणी बनाने का कार्य जो बापदादा ने किया और कर रहे हैं, वह बहुत ही अलौकिक, अद्भूत और उच्च हैं, जैसे एक श्रेष्ठ वैद्य रोगी की नब्ज को परखकर, उनकी अवस्था को जानकर उसके अनुसार ही उसे औषधि देता है, ठीक वैसा ही कार्य बापदादा ने किया और अब भी कर रहे हैं। इसके लिये उन्होंने जिन युक्तियों का प्रयोग किया, उन पर विचार करके मन में बहुत ही हर्ष होता है और ह्रदय बापदादा के स्नेह से भरपूर हो जाता है। उनमें से कुछेक युक्तियों का हम यहाँ वर्णन करते हैं।

1. हरेक में जो अच्छा गुण हो, उसके अनुसार उसे व्यस्त कर देना

इस कलियुगी सृष्टि में हरेक मनुष्य में अवगुण तो भरे ही पडे हैं परंतु इस ज्ञान-यज्ञ में आकर जो कोई भी ज्ञान लेकर आगे बढ़ना चाहता, बाबा उसके अवगुणों को न देख, उसके गुण का वर्णन कर उसमें उत्साह और खुशी भर देते। और उस गुण से उसे जन सेवा में लगाकर उसका भी कल्याण कर देते। अवगुणों को निकालकर दिव्यगुण भरना तो बाबा का कार्य है ही परंतु उस कार्य को शुरु करने से पहले तो मनुष्य को किसी आधार पर खडा करने की आवश्यकता होती है, उसे हैंडलिंग देने के लिये किसी हैण्डल की जरूरत है। तो बाबा हरेक के किसी गुण को उसका हैण्डल बना देते। उदाहरण के तौर पर, - ''यदि कोई व्यक्ति पढ़ा-लिखा होता तो बाबा कहते - 'यह तो बहुत लोगों का कल्याण कर सकता है, लिट्रेचर लिखने और छपवाने में, समाचार पत्रों में ईश्वरीय संदेश प्रकाशित करने में, ईश्वरीय ज्ञान के भाषणों को तैयार कराने में जुटकर यह अपना भाग्य ऊँचा बना सकता है। बाबा की इस बच्चे में बहुत उम्मीद हैं। इस बच्चे का विश्व ड्रामा में अच्छा ही पार्ट है। यह समझदार बच्चा है। झट से इस सहज ज्ञान को बुद्धि में धारण करके दूसरों को भी सहमत कर सकता है।' ये सुनकर उस व्यक्ति का मन पुल्कित हो उठता और वह ईश्वरीय सेवा में जुट जाता। इस प्रकार जब उसकी बुद्धि ज्ञान, विज्ञान (योग) और सेवा में जुट जाती तो उसके पुराने संस्कारों को कर्म में आने का समय ही न मिलता और ज्ञान विरूद्ध एवं उल्टी बातों को सोचने का अवसर ही न रहता। इसके फल स्वरूप, उसके पुराने संस्कार मिटने लगते, खराब आदतें ढीली पडने लगती, जीवन में उत्साह और उल्लास भरने लगता और दिव्य वातावरण तथा ज्ञान के लेन-देन से उसका स्वभाव पलट ने लगता।''

कोई सिलाई का काम जानता तो बाबा कहते - 'यह तो ईश्वरीय यज्ञ के लिये बहुत ही सर्विसएबल (सेवाधारी) है। बाबा को ऐसे ही ज्ञानयुक्त और पवित्र बच्चों के हाथ से सिले हुए कपडे अच्छे लगते हैं। पवित्र यज्ञ-वत्सों को मलेच्छ के हाथ से सिले हुए कपडे पहनने की बजाय अब शिवबाबा की याद में रहकर इस योगयुक्त ब्राह्मणकुल भूषण के हाथ से सिले हुए कपडे मिलेंगे तो कितना अच्छा होगा।'

यह सुनकर उस व्यक्ति के रोमांच खडे हो जाते और वह सोचता कि - 'मैं भी किसी काम का व्यक्ति हूँ, मैं भी यज्ञ की किसी सेवा में काम आ सकता हूँ।' वह समझता कि - 'मेरी भी कुछ उपयोगिता है जिससे कि मैं दूसरी आत्माओं को सुख दे सकता हूँ। तब वह योग युक्त होकर इसी ईश्वरीय सेवा में जुट जाता।' कोई बुढ़ा और अनपढ़ होता तो वह सोचता कि - 'मैं तो अब किसी काम का नहीं रहा। घर से, बाहर वालों से, सब ओर से फालतू हूँ।' परंतु ऐसे मनुष्य जब बाबा के कमल-मुख से ये शब्द सुनते तो उत्साहित हो जाते - 'जो लोग वृद्ध हैं, वे बहुत ही सर्विस कर सकते हैं क्योंकि वे अनुभवी हैं। वे यदि ईश्वरीय ज्ञान की बातें दूसरों को अपने अनुभव सहित सुनायेंगे तो सुनने वालों को वह बात जच जायेगी। बच्चे, आप पढे हुए नहीं है तो क्या हुआ ? केवल 'अल्लिफ' (परमात्मा) और 'बै' (शिव परमात्मा से जो स्वर्गिक बादशाही मिलती है) ये दो ही तो बाते जाननी हैं और सभी को इतना ही तो बताना है कि परमपिता परमात्मा को याद करो और पवित्र बनो तो आपको दैवी राज्य भाग्य मिलेगा, इसमें क्या कठिनाई हैं ? देखो, शिवबाबा ने भी तो इस वृद्ध (ब्रह्मा) तन का आधार लिया है।' इस तरह की बातें सुनकर और बुढ़ापे में भी अपने लिये विद्या पढ़ने लगते और अन्य मनुष्यों को ईश्वरीय ज्ञान देने की सेवा में जुट जाते। ठीक इसी तरह बाबा बच्चों को, निर्धनों को, हर वर्ग तथा हर आयु के व्यक्तियों को आत्मिक दृष्टि से देखते हुए उन्हें लोक कल्याण के किसी-न-किसी कार्य में लगा देते। अत: जो जीवन पहले व्यर्थ जा रहा होता था, अब वह उसके अपने लिये तथा दूसरों के लिये बडे महत्व का जीवन बन जाता। जिसमें जो सर्विसएबल गुण होता, उसको उठाकर बाबा उसका यज्ञ सेवार्थ प्रयोग करते और इससे उस व्यक्ति को अपने संस्कारों को पलटाने के कार्य में भी ईश्वरीय बल मिलता।

2. सबको प्यार तथा सम्मान देकर आगे बढ़ाना

आजकल के जमाने में कोई किसी को नि:स्वार्थ प्यार नहीं देते, कोई सच्चे और शुद्ध प्यार से व्यवहार नहीं करता। बाबा सबको स्वाभाविक, सर्वश्रेष्ठ, सम्पूर्ण और सच्चा प्यार देते हैं। वे - 'मीठे-मीठे', 'सिकीलधे', 'नूरे रत्न', 'सर्विसएबल रुहानी बच्चे' - इस प्रकार के विशेषण मन के अर्न्ततम स्नेह से और मधुर मुस्कान के साथ प्रयोग करते। 'लाडले बच्चे' - ऐसा कहकर वे सदा पुकारते कि 'आत्मा बोल उठती कि ये किसी सांसारिक व्यक्ति का प्यार नहीं है।' उसे महसूस होता कि यह तो प्यार के सागर 'परमपिता' ही मानव जाति के पिता - ब्रह्मा के द्वारा इस अलौकिक स्नेह की वर्षा कर रहे हैं। इस प्रकार सच्चे प्यार से वह आत्मा अभूतपूर्व शीतलता और उच्च सौभाग्य का अनुभव करती। जब मनुष्य को प्यार मिल जाय तो वह क्या करने को तैयार नहीं होता ? प्यार पाकर तो मनुष्य अपनी जान भी न्योछावर करने को तैयार हो जाता है। इस प्रकार, आत्मा में ईश्वरीय स्नेह पैदा करके बाबा उससे काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि की 'बलि' ले लेते। बाबा कहते - 'देखो बच्चे, क्या इस बाप के लिये इन दु:खकारी चीजों को भी नहीं छोड सकते ? देखो, जन्म-जन्मांतर तो आप विकारों का धन्धा करते आये हो और मानव मत पर चलकर माया के मुरीद बने रहे हो, अब ये बाप इस

अन्तिम जन्म में आपको सुख-शान्ति की विरासत देने आया है, तब क्या इस रहे हुए थोडे-से समय के लिये भी इस बाप की खातिर ये विकार नहीं छोड सकते ?' आप जन्म-जन्मांतर भक्ति करते थे - 'हे पतित पावन पिता, आकर हमें विषय विकारों से छुडाओ। अब जब मैं आया हूँ तब तो आप पतित से पावन बनो।' देखो, 'लाडले बच्चे, अब मुझे इस सृष्टि को पवित्र बनाना है, तो क्या इस कार्य मे आप सिकीलधे बच्चे इस पिता को सहयोग नहीं देंगे ?' बाबा के ऐसे करुणा पूर्ण कल्याणकारी एवं मधुर वचनों को सुनकर और अपने सहयोग को भी महत्व पूर्ण मानकर हर कोई पवित्र बनने और बनाने के पुरुषार्थ में जुट जाता। बापदादा से उन्हें ऐसा तो प्यार और लालन-पालन मिलता कि वे सांसारिक 'विषैले सुखों' को भूलाकर ईश्वरीय परिवार के सम्बन्ध में टिक जाते।

3. सच्चे पिता का सम्बन्ध

बाबा सच्चे पिता-सा व्यवहार करते। वे हरेक से कहते - 'बच्चे, यह आपका असली घर है.... जो कुछ बाबा का है, सो आपके लिये हैं...। बच्चे, समाचार देते रहना....। बच्चे, खुशी-खैरियत का पत्र लिखते रहना। बच्चे, राय लेते रहना....।' वे सबको ऐसे स्नेह और माधुर्य से 'बच्चे, बच्चे' कहकर पुकारते कि - 'हरेक का बुद्धियोग अन्य सभी तरफ से टूटकर उस एक ओर जुट जाता। वे देह के सम्बन्ध से उपराम होकर, उस अलौकिक नाते का सुख लेते।' क्या आज के संसार में कोई किसी को कहता है कि - 'यह आप सभी का घर है और यह सब-कुछ आप का है ?' बाबा तो यज्ञ का समाचार भी बच्चों को सुनाने लग जाते, वे मन की बात भी सबको नि:संकोच कह डालते। हर कोई यह समझता कि - 'यह मेरा बाबा है, मुझ से इनका विशेष प्यार है।' तब उनके मन और मुख से भी - 'बाबा! मीठे बाबा!' - ये शब्द सहज ही निकल पडते। तब वे भला बाबा की बात, बाबा की आज्ञा केा कैसे टाल सकते ?

एक बार की बात है कि एक युगल (पति-पत्नी) बाबा से मिलने आये। उन्होंने पहले दो-चार बार ही यह ईश्वरीय ज्ञान सुना था। बाबा ने उन्हों से पूछा - 'बच्चे, कैसे चल रहे हो ? यह बच्ची तेज पुरुषार्थ कर रही है या यह बच्चा ?' बाबा की भव्य, तेजोमय, वयोवृद्ध एवं स्नेहमयी मूर्ति को देखकर और उनके मुख से 'बच्चे, बच्चे' - ऐसे प्यार भरे शब्द सुनकर उन दोनों (पति-पत्नी) के मुख से भी सहज ही 'बाबा' शब्द निकल पडा। 'बाबा' - ऐसे सम्बोधित करते हुए वे बोले - 'हमको यह ज्ञान बहुत अच्छा लगता है परंतु बाबा, पवित्र रहना बहुत मुश्किल है।' ऐसा कहते हुए वे उत्तर की अभिलाषा लिये बाबा की ओर देख रहे थे। तब बाबा के चेहरे की रेखायें बदली। करुणा, शिक्षा और वात्सल्य की मिली-जुली रेखायें उभर आयी और नेत्र खामोश वाणी में कुछ कहने लगे। एक क्षण नि:स्तब्धता रहीं होगी, जिसने कि उस दम्पति के मन की भूमि को तैयार कर दिया। तब बाबा बोले - 'बच्चे, जब आप मुझे 'बाबा'कहते हो तब क्या यह छोटी-सी बात भी मेरी नहीं मान सकते ? लौकिक नाते से भी बच्चे जिसे अपना बाप मानते हैं उसकी आज्ञा का पालन करते हैं, तब पावन बनाने वाले इस पिता का फरमान और वह भी अन्तिम जन्म में इस थोडी-सी वेला के लिये जबकि महाविनाश सामने हैं, नहीं मानोगे ?' बाबा ने श्रीलक्ष्मी-श्रीनारायण का फ्रेम किया हुए एक चित्र मँगाया और उन्हें देते हुए कहा - 'बाबा चाहते हैं कि यह बच्ची और बच्चा ऐसे (श्री लक्ष्मी और श्री नारायण के समान) बने। बच्चे बनोगे ना ?' वे दोनों बोल उठे - 'हाँ, बाबा , अवश्य बनेंगे। जबकि बाबा ने हममें ये उम्मीद रक्खी है तो हम इसे पूर्ण करके दिखायेंगे।' बाबा बोले - 'बच्चे, तब बाबा भी आपको आफरीन देंगे और शिवबाबा तो स्वर्ग का राज्य भाग्य देंगे ही क्योंकि जो काम महाशत्रु पर विजय प्राप्त करता है वह जगत-जीत बनता है।' बाबा के ये प्रेरणादायक शब्द सुनकर और उनकी ये आशायें भी देखकर उस दम्पति को ऐसा लगा कि वे शब्द, शब्द नहीं थे, शब्दबाण थे। नहीं, वह तो शुद्ध बिजली थी, एक अपार शक्ति थी जो उनके मन में सदा के लिये समा गयी। उनके नयन, ऐसे पावन बनाने वाले पिता के स्नेह में गीले हो उठे और वे बाबा को निहारते-निहारते जाते समय ऐसे दिखाई दे रहे थे जेसे पान का बीडा उठाने के बाद कोई सपूत अथवा राजपूत दृढ़ मनसा से, विजय के मंसूबे बाँधकर, रणभेरी की आवाज के पीछे-पीछे लडाई के मैदान की ओर जाता है। ऐसा काम करते थे - 'बच्चे, बच्चे' - ये शब्द कि जो काम ऋषियों, मुनियों और शास्त्रों ने भी असम्भव बताया है।

4. हाथ उठाना और निश्चय पत्र लिखवाना

ज्ञान के सूक्ष्म तत्त्वों का क्लास में दिग्दर्शन कराते-कराते बाबा कहते - 'जो बच्चे समझते हैं कि वे १६ कला सम्पूर्ण, सूर्यवंशी देवी-देवता बनेंगे वे हाथ खडा करें।' क्लास में उपस्थित सभी बहन-भाई हाथ खडा कर देते। कुछ लोग हाथ पूरी तरह खडा न करते, मानो आधा खडा किया हो। बाबा कहते - 'किसी-किसी ने अच्छी तरह से हाथ खडा नहीं किया है।' बाबा कहते - 'मिलिटरी ऐसी होनी चाहिये ? हाथ तो पूरा खडा करना चाहिये न। शायद इन लोगों के मन में कुछ संदेह है वरना ये हाथ बडे फलक से खडा करते। देखो, कई बच्चे हाथ खडा करने में भी कितनी देर लगाते हैं। धीरे-धीरे, शर्म के मारे हाथ खडा करते हैं क्योंकि वे बच्चे संकल्पों-विकल्पों में पडे हुए अपनी मंजिल की ओर धीरे-धीरे चल रहे हैं। यदि वे झट-पट चल रहे होते तो झट से हाथ खडा करते। देखो यह बाबा भी तो आप बच्चों की तरह एक विद्यार्थी है न ? देखो तो बाबा कैसे हाथ खडा करते हैं।' तब बाबा बडी खुशी और फलक से ऊँचा-ऊँचा

अपना हाथ खडा कर देते कि क्लास में उपस्थित सभी लोग हँस पडते और जिन्होंने अपना हाथ ढीली रीति से अथवा नीचे-नीचे खडा किया होता वे भी तनकर ऊँचा कर देते। अब थके हुए चेहरों पर भी, माया से मुरझाये हुए मुखडों पर भी हिम्मत और खुशी की झलक दिखाई देती जैसे कि सैनिकों को अपने कमाण्डर की प्रसन्न सूरत देखकर खुशी होती है। तब बाबा कहते - 'हाँ, बच्चे, मन में पूर्ण निश्चय होना चाहिये कि हम १६ कला सम्पूर्ण बनेंगे।' बाबा अब दूसरा प्रश्न करते। वे कहते - 'अच्छा, जो बच्चे समझते हैं कि वे १४ कला सम्पूर्ण चन्द्रवंशी घराने में जायेंगे, अब वे हाथ खडा करें?' तो कोई भी हाथ खडा न करता। बाबा कहते - 'क्या सभी १६ कला सम्पूर्ण बनेंगे?' यह कहकर बाबा हँस पडते और कहते - 'खबरदार, अगर ऐसी ही बात मन में ठान रक्खी है तो माया भी खूब युद्ध करेगी। बच्चे, घबराना नहीं है। सर्वशक्तिमान् शिवबाबा आपके साथ हैं। लक्ष्य तो सदा ऊँचा ही होना चाहिए न? १४ कला पूर्ण बनना - यह तो असफलता की निशानी है। शिवबाबा - जैसे परम शिक्षक और परम सद्गुरु के शिक्षार्थी (स्टूडन्टस) बनकर तो उससे पूर्ण लाभ उठाना चाहिए न?'

फिर बाबा कहते - 'अच्छा, अगर आपको यह पूर्ण निश्चय है कि आपको शिवबाबा मिले हैं और आप ब्रह्मचर्य व्रत का पूर्ण रूप से पालन करते हुए माया जीत बनकर दिखायेंगे तो 'निश्चय पत्र' लिख कर दो। बच्चे, यह माया बडी दूस्तर है। मनुष्य को अभी-अभी निश्चय होता है परंतु क्षण भर के बाद माया उसको संशयात्मा बना देती है और मनुष्य का सारा ज्ञान 'सोडा-वॉटर' हो जाता है।' आज हम देखते हैं कि - 'कोई बच्चा बहुत तेज पुरुषार्थ कर रहा है परंतु कल देखते हैं कि वह माया का मुरीद बन गया है। इसलिये बहुत सावधानी की आवश्यकता है।' 'निश्चय पत्र' लिख दोगे तो आपको याद रहेगा कि - 'जब हम ज्ञान युक्त अवस्था में थे तो हम मानते थे कि पवित्रता मनुष्य के लिये अच्छी है और कि अब हमें शिवबाबा मिले हैं। तो जब कभी आपको माया परेशान करेगी, तब यह निश्चय पत्र आपको थामे रखेगा।'

इस प्रकार की छोटी विधियों से बाबा बच्चों के कल्याण के लिये कुछ-न-कुछ करते रहते। उन्हें इस तरह उल्लास में लाते रहते कि - 'बच्चों के पुरुषार्थ में फिर से तीव्रता आ जाती और उच्च लक्ष्य सदा उनके सामने बना रहता।'

5. दौड और होड

बहुत बार बाबा कहते - 'ये पवित्रता का जो पुरुषार्थ है, यह एक दौड प्रतियोगिता (रेस कॉम्पीटेशन) है। इसमें सभी बच्चे नम्बरवार है, कई इस दौड में आगे हैं, कई बीच में है, जो तेज भागेगा वही विन करेगा, वही बाजी ले जायेगा। कुछ बच्चे बहुत समय से इस दौड में भाग ले रहे हैं और कुछ ऐसे हैं जो बहुत बाद में आये हैं परंतु फिर भी वे पहले वालों से आगे निकल गये हैं। इसलिये कोई यह न सोचे कि मुझ से बहुत-से लोग पहले से ही ज्ञान ले रहे हैं, इसलिये मैं उनसे पीछे ही रहूँगा बल्कि हरेक को यह कोशिश करनी चाहिये कि मैं तेज भागकर आगे निकल जाऊँ। पवित्रता की दौड में होड लगाना - यह अच्छी बात है क्योंकि यह शुद्ध पुरुषार्थ हैं।'

बाबा कहते - 'कोई निर्धन है तो क्या हुआ, बाबा को तो ज्ञानी आत्मा प्रिय है जो कि दूसरों को भी ज्ञान सुनाकर उच्च बनाता है, याद रूपी यात्रा पर रहता है और दैवी गुणों को धारण करके अच्छी अवस्था बनाये रखता है इसलिये किसी बच्चे के संस्कार अज्ञान काल में चाहे कैसे भी रहे हों परंतु अब वह हिम्मत रखकर इस दौड में आगे होने का पुरुषार्थ करो।' बाबा कहते कि - 'रूक नहीं जाना चहिये। अगर कुछ समय व्यर्थ निकल गया है, तब भी कोई बात नहीं। अब उसके बारे में अधिक सोचकर समय व्यर्थ गँवाना ठीक नहीं। अब भी अवसर है, गैलप कर सकते हो।' इस प्रकार, बाबा इस ज्ञान यज्ञ में पीछे आने वालों को भी आगे बढ़ाते रहते और आगे वालों को भी कहते कि - 'बच्चे, सावधानी से रहना। इस पवित्रता के पथ पर कहीं गिर गये तो पीछे आने वाले भी आप से आगे निकल जायेंगे।'

6. समय की पहचान

बाबा ज्ञान के गहन और रमणीक पॉइन्टस् तो बताते ही रहते और नित्य नई शिक्षाओं से सजाते भी रहते परंतु साथ-साथ समय की भी पहचान देते रहते। कभी वे कहते - 'बच्चे, जब कोई इमरजन्सी अर्थात् संकटकालीन परिस्थिति होती है तो वहाँ की सरकार आज्ञा (ऑर्डिनन्स) घोषित करती है जिसके अन्तर्गत देशवासीयों को कुछ कार्य अनिवार्य रूप से करने पडते हैं अथवा कई बातों को अनिवार्य रूप से छोडना होता है।' इसका उदाहरण देते हुए बाबा कहते कि - 'बच्चे, अब तो इमरजन्सी, अर्थात् धर्म संकट है। सारे विश्व में एक बहुत बडा 'चारित्रिक' संकट है। यह घोर कलियुग है। काम, क्रोधादि शत्रुओं ने मानव जाति को घेराव में डाल रक्खा हैं, इसलिये अब सबके लिये यह ईश्वरीय आदेश (ऑर्डिनन्स) है कि 'अब पवित्र और योगी बनो' क्योंकि अब सतयुगी पावन सृष्टि की पुन:स्थापना होनी ही है।' बाबा कहते - 'क्या आप जानते नहीं है कि जो व्यक्ति शत्रुओं से मिल जाता है वह देश-द्रोही कहलाता है?

क्या आपको मालूम नहीं है कि देश-द्रोही को बहुत कडा दण्ड मिलता है ? तो बच्चे, अब इस 'परम आज्ञा' का उल्लंघन बिल्कुल न करना।'

एक बार की बात है कि एक व्यक्ति कुछ दिनों से यह ईश्वरीय ज्ञान सुन रहा था। परंतु पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य व्रत की पालना का नियम उसे बहुत कठिन लगता था और अनावश्यक भी। एक दिन जब उसने बाबा के ये महावाक्य सुने कि - 'अब 'इमरजन्सी' है, इसलिये अब पवित्र बनना है तो उसकी अन्तरात्मा जाग उठी। उसने आलस्य और हीनता के भाव की ओढनी को उतार फैंका और वह देश प्रेम और आत्म उन्नति को सामने रखकर स्वेच्छा से पवित्रता के व्रत अर्थात् ब्रह्मचर्य के नियम को स्वीकार कर पुरुषार्थ में तत्पर हुआ।'

बाबा प्राय: ये भी कहा करते - 'बच्चे, क्या मालूम किस समय जीवन की अन्तिम घडी आ पहुँचे। उससे पहले यदि पवित्रता का व्रत धारण कर लोगे तो पवित्र सृष्टि में जाने के अधिकारी हो जाओगे। देखो, इन विकारों को जीने में समय लगता है, यदि अभी से पवित्रता का व्रत लोगे तो स्वाभाविक पवित्रता आ पायेगी। अब विनाश में समय ही बाकी कितना रहा है ? मुश्किल से अभी दो-ढाई वर्ष होंगे, क्या आप इतना समय भी पवित्र नहीं रह सकते ? अब तो सतयुग आया कि आया। बाबा को तो सतयुगी पावन सृष्टि के झाड साफ दिखाई दे रहे हैं ।' इस प्रकार जब कोई व्यक्ति सुनता कि केवल दो ही वर्ष के लिये ब्रह्मचर्य का पालन करना है तो वह इसको कठिन बात न मानकर इस व्रत को स्वीकार कर लेता। इसी अवधि में, इस व्रत के पालन से उसे अवर्णनीय लाभ होता और काम वासना से उसकी स्वाभाविक घृणा हो जाती, तब तो वह इस व्रत को अपनाये ही रहता।

इन-इन युक्तियों से बाबा पवित्रता के मार्ग पर सबको अग्रसर करते। वे कहते कि - 'यदि मैं शुरु में सबको कह देता कि सृष्टि के महाविनाश में अभी ४० वर्ष पडे हैं तो कोई विरला ही घर-गृहस्थ में रहते हुए इसका पालन करने को तैयार होता।' बहुत से व्यक्ति तो यह सोचते कि - 'अच्छा, ४० वर्ष तो पडे ही है , पाँच-दस वर्ष विषय-वासनाओं की हवा खाकर फिर हम इस व्रत को लेंगे।' परंतु अब इस युक्ति को अपनाने से बहुत जनों का कल्याण हो गया है और अब तो बहुत समय बीत गया है और विनाश होने में बहुत कम ही समय रहा है। बाबा कहते - '५००० वर्ष के इस सृष्टि चक्र में ४० वर्ष की अवधि तो है भी वैसे ही जैसे मनुष्य के जीवन काल में २ वर्ष का समय होता है।' इस प्रकार बाबा ने वह कार्य किया जिसे संन्यासी भी असम्भव मानते रहे हैं।

7. विकारों के लिये कडे शव्दों का प्रयोग

बाबा विकारों के लिये ऐसे कडे शब्दों का प्रयोग करते कि सुनने वालों के मन में, विकारों से, स्वाभाविक रूप से मन हट जाता। उदाहरण के तौर पर बाबा कहते - 'क्रोध एक भूत है। जैसे भूत किसी के सिर पर सवार होता है - उससे उल्टा काम करा देता है और उसे भी परेशान करता है तथा वस्तुओं की भी तोड-फोड करता है, वैसे ही क्रोध को एक भूत समझकर उससे बचकर रहना चाहिये। क्रोध वाले मनुष्य के पास तो खड़ा भी नहीं होना चाहिये क्योंकि यह भूत बहुत उपद्रवी है। देखो, तो जिसमें क्रोध रूपी भूत प्रवेश करता है, उसका चेहरा, उसका नेत्र, उसकी बातचीत कैसे बदल जाती है। बच्चे अब ज्ञान की धूप-दीप जलाकर इस भूत को भगाना है।'

जिसमें बहुत मोह हो, उसके लिये बाबा कहते कि - 'मानो कि वह बन्दरिया है। जैसे बन्दरिया अपने बच्चों को छाती से लगाकर कूदती-भागती रहती है, वैसे ही जिनमें मोह है - वे भी व्यक्तियों और वस्तुओं से चिपके से रहते हैं। उस व्यक्ति या वस्तु छूटने की बात सुनकर उनकी अवस्था ऐसी हो जाती है जैसे कि उनका प्राण निकलने वाला हो।' अत: बाबा कहते कि - 'अब तो बन्दर से मन्दिर योग्य बनना हैं। इसलिये 'नष्टोमोहा' हो जाओ - यही भगवान की आज्ञा हैं।' अब सब 'मोह' छोड दो क्योंकि 'मोह ही दु:ख और यम की फाँसी को देने वाला है, अब एक प्रभु से ही मन का मोह अर्थात् प्यार जुटा दो।'

बाबा कहते कि - ''जो स्त्री 'काम वासना' रूपी 'विष' को लिये रहती है , वह 'पूतना' अथवा 'शूर्पनखा' है। जो पुरुष काम वासना के वशीभूत है वह 'रावण' अथवा 'दु:शासन' है।'' अब आप ही सोचिये कि ऐसे कडे अक्षर सुनकर कौन-रावण, दु:शासन अथवा पूतना बनना चाहेगा ?

बाबा कहते - 'अहंकार करने वाला मनुष्य एक दिन ऐसा तो गिर पडता है कि उसकी हड्डी, उसका घुटना ऐसे टूट जाता है कि फिर उसके लिये खड़ा होना मुश्किल हो जाता है।' अत: बाबा कहते - 'बच्चे, निरहंकारी बनो वरना मंजिल पर नहीं पहुँच सकोगे।'

कई बार तो बाबा ऐसा भी कहते कि - 'वासना भोग ऐसे हैं जैसे कि एक-दूसरे पर प्रहार या कुठारा-घात करना।' ऐसे शब्द सुनने वाले के मन में यदि पूर्व संस्कारों के वश वासना का संकल्प उठता भी तो वह उसे अत्यंत घृणित काम मानकर तुरंत ही उस अशुद्ध संकल्प से मुक्त हो जाता। जब बाबा साफ ही कर रहे हैं कि - 'वासना भोग एक-दूसरे को नर्क में धकेलने के तुल्य, सर्प या सर्पिणी के डसने के तुल्य है तथा सिर पर 'कूडा' (किचडा) उठाने से भी निकृष्ट कार्य है।' तो बताईये कि कौन ऐसा कार्य करने को तैयार होगा ?

इसी प्रकार 'चुगली' करने वाले तथा दूसरों को भडकाने का काम करने वाले व्यक्ति को बाबा 'मंथरा' (जिसका रामायण में वर्णन है) 'दूती' या 'दूता' नाम देते और निंदा करने वाले को 'कौवे' की उपाधि प्रदान करते। सोचिये कि 'कौन इन उपाधियों को लेने के लिये तैयार हो सकता है?' सभी लोग इन बुराईयों को छोडने ही का यत्न करते।

इसके विपरित, जो युवावस्था में 'सपत्नी' (युगल) जीवन व्यतीत करते हुए ब्रह्मचर्य का पालन करता, बाबा कहते कि - 'यह महावीर है। इसके आगे एक दिन संन्यासी भी सिर झुकायेंगे।' जो कन्यायें-मातायें क्रोध को छोड देती, बाबा कहते कि - 'यह शीतला है।' जो मीठा बोलने वाला तथा ज्ञान का आलाप करने वाला होता उसे बाबा कहते - 'यह गॉडली नाईट इन्गेल (दैवी बुलबुल) है।'

इसी प्रकार किसी को बाबा नष्टोमोहा किसी को निरहंकारी इन सम्बोधनों से याद करते हुए बुराई को छोडने तथा अच्छाई को अपनाने के पुरुषार्थ में लगाये रखते।

8. ज्ञान के कायदे समझाना और धर्मराजपुरी की सजायें बताना

बाबा उच्च दैवी मर्यादा में रहने और आसुरी मर्यादा को छोडने की भी शिक्षा देते रहते। ज्ञानयुक्त जीवन के नियम बताते हुए वे कहते - 'बच्चे, कायदें में ही फायदा है। कायदे को छोडने से कार्य बिगड जाता है। कायदे पर ही ये सृष्टि कायम है। इसलिये ईश्वरीय नियमों को भी न छोडना, न तोडना।'

बाबा कहते कि - 'कानून को कभी अपने हाथ में मत लेना। यदि किसी से आपका स्वभाव नहीं मिलता अथवा संस्कार टकराते हैं अथवा किसी के बारे में आपको कोई शिकायत है तो उसके विरूद्ध आप ही कोई कार्यवाही करने न लग जाओ। उस पर हाथ उठाना अथवा अन्य किसी प्रकार से उसे दण्ड देने का यत्न करना गोया कानून को अपने हाथ लेना है। कानून को अपने हाथ में लेने वाला भी अपराधी ही माना जाता है। लौकिक सरकार का भी यह नियम है कि यदि किसी अन्य से शिकायत है तो वह न्यायालय में दावा कर सकता है। जज ही उसकी सुनवाई करके अपराधी को उचित दण्ड दे सकता है। जिसको शिकायत है, यदि वह अपराधी को मारता-पिटता है तो न्याय की दृष्टि से वह स्वयं भी अपराधी ही ठहरता है।' बाबा कहते - 'आप सब तो स्वयं ही किसी-न-किसी विकार के वशीभूत, अवगुण से भरपूर अर्थात् अपराधी हैं। अत: अपनी शिकायत पर आप खुद ही जज बनकर या जेलर बनकर कुछ भी करने के अधिकारी नहीं है। यदि किसी का कोई अवगुण अथवा दोष आपको दु:ख देता है तो आप इधर-उधर किसी को न बताकर, वातावरण को दुषित न करके एक बाबा ही द्वारा शिवबाबा को बताओ तो शिवबाबा उसे स्वयं ही सावधानी दे देंगे।'

इसी प्रकार, एक दूसरा कायदा बताते हुए बाबा कहते - 'बच्चे, आप अपने निजी प्रयोग के लिये किसी से कोई चीज मत लेना। यदि कोई व्यक्ति कुछ भी चीज देना चाहता है तो उसे कहो कि वह निजी प्रयोग के लिये देने का संकल्प न करके, शिवबाबा को सामने रखकर इस ईश्वरीय यज्ञ में दे दे। फिर यज्ञ में व्यवस्था करने के लिये जो निमित्त हैं, वे जिसके लिये जो चीज आवश्यक समझेंगे उसे वह चीज दे देंगे।' बाबा कहते कि - 'यदि आप किसी से निजी प्रयोग के लिये कोई चीज लेंगे तो प्रयोग करते समय उस देहधारी की याद आयेगी, गोया कल्याणकारी शिवबाबा की याद भूल जायेगी। इससे देहधारीयों के साथ आपका सम्बन्ध जुटेगा, उनसे आप की लगन लगेगी और ईश्वरीय स्मृति की कमाई में आपको घाटा पड जायेगा। फिर विशेष बात यह है कि बेचारे देने वाले का भी भाग्य ऊँचा नहीं बनेगा क्योंकि उसने भी आप मानव तनधारी के प्रयोगार्थ वह वस्तु दी। यदि वह शिव परमात्मा को सामने रखकर, ईश्वरार्थ सेवा में वह वस्तु देता तो उसके सम्बन्ध ईश्वर से जुटता और वह वस्तु पवित्र हो जाती तथा ईश्वर से भविष्य में उसे कई गुना धन-धान्य प्राप्त होता। परंतु व्यक्तिगत प्रयोग के लिए देना तो गोया मनुष्यों से कर्म खाता जोडना है। लेने वाला भी यदि इस ईश्वरीय यज्ञ से लेगा तो उसे किसी मानव तनधारी की याद न आकर यह शुद्ध नशा रहेगा कि - मुझे यह ईश्वर से मिली है। उसका नाता और प्यार भी ईश्वर से जुटेगा और जिस व्यक्ति से उसको वस्तु मिली, उस मानव तनधारी का वह आभारी अथवा ऋणी भी नहीं होगा।' बाबा कहते - 'आप ईश्वरीय कुल की सन्तान है। ईश्वर तो दाता है, तब दाता के बच्चे होकर आप किसी से ले कैसे सकते हैं? जिसको कुछ देना है, वह अपना भाग्य ऊँचा बनाने के लिये ईश्वर के पास जमा करा दें और आप भी उसी पिता से लो, न कि किसी मनुष्य से।' इस प्रकार, बाबा ज्ञान के अनेकानेक सूक्ष्म कायदे बताते जो कि अवस्था को बहुत उच्च करने वाले और कर्म बन्धन से मुक्त करने वाले होते।

एक कायदा बाबा यह भी बताया करते कि - 'जिस स्थान पर अथवा जिस कार्यार्थ किसी को नियुक्त किया गया हो, उस समय हरेक को चाहिए कि उसे सम्मान दे और सहयोग दे, चाहे उस डयुटी पर नियुक्त किया हुआ व्यक्ति छोटी आयु का हो और कम अनुभवी हो।' बाबा कहते कि - 'नियुक्त किये हुए को पूरा सहयोग देना ही दैवी मर्यादा हैं, उसकी त्रुटियाँ देखकर अथवा असमर्थता पर ध्यान देकर उसका विरोध करना, उससे रुठ जाना अथवा स्वयं को उस कार्य से अलग हटा लेना - ये आसुरी मर्यादा है।' बाबा कहते कि - 'यदि किसी में कोई त्रुटि है अथवा कमी है तो उस कमी को भरना आपका काम है। यदि किसी में किसी प्रकार की

असमर्थता है तो आपकी अपनी भी समर्थता उस कार्य में लगा देना आपके लिये उचित है। उसकी कमियों का वर्णन करते रहना महानता नहीं है बल्कि उन्हें भरने में महानता हैं।'

बाबा बताते कि - 'यदि किसी की कोई कमी अथवा असमर्थता आपको खटकती है तो बाद में आप बड़ों के ध्यान में वह दे सकते हैं। परंतु जिस समय कार्य हो रहा हैं तब उसमें रुकावट डालना अथवा सहयोग न देना - यह गोया अपनी कमी दिखाकर दोषी बनना अथवा वातावरण को बिगाडना है।' यदि कोई आप से आयु में छोटा भी हो तो भी जब वह अपनी ड्युटी पर है तब आपको उसकी बात माननी पडेगी। मान लो, कोई ट्रैफिक पुलिस का आदमी अपनी ड्युटी पर खड़ा है और वह एक ओर हाथ दिखाकर ट्रैफिक रोके हुए है - उसी ओर से तब यदि कोई उसका बडा अफसर भी आ जाय, तो उस समय उसे भी हाथ का इशारा देखकर रुकना ही पडेगा न ? इसी प्रकार, 'इस ईश्वरीय कार्य में भी जिस कार्य पर जो नियुक्त है, उस समय उसे सम्मान और स्नेह देना सबका धर्म है।' इस प्रकार बाबा ऐस-ऐसे दैवी कायदे बताते जिससे अवस्था ऊँची उठे, सबका भाग्य भी ऊँचा बने और सब कार्य सुगमता से भी होता चले।

कायदों के साथ-साथ बाबा कर्म-विधान का भी पूरा स्पष्टीकरण देते। उदाहरण के तौर पर वे कहते - 'सतयुगी स्वर्गिक सृष्टिमें भी नौकर-चाकर, दास-दासीयाँ, चण्डाल आदि-आदि होते तो हैं ही। जो व्यक्ति वर्तमान पुरुषोत्तम संगमयुग में माया के वशीभूत होकर कुछ-कुछ भूलें कर बैठते हैं, पवित्रता के नियम को छोडकर फिर आसुरी स्वभाव के बन जाते हैं, पहले निश्चय करके फिर संशयात्मा हो जाते हैं, अथवा इस ईश्वरीय यज्ञ के कायदे-कानूनों को तोडते हैं - वे लोग इन छोटे पदों को प्राप्त होते हैं।' किस-किस भूल से हमारी ईश्वरीय कमाई में कितना घाटा होता है और उसके परिणाम स्वरूप हमें कौन-सा छोटा पद मिलता हैं, आदि-आदि। बाबा, इन सभी नियमों को स्पष्ट करते। स्वर्ग के दैवी स्वराज्य के पद को कौन प्राप्त करता है ?, किस उच्च पुरुषार्थ को करने से चक्रवर्ती राजा-रानी के निकट सम्बन्ध में कौन जन्म लेता है ?, अन्यंत धनवान प्रजा के घर में किसका जन्म होता है ?, १०८ की माला का मणका बनने या अष्ट देवताओं में आने के लिये क्या पुरुषार्थ करना जरूरी हैं ? - इन सभी बातों का बाबा स्पष्टीकरण देते रहते कि जिससे पुरुषार्थ करने की प्रेरणा नित्य निरंतर मिलती रहती।

साथ-साथ बाबा ये भी कहते कि - 'अब तो आपको शिवबाबा पिता-शिक्षक और सद्गुरु के रूप से शिक्षा और सावधानी दे रहे हैं। अत: अब तो कदम-कदम पर राय ले सकते हो। अब यदि कोई भूल, कोई अकर्तव्य अथवा विकर्म हो जाये तो उसे बता देने से उसका दण्ड आधा हो जायेगा। परंतु यदि उसे छिपाते रहोगे तो शिक्षा और सावधानी भी नहीं मिल सकेगी और वह भूल बढती ही जायेगी और भविष्य में शिवबाबा फिर धर्मराज के रूप में उसका सौ गुणा दण्ड देंगे। देखो, धर्मराज बाप के बच्चे बनकर अब अधर्म का काम नहीं करना। धर्मभ्रष्ट होने वाला सतयुगी सृष्टि में ऊँच पद नहीं पा सकेगा और पद भ्रष्ट होने के साथ-साथ दण्ड का भी भागी बनेगा। आप तो कमाई करने के लिये आये हैं, कमाई के बदले सिर पर और ही बोझ चढाना - यह समझदारों का काम नहीं।' इस प्रकार बाबा बहुत ही उपयोगी कायदे और नियम बताकर तथा प्रैक्टिकल रीति उन पर चलाकर कल्याण करने के निमित्त बनते।

9. स्वयं मेहनत करके दिखाना

बाबा ईश्वरीय सेवार्थ अथवा लोग कल्याणार्थ तन-मन-धन समर्पण करने के बाद वृद्ध शरीर होते हुए भी निरंतर सेवा में लगे रहते। सेवा-सेवा-सेवा, बस, सेवा ही के लिए और मनुष्यात्माओं को सुख देने के लिए उनका विचार चलता रहता। दिन-भर में १८ घण्टे से भी अधिक वह कार्य करते। रातो-रात बहुत बार जागते और इसी संकल्प में अपने खान-पान, रहन-सहन और आराम की सुविधा का भी ख्याल न रखते। इतनी वृद्ध अवस्था में भी विभिन्न प्रकार की यज्ञ सेवा में शारीरिक रीति से भी जुट जाया करते। उनके इस परिश्रम और सेवा को देख स्वाभाविक है कि 'सुस्त से सुस्त व्यक्ति भी अपने आलस्य को परे फैंक यज्ञ सेवा में जुट जाते। अरे ! वह देखो, बाबा अमुक स्थूल कार्य में जुटै हुए हैं.....।' - जैसे ही कोई बाबा को किसी सख्त काम में जुटा हुआ देख लेता वह जाकर सबको बोल देता और सभी लोग झट से वहाँ पहुँच जाते। वे कहते - 'बाबा ! यह तो हमारा कार्य है। आपने हमें क्यों नहीं कहा ? बाबा ! अब तो इसे छोड दीजिये। हमारे होते हुए इसे आप करें, यह हमसे बर्दाश्त नहीं होता.....।' बाबा कहते - 'नहीं बच्चे, यह यज्ञ की सर्विस बडी मधुर और प्यारी लगती है। क्या करुँ, यह मन को बहुत भाती है। बच्चे, सारे कल्प में एक ही बार तो शिवबाबा यह सवौत्तम ज्ञान-यज्ञ रचते हैं और उसके लिये वे इस वृद्ध तन में ही आते हैं। तो क्या इस वृद्ध तन को देखकर में कल्प-कल्पांतर स्थूल सेवा ही न करूँ ? मैं भी तो शिवबाबा का स्टूडेण्ट हूँ। यदि मैं शरीर से कोई कार्य नहीं करुँगा तो मुझे कैसे निरोगी और कंचन काया मिलेगी ? बच्चे, सर्विस करने की तो हिर्स (लालसा) होनी चाहिये। दधीचि ऋषि के समान इस यज्ञ में अपनी हड्डीयाँ भी दे देनी चाहिएँ। तभी तो यह शरीर पावन बनेगा। इस यज्ञ की जितनी सेवा कोई करेगा, उतना उसको शिवबाबा से बल मिलेगा और उसकी आयु भी लम्बी होगी क्योंकि शिवबाबा अपने सर्विसएबल बच्चों की सम्भाल तो करते ही हैं न ? बच्चे, जैसे शिवबाबा से प्यार होना चाहिये वैसे

ही उसके इस यज्ञ की सेवा से भी, यहाँ के एक-एक कण से भी प्यार होना चाहिये। और उसकी सम्भाल करनी चाहिये। अहा! हम ब्राह्मणों का यह सेवा का जीवन कैसा सुहावना है। ऐसा अवसर तो सारे कल्प में फिर कभी मिलता नहीं।' जबकि शिवबाबा ही कहते हैं कि - 'मैं आप बच्चों का फरमानबरदार सेवक हूँ तो मैं भी आप बच्चों का सेवाधारी हूँ...।' - इस प्रकार के वचन जब बाबा बोलते और स्वयं भी सेवा में जुटे रहते तो सोचिये कि किसके मन में कार्यरत होने के लिय प्रेरणा नहीं मिलती होगी ? रात्रि की क्लास में भी प्राय: बाबा पूछा करते - 'लाडले बच्चो, बताओ और कोई सेवा है बाबा के लिये ? ये बाप भले ही ऊँचा बनने वाला है परंतु फिर भी बच्चों का गुलाम है।' अहो! जब ऐसे शब्द बाबा बोल देते तो बताईये कि मनुष्य के मन को कैसा लगता होगा ? सारी सृष्टि का बाप यदि सेवार्थ स्वयं को गुलाम माने तो इन मनुष्यों की क्या हैसियत ? बाबा के ऐसे शब्द सुनकर मनुष्य के मन में लोक-कल्याणार्थ सेवा के लिये एक अदम्य जोश उठता और मन कहता कि अगर बाबा आज्ञा दें तो अभी पहाड भी हिला दिया जाय।

बाबा यहाँ तक भी कह दिया करते - 'जो शिवबाबा की सेवा के कार्य में 'ना' करता है, वह नास्तिक है।' देखिये तो, नास्तिक शब्द की ये नई परिभाषा। यह कैसा स्पष्ट कर रही है कि - 'बाबा ईश्वरीय सेवा को कितना महत्व देते।' बाबा ने हम बच्चों को यह नारा दिया कि - 'ईश्वरीय सेवा करना ही सौभाग्य बनाना है।' इस प्रकार बाबा मन, वचन एवं कर्म से सेवा में लगा हुआ देखकर, सब किसी का सेवा में जुट जाना स्वाभाविक था।

10. खुशी में लाना और हल्का करना

बाबा सदा खुशी में रहते और सदा ऐसी ही बातें सुनाते कि कोई मनुष्य कितना भी अशान्त क्यों न हो, चाहे कितनी ही उलझनों में पडा हुआ हो, बाबा की मधुर मुस्कान को देखते ही उसकी उदासी और चिन्ता भाग जाती, खुशी का पारा चढ जाता। किसी ने भी आज तक बाबा के चेहरे पर चिन्ता या उदासी की रेखा नहीं देखी। अत: बाबा के आसपास वातावरण में सदा खुशी की लहरें अथवा खुशी की खुश्बू फैली रहती। उस पवित्र खुशी के वातावरण में माया की बातें तथा सांसारिक उलझने भूल जाना मनुष्य के लिये स्वाभाविक ही है। वह वातावरण ही ऐसा हुआ करता है कि 'शायद ही किसी के मन में अशुद्ध संकल्प उठते होंगे।' बाबा कहते - 'बच्चे, आप ही पवित्र रहने वाले सच्चे ब्राह्मणकुल भूषण हो, राज-ऋषि हो, राजयोगी हो और ईश्वरीय कुल के हो.....।' इस प्रकार बाबा बच्चों को सदा खुशी और उल्लास में लाते रहते और कहते - 'बच्चे, माया के विघ्न बहुत आयेंगे, तुफान बहुत आयेंगे परंतु घबराना मत और हिम्मत नहीं हारना। अब जबकि आपने शिवबाबा को हाथ दिया है तो आपका अकल्याण नहीं हो सकता। अब आपकी 'चढती कला' है इसलिये सदा यह सोचते हुए चलते चलो कि सर्व समर्थ शिवबाबा हमारे साथ है। ऐसा निश्चय रखोगे तो निश्चयात्मा की विजय होती है। आप 'विजयी-रत्न' हो। विजय का तिलक तो आपके माथे पर मानो लगा ही हुआ है। बस, आप इतना करना कि घबराना नहीं, थकना नहीं और रुकना नहीं बल्कि जो राह अब शिवबाबा दिखा रहे हैं , उस पर चलते चलना।' इस प्रकार बाबा विघ्नों को ऊँची मंजिल के नजदीक पहुँचने का चिह्न बताकर सदा यही कहते कि - 'बच्चे, ये सब अन्तिम सलाम करने आये हैं। बस, इश्वर के सदके (प्रेम में) इनको पार करो तो आपके कदम-कदम में पदमा-पदम की कमाई होगी।' इन युक्तियों से बाबा नित्य-प्रति सबको खुशी का प्याला पिलाते हुए, उनमें नया दम, नया जोश भरते हुए उन्हें ऐसे तो ले चलते रहते कि मनुष्य को अपने सब संकल्प भूल जाते, समस्यायें हल्की मालूम होती और मनोविकार उनसे सहज ही छूट जाते।

बाबा की जितनी भी युक्तियों का वर्णन करें, वह थोडा है। ऐसे अन्य अनेकानेक विधि-विधानों से, प्यार-दुलार की बातों से, हर्ष-उल्लास की दिनचर्या से, स्नेह-सौहाद्र से, ज्ञान-विज्ञान की वर्षा से, उच्च आचार-विचार के दिग्दर्शन से बाबा कितनी ऊँची मंजिल पर, कितनी सहज रीति से सबको सफलता पूर्वक ले आते रहे - यह अद्भूत, अलौकिक, अनुभव पूर्ण और उल्लास प्रद कहानी है। जिसका यहाँ कुछ अंश ही हमने ऊपर की पंक्तियों में दिया हैं।

पिताश्री निद्राजीत थे

- दीदी मनमोहिनी, माऊण्ट आबू

ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की सह प्रशासिका ब्रह्माकुमारी मनमोहिनी जी ने इस विद्यालय के प्रारंभ से ही अपना जीवन पिताश्री जी के साथ व्यतीत किया। ब्रह्माकुमारी मनमोहिनी जी अपने अनुभव के आधार पर लिखती है :-

1. पिताश्री निद्राजीत

कहावत है कि सच्चा योगी वह है जो निद्राजीत हो। उनके व्यस्त जीवन में मैंनं सदा उनको निद्राजीत स्थिति में देखा। पिताश्री शत-शत विश्व कल्याण की सेवा में लगे रहते थे। वैसे तो हम सभी की प्रतिदिन की दिनचर्या ऐसी है जो दिन में २ से ४ विश्राम का समय है परंतु पिताश्री जी केवल एक घण्टा विश्राम के लिए जाया करते थे। उसमें से भी बहुत कम समय आराम करते थे। उदाहरण के तौर पर जब भाई-बहनें यहाँ मुख्यालय से प्रस्थान करते समय पिताश्री जी से छुट्टी लेकर आते थे तो मैं हमेशा पिताश्री जी को यही कहती कि अब विश्राम से पहले उन्हें छुट्टी दें। लेकिन नहीं, उनका कहना था कि वह अपने बच्चों को उसी समय छुट्टी देंगे जब उनके जानेका समय होगा चाहे वह विश्राम का समय क्यों न हो। यह सदा हरेक बच्चे की सेवा के लिए सदा तैयार रहते थे।

बाबा की निद्राजीत स्थिति व सर्व आत्माओं के स्नेह का ज्वलंत उदाहरण यह है कि वे हमेशा कहा करते थे कि - 'बच्ची, चाहे मैं सोया हूँ, परंतु अगर कोई बच्चा मुझसे मिलने आये तो मुझे तुरंत जगाना। ऐसा न हो कि कोई बच्चा बाबा से मिलने से वंचित रह जाए।'

उनका सदा यही उद्देश्य रहता था कि मानव हृदय की गहराईयों को जाग्रत करें। हरेक बच्चा हीनता और छोटे-पन के विचारों से ऊपर उठ प्रगति की मंजिल की ओर बढे। मैंने देखा कि पिताश्री के व्यवहार को देख हरेक बच्चा अपने सच्चे परमपिता शिव परमात्मा से अपना अटूट सम्बन्ध जोडता था।

मैंने देखा कि जब कभी कोई ऐसा थका हुआ व्यक्ति उनके पास आता तो वह उनकी परेशानी को एक सेकण्ड में समाप्त कर देते थे। वह हमेशा कहा करते थे कि 'परेशान क्यों होते हैं? जब अपनी वास्तविक शान अर्थात् 'हम किसकी सन्तान हैं?' उसको भूल जाते हैं तो परेशान हो जाते हैं। वो हमेशा कहते थे कि जब आप देह से न्यारे रहेंगे तो थकावट नहीं होगी। सदा अपने को आत्मा समझ उस पिता परमात्मा की स्मृति की शान में रहेंगे तो कभी भी परेशान नहीं होंगे।'

मैंने देखा कि 'पिताश्री जी सदा इसी खुदाई नशे में रहते थे। सर्व प्रकार के कार्य करते हुए भी उनसे निर्लिप्त रहते थे। यही थी उनकी महानता।' पिताश्री जी के जीवन को देख कर अनेकों ने प्रेरणा ली।

हर समय हम बच्चों को भी शिक्षा देते हुए वे सदा न्यारे और प्यारे रहते थे। मेरा वह प्रैक्टीकल अनुभव है कि 'पिताश्री जी सदा 'एक बल, एक भरोसा' रहते थे।' सदा एक बल एक भरोसा रहने से सफलता ही सफलता है।

हम बच्चों के गुणों को देखकर सदा हम सभी को आगे बढ़ाते थे। पिताश्री हमेशा कहते थे कि आप के भीतर जो गुण है वह एक मूल्यवान पूँजी है। यह सभी पूँजीयों से अधिक मूल्यवान हैं। गुणों का उपयोग ही महान उपयोग है। जब कि आपके गुण रूपी इतना खजाना है तो उसका क्यों नहीं सदुपयोग करते हो? आप उस पिता शिवबाबा के बच्चे हो जो कि सर्व खजानों का दाता है।

बाबा अपने अंतिम वर्ष में, जबकि वे अपनी कर्मातीत अवस्था के बहुत नजदीक थे, बहुत ही उपराम रहने लगे थे। हमने देखा, 'बाबा बहुत अधिक समय एकांत मग्न अवस्था का अभ्यास करते थे। कोई भी बात उनके मन को विचलीत नहीं करती थी। योग अभ्यास के द्वारा बाबा का शरीर भी सूक्ष्म हो गया था। वे इस धरती पर फरिश्ते नजर आने लगे थे। उनका अंग-अंग शीतल रूप में देखा। अंग-अंग शीतल होना सम्पूर्णता की निशानी है' यह उनके जीवन से प्रत्यक्ष हो गया था। मन की सम्पूर्ण शीतलता और सम्पूर्ण योग की स्थिति पर जा चूके थे - ऐसा मुझे आभास होता था। जब भी मैं बाबा के सम्मुख जाती थी तो मैं स्वयं भी अशरीरी हो जाती थी। जब भी मैं उन्हें देखती थी, ऐसा लगता था कि वे यहाँ नहीं है। उन्हों ने हमें अपनी जिम्मेदारी वाले जीवन में करके दिखाया जो अनुकरणीय है।

एक बार की बात है

- दीदी मनमोहिनी, मधुबन

शिवबाबा और ब्रह्मा बाबा ने प्रतिदिन ज्ञान मुरली द्वारा तो बहुत-सी अनमोल शिक्षाएँ दी हैं। परंतु उनके अतिरिक्त बाबा से जब किसी का व्यक्तिगत रूप से मिलना होता था तो भी बाबा से बहुत से अनमोल ज्ञान-रत्न मिलते थे। समय-समय पर व्यक्तिगत रूप से बाबा ने जिसके प्रति जो वचन कहे, यदि उनका संग्रह किया जाय तो एक बहुत ही बडा खजाना इकट्ठा हो जायेगा। बाबा का तो हर कदम भी ज्ञान-युक्त था और उनके मुख-मण्डल पर जो भी भाव-रेखाएँ उभरती थी, वो भी कोई संदेश, कोई आदेश, कोई निर्देश अथवा प्यार व उल्लास देने वाली होती थी। कितनी ही आत्माओं ने उनके मूक नैनों द्वारा अपार पैतृक स्नेह को पाया था और कितने ही मन उनके चितवन पर मधुर मुस्कान। जो कार्य कलाप चल रहा था, वह सारा ही मनुष्यात्माओं के कल्याण और उत्थान ही के निमित्त था। उसमें से कुछ बिखरे मोती हमें उन बहनों व भाईयों के अनुभव में मिलते हैं जो बाबा के सम्पर्क में आते थे। यहाँ हम कुछ थोडी ही बहनों के जीवन में आये ऐसे थोडे से प्रसंगों का उल्लेख कर रहे हैं।

1. उचित सम्मान और स्नेह देकर ही ज्ञान देना चाहिए

एक बार की बात है कि - 'मधुबन में तन पर भगवे कपडे धारण किए एक सन्यासी जी आये थे। उन्होंने बहुत अनुरोध किया कि उन्हें बाबा से मिलाया जाये।' जेसे कि नियम निर्धारित था, उनसे एक परिचय पत्र भरवाया गया। इस फार्म में तो इस प्रश्न का भी उत्तर देना होता है कि मिलने वाले का उद्देश्य क्या है ? अब बहुत समय हो गया है, इसलिए यह याद नहीं आता कि सन्यासी जी ने इस प्रश्न के उत्तर के रूप में क्या लिखा था। परंतु जब बाबा के पास हम उसका परिचय पत्र ले गये तो बाबा ने हमें मिलने के लिए स्वीकृति दे दी। अत: हॉल में जहाँ बाबा ने उनसे मिलने आना था वहाँ उन सन्यासी महोदय को बिठा दिया गया। सन्यासी जी दरी पर बैठे थे और उनके सामने ही दरी पर बाबा के लिए एक गद्दी रखी थी। जब बाबा उस स्थान पर आये तो सन्यासी जी शिष्टाचार के नाते उठ खड़े हुए। बाबा ने उन्हें गद्दी पर बैठने के लिए कहा और स्वयं नीचे बैठने लगे। सन्यासी जी संकोच करते हुए व मुस्कराते हुए बोले - 'नहीं, नहीं, यहाँ तो आप ही बैठिये, मैं दरी पर बैठूँगा।' बाबा बोले - 'नहीं बच्चे, सन्यासीयों ने भारत देश की बहुत सेवा की है क्योंकि वे शताब्दियों से पवित्र रहते आये हैं। यदि ये पवित्र न रहते तो आज तक भारत एक गरम तवे की तरह होता अथवा कामाग्नि में जल मरा होता।' इस प्रकार अपनी महिमा सुनकर वह और भी खुश हुआ। खेर, संन्यासी जी गद्दी पर तो बैठे नहीं। बाबा भी गद्दी पर नहीं बैठे बल्कि दरी पर ही बैठ गये। जब बाबा ने उन्हें ज्ञान समझाना शुरु किया जिसमें बाबा ने उन्हें यह भी बताया कि सन्यासीयों ने 'शिवोअहम्' - इस मान्यता से मनुष्यात्माओं को शिव परमात्मा से विमुख किया है। देखा गया कि सन्यासी जी यह बात सुनकर नारज नहीं हो रहे थे। लगता था कि उनके मन में यह भाव बैठ गया है कि 'हमारे मत में जो सिद्धांत अथवा आचरण अच्छा है, उसे ये अच्छा भी कह रहे हैं और जो इन्हें गलत लगता है, इसे तर्क संगत रीति से गलत भी बता रहे हैं - इसलिए बुरा मानने की तो कोई बात ही नहीं कह रहे। अत: उन्होंने सब बातों को ध्यान से सुना और जाते समय बाबा से प्रसाद लेकर बहुत खुश होकर गये।' इससे हमने यह समझा कि 'मनुष्य को उचित सम्मान देकर और स्नेह से ही ज्ञान देना चाहिए।'

2. कर्तव्य निभाने में सूक्ष्म वातों का ध्यान

बाबा ने कुछ समय के लिए मुझे मधुबन में वहाँ के यज्ञ वत्सों को वस्त्र देने के कार्य का इन्चार्ज बनाया था। यों तो अपनी समझ के अनुसार मैं कार्य कर रहीं थी परंतु एक बार की बात है कि जब मैं बाबा के पास अपने कार्य के सम्बन्ध में कुछ परामर्श करने के लिए बैठी थी तब बाबा ने मुझे बहुत ही अच्छी शिक्षा दी थी। बाबा ने कहा - ''बच्ची, आपको यह तो अधिकार दे ही दिया है कि सभी यज्ञ वत्सों को उनकी आवश्यकता के अनुसार उन्हें वस्त्र दे दिया करो। परंतु इतना ही नहीं, देने का तरीका भी ज्ञानयुक्त, स्नेह पूर्वक और ऐसा हो कि सब सदा राजी रहें। देखो, सभी वत्सों को मालूम है कि - यह शिव भोले का भण्डारा है। अत: यह याद रखो कि - 'इससे किसी को भी तंगी न हो बल्कि सब खुश हो।' यह याद रख लो कि - 'अगर कोई वत्स आप से कोई चीज माँगता है तो उसके माँगने का अर्थ यह हुआ कि आप उसे देना भूल गई थी।' यह बात तो अच्छी नहीं है क्योंकि ये सर्व त्यागी वत्स है, अत: मुझे इनकी सब मनोकामनाएँ स्वत: ही पूर्ण करनी है। इन्हें समय पर यदि आवश्यक चीजें न मिले तो हो सकता है कि इनमें से कोई वत्स, जिनकी ज्ञान की अवस्था अभी परिपक्व नहीं है, उसे यह याद आ जाये कि - 'जब हम अपने लौकिक घर में थे, तब हमारी परवरिश अच्छी होती थी, हमें माँगना नहीं पडता था, वहाँ तो हमें अपने आप ही कपडे पहना दिये जाते थे।' यदि आप उनके मन में इस संकल्प के उत्पन्न होने के निमित्त बनेंगी तो उनकी अवस्था में अन्तर लाने का बोझ आप पर ही चढेगा। गोया इससे तो आपकी हानि ही हुई,

इसलिये ऐसा कभी नहीं करना। दूसरी बात यह कि - आपको यह तो अधिकार दे ही दिया है कि सब बच्चों को वस्त्र दो परंतु फिर भी देने से पहले बाबा से थोडा-सा पूछ लिया करो क्योंकि बाबा सबकी नब्ज को जानता है।''

3. भूल के प्रति अलवेले

हम प्राय: समझते थे कि हम अभी 'पुरुषार्थी' है, हम सम्पूर्ण तो बने नहीं है, पुरुषार्थीयों से कोई भूल हो जाना तो स्वाभाविक ही है। परंतु एक बार एक घटना ऐसी घटी कि जिससे बाबा ने हमारी इस कमजोरी लाने वाली मान्यता में संशोधन करके हमें सतर्क किया। घटना यह थी कि एक पार्टी मधुबन से विदा होकर अपने नगर को लौट रही थी। उनके द्वारा मुझे किन्हीं भाई-बहनों के लिये यज्ञ प्रसाद भेजना था परंतु मैं भूल गई। मैंने बाबा को जाकर बताया कि 'बाबा, मुझ से यह भूल हो गई है।' बाब ने कहा - 'बच्ची, यह तो तुम्हारी बहुत बडी भूल है क्योंकि अगर तुम यज्ञ प्रसाद भेजती तो वे बहुत खुश होते और उन्हें शिवबाबा की याद आती। सिर्फ एक आत्मा को नहीं, अनेक आत्माओं को खुशी होती, वे इस निमित्त ईश्वरीय स्मृति में रहते।' फिर बाबा ने मुझे समझाया कि - 'भूल केवल इतनी नहीं जो आप कह रही हो बल्कि इसकी बुनियाद तो यह है कि आपने योग युक्त होकर कार्य नहीं किया वरना भूल होती ही नहीं, और यह जो दूसरी भूल है, यह तो और ही बडी है।' उस दिन से लेकर अब मैं किसी को बहुत ही हल्के रूप में यह नहीं कहती हूँ कि मैं भूल गई बल्कि इसे बडी भूल समझकर आगे बढने के पुरुषार्थ में रहती हूँ।

सर्व श्रेष्ठ ऋषि जिन्हें हमें फोलो करना है

- दीदी मनमोहिनी, मधुवन

संसार में रहते हुए भी जो संसार के प्रभाव से निर्लिप्त थे। ऐसे कर्म करते हुए कर्मातीत स्थिति में रहने वाले, सर्वश्रेष्ठ ऋषि ब्रह्माबाबा की आरंभ से ही मुझे निकटता प्राप्त हुई। जब मैं प्रथम दिन हैदराबाद में उनके निवास पर चल रहे उनके सत्संग में गई तो जाते ही मैंने उनके मस्तक पर प्रकाश का चक्र देखा और इस चक्र ने ही मुझे सर्व सांसारिक चक्करों से मुक्त करके होवनहार चक्रवर्ती महाराजा बनने की ओर प्रेरित कर दिया। मैं देह के भान से इतनी दूर चली गई कि मुझे सत्संग का जरा भी आभास नहीं रहा।

मेरे प्रारंभ से ही जीवन 'एक बल, एक भरोसे' चला। मैंने बाबा के हर चरित्र व अखण्ड तपस्या को बहुत ही समीपता से देखा। हर मनुष्य समझ सकता है कि सृष्टि के प्रथम नम्बर की आत्मा सब से अधिक बुद्धिमान, सबसे अधिक शक्तिशाली व सबसे अधिक पावन रही होगी। ब्रह्माबाबा वो आत्मा थी जिसने शिवबाबा के हर बोल से अपने जीवन को रंग डाला था।

१९६८ का वर्ष याद आता है और उसमें बाबा का वो तपस्वी रूप नहीं भूलता जो आज भी बार-बार मुझे प्रेरित करता हैं, जब बाबा ने खेलना भी बंद कर दिया था और बाबा अधिक समय झोंपडी में एकान्त में गहन मग्न स्थिति रूपी गुफा में लीन रहते थे। इस अन्तिम वर्ष में बाबा, निरंतर योग की सर्वोच्च स्थिति पर पहुँच गए थे।

1. प्रत्यक्ष साक्षात्कार

संदेश वाहक बहनें बहुत समय से अव्यक्त वतन में जाकर सम्पूर्ण ब्रह्मा का साक्षात्कार करती थी। परंतु अंतिम दिनों में बाबा, यहीं पर फरिश्ते नजर आने लगे थे। सूक्ष्म वतन के साक्षात्कार व प्रत्यक्ष ब्रह्माबाबा में कोई अंतर नहीं लग रहा था। दूर से देखने पर पता लगता था कि बाबा के पग धरती पर नहीं हैं क्योंकि सचमुच ही बाबा धरती के आकर्षण से दूर वतन में रहने लगे थे। यह थे दधिचि ऋषि की अंतिम स्थिति जिसने अपनी हड्डियों को पूर्णतया यज्ञ में स्वाहा करके, फरिश्ता स्वरूप प्राप्त किया था।

2. मैं-पन का सम्पूर्ण त्याग

ये महान तपस्वी मैं-पन के सम्पूर्ण त्याग के कारण नम्बर वन को प्राप्त हुआ। त्याग तो अनेक वत्सों ने किया परंतु 'वर्णन तो दूर, बाबा को तो अपने त्याग का एहसास भी नहीं था।' बाबा कहा करते थे कि - 'मुझे तो कोडियों के बदले स्वर्ग की बादशाही मिल गई।' रुहानी आकर्षण से सम्पन्न वे किसी को अपनी ओर आकर्षित भी नहीं होने देते थे। वे कहा करते थे कि - 'देहधारी को याद करोगे तो पाप के भागी होगे।' बाबा अपना स्वरूप इतना साधारण रखते थे जो कोई समझ भी न पाए कि ये प्रजापिता ब्रह्मा हैं, परंतु उनकी शालीनता व महानता प्रत्यक्ष उनके होवनहार विश्व महाराजन की परछाई फेंकती थी। मान-शान की बात तो उनसे कोसों दूर थी।

बाबा अपने लिए कुछ भी नहीं रखते थे। कई बार हम बाबा को कहते थे कि बाबा इस टूटे-फूटे मकान को छोडकर आप नए मकान में रहो। तो बाबा कहते थे - 'बच्ची, शिवबाबा पुराने तन में, पुरानी दुनिया में आया हैं, बाबा तो पुराने मकान में ही रहेंगे। नए मकान नए बच्चों के लिए हैं।' ऐसा त्याग और कोई नहीं हो सकता। एक बार किसी ने एक नई दरी भेजी, हमने बाबा से कहा, बाबा झोंपडी से पुरानी दरी हटाकर नई दरी डाल दें। बाबा ने कहा - 'नहीं, बच्ची, नई दरी बच्चों के काम आएगी।' कई बहनें बाबा के लिए

नए स्वेटर व वस्त्र लाती थी, बाबा उन्हें संतुष्ट करने के लिए पहन लेते थे और अगले ही दिन बच्चों को दे देते थे। और बच्चे वे वस्त्र लेकर रात-दिन शिव बाबा को याद करते रहते थे। एक बार एक गरीब व्यक्ति बाबा को मिलने आया। उसकी धोती फटी हुई थी। बाबा ने फौरन अपनी धोती उसे दे दी - लो बच्चे, ये बाँधों उसके नयन भर आए और वह बाबा से लिपट गया। ऐसा अनुपम प्यार था बाबा को अपने बच्चों से।

जब केाई बच्चा बाबा का फोटो लेने के लिए कहता था तो बाबा कभी रुचि नहीं लेते थे। बाबा कहते थे - 'यह भक्त है। जिसका तुम फोटो लेना चाहते हो, उसका फोटो तो आता ही नहीं। मेरा फोटो लेकर तुम क्या करोगे।' बाबा ने कभी किसी को अपने पैर नहीं छूने दिए। ऐसे महान थे अपने बाबा, जिन्होंने स्वयं को पूर्णतया गुप्त रखा।

इस मैं-पन के त्याग के कारण ही बाबा सदा निश्चित व अडोल थे। यज्ञ रूपी जहाज को इस विषय सागर में कितने तुफान लगे होगे, कितनी निराशा की घडियाँ आई होंगी परंतु बाबा के चेहरे पर कभी चिंता की रेखाएँ नहीं देखी गई। बाबा कहा करते थे - 'बच्ची, जिसके ये सब बच्चे हैं, उसे ही चिंता है। बाबा अपने बच्चों को भूखा थोडे ही रखेगा।' यह थी बाबा की सम्पूर्ण समर्पणता, जो अनुकरणीय है। वास्तव में ब्रह्माबाबा ने ही शिवबाबा को पूर्ण रूपेण जाना था। यही कारण था कि इतने बडे यज्ञ की अनेक यज्ञ वत्सों की जिम्मेदारी सम्भालते हुए भी बाबा सबसे पहले कर्मातीत बन गए।

3. ब्रह्मा बाबा सर्वश्रेष्ठ योगी

हमने देखा कि बाबा बात करते-करते बीच में ही गुम हो जाते थे, अर्थात् अशरीरी हो जाते थे। जैसे कि बातें सुनते हुए भी निर्लिप्त रहते थे। न तो बाबा विस्तार से सेवा समाचार सुनते थे और नहीं विस्तार से उत्तर देते थे। जब मैं यज्ञ का चक्कर लगाने बाबा के साथ जाती थी तो बीच-बीच में बाबा को याद की मस्ती में पाती थी। वाणी में आते भी बाबा वाणी से परे रहते थे और अपने दो महावाक्यों से ही हमें भी वाणी से परे उडा ले जाते थे। कभी कभी मैं कुछ बात भी करती थी तो जैसे कि बाबा यहाँ है ही नहीं। फिर बाबा कहते थे - 'हाँ, क्या कहा बच्ची...।'

अन्तिम दिनों में मैं जब भी बाबा के पास जाती थी, कमरे में सन्नाटा ही सन्नाटा नजर आता था और मैं स्वयं भी अशरीरी हो जाती थी। कितनी ही देर तक तो बाबा से दृष्टि ही लेती रहती थी और यह भी भूल जाती थी कि मैं किस काम से आई थी।

जब मैं बाबा को भोजन खिलाती थी तो बाबा एकदम योग युक्त धीरे-धीरे भोजन ग्रहण करते थे। और बार-बार मुझे याद दिलाते थे कि - 'बच्ची, तू किसे भोजन खिला रही हो।' बाबा मुझे कहते थे कि - 'दीदी, तुम पूछती रहो कि बाबा, शिव बाबा याद है?' इतने निरहंकारी थे बाबा।

कभी-कभी जब बाबा स्नान करते थे और कहीं से फोन आ जाता था तो मैं जाती थी कि बाबा फोन आया है। तो बाबा हँसी में कहते थे कि कह दो - 'मैं तेा शिव पर लोटी चढा रहा हूँ।' इस प्रकार हर कर्म में बाबा ने योग को मनोरंजन का साधन बना लिया था।

बाबा का हर कर्म योग युक्त था। पत्र लिखते, सुनते, बच्चों से मिलते हुए बाबा, शिवबाबा के साथ रहते थे। यहाँ तक कि खेलते हुए तथा पिकनिक करते हुए भी बाबा उसी अलौकिक मस्ती में रहते थे। पिकनिक करते भी बाबा सभी को याद में रहने का इशारा देते रहते थे। बाबा कहते थे - 'नहीं तो शिवबाबा कहेंगे कि बच्चे खेलपाल में इतने मस्त हो गए जो बाप को भी भूल गए।'

4. अन्तिम दिनों में

बाबा के जीवन में शिवबाबा पूर्णतया समा चुका था। बाबा का खान-पान बहुत हल्का था और नींद तो पूर्णतया सतोप्रधान थी। जब भी मैं बाबा के पास जाती थी, सदा बाबा को जागती ज्योति ही पाती थी। और बाबा सदा कहते थे - 'आओ बच्ची' अन्तिम समय में बाबा का शरीर भी पूर्णतया हल्का महसूस होता था। योगियों में अंग-अंग 'शीतल' यह बाबा से स्पष्ट प्रतिभासित होता था। शुरु में मैंने बाबा के मस्तक पर प्रकाश चक्र देखा था और अंत में उनका सारा शरीर प्रकाशमय दिखाई देता था।

5. एक आकर्षक दृश्य

अन्तिम दिनों में बाबा प्रात: २.३० बजे उठ जाते थे और इस दुनिया से दूर चले जाते थे। फिर क्लास में एक घण्टा योग कराते थे। बाबा को पूर्णतया लाईट हाऊस नजर आते थे। मानो इस महान भूमि से सम्पूर्ण जगत को शक्तियों का दान दे रहे हों। फिर बाबा बाहर आँगन में खडे हो जाते थे और सामने सभी यज्ञ-वत्स खड़े रहते थे। बाबा एक-एक रुह को बल देते थे। यह दृश्य अति मन-मोहक हो जाता था, ऐसा लगता था कि ज्ञान सूर्य व चन्द्रमा चेतन सितारों को प्रकाशित कर रहे हों। सभी देह व समय की सुध-बुध भूलकर चकोर की तरह खडे रहते थे। फिर कभी-कभी बाबा महावाक्य भी बोलते थे - 'बच्चे, निराकारी स्थिति में हो या आकारी स्थिति में।'

6. नारायणी नशे में बाबा

बाबा की ईश्वरीय मस्ती चेहरे से झलकती थी। कभी-कभी बाबा अपने भविष्य की याद में वर्तमान को पूर्णतया भूल जाते थे। बाबा भविष्य के विचारों में खोये बैठे रहते थे, फिर जब गद्दी से उठते थे तो सामने शीशे(दर्पण) में देखकर कहते थे - 'दीदी, मैं तो छोटा कृष्ण हूँ, ये क्या, ये तो मेरा बूढा शरीर है। नहीं, नहीं, मैं तो छोटा-सा कृष्ण हूँ।' हम सब यह दृश्य देख कर हँसने लगते थे। उस बाबा के चेहरे पर भी कृष्ण जैसे बचपन के चिह्न नजर आते थे।

अन्तिम दिनों में ऐसा लगता था जेसे कि बाबा सदा ही शिवबाबा से बातें करते रहते थे। सदा मग्न देखने में आते थे बाबा। बाबा के आस-पास सन्नाटा ही सन्नाटा नजर आता था। जिस पर भी बाबा की दृष्टि पड जाती थी, वह तुरंत ही शरीर से न्यारा हो जाता था। बाबा के सामने आते ही किसी को भी ज्यादा बात करने की इच्छा नहीं होती थी और स्वत: ही सर्व समस्याओं का समाधान मिल जाता था।

यही थी बाबा की अन्तिम तपस्या जिससे बाबा सम्पूर्ण फरिश्ते बने। हम भी बाबा जैसी अधिक मेहनत, सम्पूर्ण त्याग, सम्पूर्ण निर्माणता और समर्पणता को धारण करके ही उन जैसा फरिश्ता बन सकेंगे।

बाबा मुझे कहा करते थे - 'बच्ची, बाबा बच्चों को जिम्मेदारी देते हैं, परंतु जो बच्चे स्वयं को निमित्त समझ कर, शिवबाबा पर जिम्मेदारी रखकर पुरुषार्थ करते हैं वे सफल होते हैं।'

जब अव्यक्त बापदादा ने हमें निमित्त बनाया तो वरदान दिया था - 'बच्ची, जैसे तुम साकार में अँगूली पकडकर बाबा को बच्चों से मिलाने ले जाती थी वेसे अब बाबा को अँगूली पकडकर साथ ले जाना।'

यह वरदान मेरे साथ है और मैं सदा बाबा को अपने साथ ही पाती हूँ। जब मैं सबेरे उठती हूँ तो बाबा के इशारे मिलते हैं और बाबा के फरमान भी मिलते हैं और मैं पूर्णतया लवलीन हो जाती हूँ।

बाबा ने मुझे निश्चिंत बना दिया

- दादी जानकी, मधुवन

ईश्वरीय रसों से भरे जीवन की कुछ झलकियाँ उन्हीं के भावों में प्रश्नोत्तर रूप में यहाँ प्रस्तुत हैं।

प्रश्न :- दादीजी, आपने इस दिव्य जीवन में कैसे प्रवेश किया?

उत्तर :- मेरा जन्म १९१६ में हैदराबाद (सिन्ध) में एक सम्मानित परिवार में हुआ था। घर में धार्मिक वातावरण होने के कारण बचपन से ही मैंने अनेक धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन किया। महान पुरुषों की जीवन पढ़ना मेरा मुख्य शौक था। जब मैं मीरा की कहानियाँ पढ़ती थी तो मन में तीव्र प्रेरणा आती थी कि मैं भी इन जैसी ही प्रभु-प्रेम में मग्न बनूँ। सांसारिक जीवन व्यतीत करने का मेरा कोई इरादा नहीं था।

पहले से ही लौकिक सम्बन्ध में समीप होने के कारण ब्रह्माबाबा के प्रति मेरा अति स्नेह व सम्मान था। जब बाबा ने ओम मण्डली शुरु की, तब मैं १९ वर्ष की थी। जब अपने लौकिक बाप के साथ रास्ते से जा रही थी तो मैंने बाबा को सामने से आते देखा, बाबा मुझे विष्णु रूप में दिखाई दिये। बस, मेरा मन नाच उठा कि मुझे तो भगवान मिल गये। यही अलौकिक अनुभव मेरे जीवन का आरंभ था। बस फिर तो मुझे ऐसी ईश्वरीय लगन लगी जो कोई भी रोक न सका। कुछ ही समय में मेरा सारा परिवार इस रुद्र-यज्ञ में स्वाहा हो गया और मैं भी कुछ विघ्नों को पार करके २१ वर्ष की आयु में सम्पूर्णतया ईश्वर की गोद में विश्राम पाने आ गई।

प्रश्न:- ज्ञान में आपको किस बात ने सबसे अधिक आकर्षित किया?

उत्तर:- मुझे गुरु और विद्वानों के प्रति सत्कार तो बहुत था परंतु क्योंकि वे परमात्मा की ओर ध्यान नहीं खिचवाते थे इसलिए मुझे उनके प्रति आकर्षण नहीं होता था। मैं सोचती थी कि मुझे कोई ऐसा महापुरुष मिले जो मेरा नाता भगवान से जुडाये और यही मुख्य बात यहाँ मेरे आकर्षण का केन्द्र बनी। मैंने देखा कि बाबा बहुत ही अथार्टी से बोलता है, अपनी ओर जरा भी ध्यान नहीं खिचवाता, अपने चरण भी नहीं छूने देता। यह अलौकिकता मुझे खींच लाई। यद्यपि मैंने कई ग्रन्थ पढ़े थे तथापि बाबा की सभी बातें मुझे पूर्ण रूप से सत्य लगती थी।

प्रश्न:- बाबा के साथ के अपने कुछ संस्मरण सुनाइये। बाबा से आपने क्या-क्या वरदान पाये?

उत्तर:- बाबा की यादें नयनों में अश्रुकण छलका देती हैं। बाबा ने हमें ईश्वरीय प्यार देकर संसार भुला दिया। बाबाने हमें ईशारों से ही महान बना दिया। हमारा परम भाग्य है जो जीवन के अनमोल क्षण उस महानतम पुरुष के साथ बीते, इन नयनों ने भगवान को नवयुग

रचते देखा। बाबा ने हमें नवजीवन दिया। बाबा का दिव्य स्वरूप आँखों के आगे घूम रहा है। जब मैं भण्डारे में चक्कर लगाने जाती हूँ तो बाबा का भण्डारे में चक्कर लगाना सामने आता है।

1. बाबा ने मुझे निश्चिंत बनाया

मुझे पुरुषार्थ की बहुत चिंता रहती थी। बाबा ने कहा - 'तुम चिंता न करो। तुम श्रीमत पर चलो तो मैं भाग्य बनाकर तुम्हारे हाथ में दूँगा।' उस दिन से मेरी चिंता समाप्त हो गई और मैंने केवल निश्चिंत रहने का ही पुरुषार्थ किया।

2. बाबा ने सिखाया बच्ची कभी किसी बातों में मत आना

एक दिन अमृतवेले बाबा स्वयं मेरे पास वरदान देने आये। आते ही कहा - 'बच्ची, कभी भी किसी बातों में मत आना। नहीं तो बाप की बातें भूल जायेंगी। क्योंकि दूसरों की बातों में मिलावट अवश्य होती है और मिलावट दु:खदायी होती है।' उस दिन से यह महामंत्र मेरे जीवन का आधार बन गया। और मैं पूर्ण रूप से सुरक्षित हो गई क्योंकि ये व्यर्थ की बातें ही संगठन में संघर्ष पैदा करती हैं।

3. विना पूछे ही समाधान

एक बार मैं बाबा के पास गई और सोचा कि बाबा से ये-ये बातें पूछूँगी। मेरे जाते ही बाबा ने मुझसे बातें करनी प्रारंभ की और सब-कुछ बता दिया। फिर पूछा - 'बच्ची, कुछ पूछाना है?' मैंने कहा - 'बाबा, सब-कुछ बताकर फिर पूछते हो।'

तब से बाबा ने वरदान दिया - 'बच्ची, जो भी तुम्हारे सामने आयेगा उसे बिना पूछे ही सब-कुछ मिल जायेगा।' यह वरदान मेरे साथ है। विदेशों में भी अनेक आत्माओं से मिलते हुए ऐसे ही अनुभव रहे।

4. जनक समान उपराम

एक बार बाबा मुझ से काफी दूर खडे थे। मुझे विचार आया कि बाबा मुझे बुलाये। तुरंत ही बाबा ने आवाज दी 'जनक बेटी'। मैंने राजा जनक की कहानी पढ़ी थी। वह कहानी मेरे मानस पटल पर उभर आई। इस जनक शब्द से मुझे बहुत प्रेरणा मिली। मुझे एहसास होने लगा कि मुझे राजा जनक की तरह विदेही और ट्रस्टी बनना है।

5. मस्त फकीर बनने का वरदान

बाबा कई बार मुझे मस्त फकीर कहकर बुलाते थे। इन शब्दों से मुझे नशा चढ गया। यह कहकर बाबा ने मुझे सदा खुदाई खिदमत में रहने का वरदान दिया। और बाबा के ये बोल आज भी मेरे कानों में गुंजते हैं और मुझे मस्त बनाते हैं।

मैंने बाबा से सीखा कि हम किसी को भी बडा आदमी क्यों समझें। जब कोई भी बडा आदमी बाबा के पास आता था तो बाबा उसे 'बच्चा, बच्चा' कहकर आत्म-भाव से बातें करते थे, तो वह भी अपने को बच्चा ही समझने लगता था। तो जब कोई भी हम से मिलता है तो मैं उसे बाबा का बच्चा - आत्मा ही समझती हूँ।

मैंने बाबा से 'मुरली' का महत्व बहुत सीखा। भगवान हमें पढ़ाने आते हैं, तो उसकी मुरली से, जो कि हमें मस्त बनाती है, हमारा कितना प्यार हो। इसलिए मैं प्रत्येक मुरली को अनेक बार पढ़ती थी।

कर्मभोग भी सेवा करने का साधन

- दादी मनोहर इन्द्रा, ज्ञान सरोवर

यह घटना जून १९५६ की है। बाबा की शारीरिक आयु तब लगभग ७९-८० वर्ष की होगी। अनायास ही बाबा को एक शारीरिक व्याधि ने आ घेरा। आबू के स्थानीय डॉक्टर एवं सिविल सर्जन ने कहा कि - 'पिताश्रीजी को तुरंत ही बम्बई ले जाया जाय क्योंकि वहाँ बडे-बडे अस्पताल है। और इलाज की भी सुविधा आधुनिक तथा अच्छी है।' गम्भीर मुख मुद्रा बना कर और कुछ चिन्ता सी प्रगट करते हुए डॉक्टर कहते - 'इसके लिए बाबा को ऑपरेशन कराना पडेगा और ७९-८० वर्ष की इस अधेड आयु में ऐसा ऑपरेशन बहुत ही कम लोगों का सफलता से हुआ करता है ।' डॉक्टर की ऐसी बातें सुन-सुन कर हम वत्सों के मन में कुछ सोच-विचार चल पडा। बाबा के प्रति अति व अलौकिक स्नेह के कारण यज्ञ वत्सों का मन कुछ भर आया था। परंतु जब हम वत्स बाबा की ओर देखते थे तो आश्चर्यचकित रह जाते थे। बाबा के चमकते चेहरे पर अस्वस्थता अथवा कष्ट के कोई भी चिह्न न मिलते थे।

1. अचल स्थिति

जब कोई वत्स उत्सुकता वश बाबा के कमरे के पर्दे को हटाकर बाबा की ओर देखता तो बाबा नयनों में स्नेह भरकर मधुर मुस्कान से उसकी ओर निहारते। यदि कोई वत्स उनकी शैया के पास जाकर खड़ा हो जाता और इसके चेहरे पर की रेखाएँ गम्भीर

स्थिति व चिन्ता की सूचक होती तो बाबा पहले जेसे ही मधुर आवाज में कहते - 'बच्चे, मैं तो ठीक हूँ, हाँ बिल्कुल ठीक हूँ। ये तो आप सब जानते ही हो कि यह पुराना शरीर है, पुरानी चीज को तो कई चत्तियाँ लगाकर ही चलाया जाता है। बाकी बाबा को तो कुछ भी नहीं हुआ है। फिक्र से फारिग रहो बच्चे।' जब बाबा ये शब्द कह रहे होते तब बाबा के चेहरे पर वैसा ही नूर होता और उनकी खुशी में तथा ताजगी में भी कोई कमी न मालूम होती। भले ही बाबा रात-भर उस शारीरिक यातना के कारण जागते रहे थे तथापि बाबा के चेहरे पर थकावट का कोई भी चिह्न नहीं था पहले जैसी ही ताजगी थी और सदा की तरह ही उनके बोल भी प्यार भरे ही थे। बाबा की यह स्थिति सूक्ष्म रूप में सब वत्सों को यह प्रेरणा दे रही थी कि - 'माया के अतिरिक्त काया भी यदि बडी कठिन परीक्षा की स्थिति सामने लाये तो देह से न्यारा होकर आत्मिक स्थिति में रहने तथा परमपिता परमात्मा की स्मृति में स्थित रहने का अभ्यास ऐसा परिपक्व होना चाहिए कि वह रंच मात्र भी हमारी स्थिति को बिगाड न पाये।'

2. बम्बई जाने के लिए विदा

डॉक्टर की राय के अनुसार बम्बई में तार तो करा ही दी गई थी ताकि वहाँ उनकी चिकित्सा के लिये किसी अच्छे अस्पताल में उचित प्रबन्ध किया जाये। तार पाकर वहाँ के वत्सों के मन में भी यह ख्याल आया कि अवश्य ही स्थिति गम्भीर है। इधर कोटा हाऊस के हाल में एक शैया पर लेटे हुए बाबा बम्बई जाने से पहले सब से विदा ले रहे थे। बाबा हरेक वत्स को स्नेह से यज्ञ प्रसाद (टोली) दे रहे थे, वे किसी से हाथ मिला रहे थे, तो किसी से सिर पर अपना वरद् हाथ रख रहे थे और किसी को थप-थपा कर उसके प्रति उल्लासप्रद वचन कहते जा रहे थे।

इस दृश्य का किन शब्दों में वर्णन किया जाए! सबके नैन स्नेह से गीले हुए थे। और अपलक होकर बाबा को निहार रहे थे। अवश्य ही सबका मन इस सोच में था कि 'न जाने अब विश्व मंच पर कौन-सा नया दृश्य उपस्थित होगा।' बाबासे पितृवत स्नेह पाकर, उनसे टोली लेकर और उनके मधुर बोल सुनकर सबको खुशी भी होती थी। लेकिन आज इस खुशी में एक और प्रकार की लहर का भी समावेश था। सबका मन बेतार के तार से शिवबाबा से ये तो अनुनय-विनय अथवा अनुरोध और आग्रह कर ही रहा था कि - 'बाबा, अभी हम नन्हें और कोमल पौधे हैं और हम चेतन फूलों को इस साकार रूप द्वारा आप के लालन-पालन और देख-रेख की आवश्यकता है। ये तो आप जानते ही हैं बाबा, परंतु हम, जिन्होंने कि सब इच्छाओं का त्याग किया है, इस एक शुभ इच्छा को तो अवश्य ही अपने मन में लिए हुए हैं कि ये नैन इस सुहावने पुरुषोत्तम युग के अंत तक, इस सलोने साकार रूप में आपके अलौकिक चरित्रों को देखकर धन्य रहें।' इस प्रकार की विचार तरंगों से बने वातावरण में सबके चेहरों पर बाबा के विदा होने के कारण जहाँ बाबा की वापसी की प्रतीक्षा के चिह्न अंकित थे, वहाँ उन पर एक मजबूरी भी झलकती थी कि शारीरिक स्वास्थ्य-लाभ के लिए बाबा को बम्बई तो जाना होगा ही। परंतु बाबा ने वहाँ ऐसे वातावरण को क्षण भर में ही बदल दिया क्योंकि उनके जीवन की तो हरेक कृति बच्चों को खुशी देने की ही निमित्त थी।

3. बीमारी भी ईश्वरीय सेवा के लिए एक निमित्त कारण

बाबा बोले, 'वत्सों आप क्या सोच रहे हो ? इसमें कोई सोचने की तो बात ही नहीं है। शिवबाबा तो अपने इस रथ द्वारा अब एक दूसरी भी सर्विस कराना चाहते हैं। इसलिए ही वह बाबा को बम्बई भेज रहे हैं। बच्चे, यह बिमारी कोई बिमारी नहीं। यह तो इस विश्व ड्रामा में बाबा को बम्बई की सर्विस पर भेजने की एक युक्ति है। देखो, बच्चे, अगर यह व्याधि सामने न आती तो आप लोग भला मुझे बम्बई कैसे जाने देते। परंतु वहाँ के बच्चों की सेवा के लिए भी बाबा को जाना तो है ना ? बाबा के बच्चे तो जहाँ-तहाँ हैं और बाबा को उन सबकी सेवा करनी तो है ना, या नहीं करनी है ? तो देखो, बम्बई जैसे महानगर में, जहाँ पर माया का बडा भभका है, वैसे तो लोग ज्ञान सुनते ही नहीं और पास आते ही नहीं परंतु अब जब बाबा इस स्थिति में वहाँ जायेंगे तब तो लोग बाबा की शारीरिक अस्वस्थता का समाचार सुनकर लोकाचार के नाते ही सही, बाबा से मिलने आयेंगे क्योंकि यह तो सांसारिक रीति है कि लोग कुशल-मंगल पूछने जरूर जाते हैं। इसलिए सिन्ध के पुराने मुखी लोग तथा उनके कुटुम्बी और बाबा के लौकिक सम्बन्धी, जिन्होंने प्रारम्भ में अनजाने ही, इस ईश्वरीय कार्य का विरोध किया, अब बाबा से मिलने तो आयेंगे ही। यदि यह कारण न बनता तो वे भला अन्य किस निमित्त कारण आते ? अत: बच्चे, बाबा तो अब उनकी सेवा करने जा रहा है। इसलिए आपको तो अब खुश होना चाहिए। ड्रामा में आप बच्चों का निश्चय तो अडिग है ही। अब तो हर हालत में आप बच्चों का कल्याण ही कल्याण है। अब ये संगमयुग का समय तो चढती कला का समय है - इसमें तो किसी को संशय नहीं है ना ?' सब बोले - 'नहीं।'

बाबा बोले - तब खुश रहो बच्चे। बाबा तो बस, अभी 'आया कि आया'।

4. एक थे जिस्मानी सर्जन, दूसरे थे रुहानी सर्जन

उधर बम्बई के नये अस्पताल में बाबा के लिये सब व्यवस्था पूरी कर दी गई थी। वहाँ का जो मुख्य डॉक्टर था, जिसने ही इस रुहानी सर्जन अथवा पिताश्रीजी का ऑपरेशन करना था, उसे ये बता दिया गया था कि - 'उसके पास अब विश्व इतिहास के कितने बडे व्यक्ति को लाया जा रहा है।' वह डॉक्टर चेन-स्मोकर था - एक सिगरेट को बुझाने से पहले ही उससे दूसरी जला लिया करता था। उसे भाई विश्वकिशोर जी ने नम्रता पूर्वक ये सुझाव दे दिया था कि 'बाबा में तो वो रुहानी शक्ति है कि जिससे वो लोगों के इस प्रकार के व्यसनों को सहज ही छुडा दिया करते हैं।' डॉक्टर साहब बोले - 'हाँ, ऐसा हो तो सकता हे परंतु मैं समझता हूँ कि मुझ से तो कोई सिगरेट छुडा नहीं सकेगा। मेरा तो अब कई वर्षो से इसे पीने का अटूट अभ्यास हो गया है। अब तो ये मेरी जीवन संगिनी हो गई है। इसलिए मैं सम्भव नहीं समझता कि मैं इसे छोड सकूँगा।' अस्पताल में स्टाफ के लोग बताते थे कि ऑपरेशन के तुरंत बाद भी पहले सिगरेट मुँह में लगाकर पीछे किसी से बात किया करते थे। कुछ लोगों का तो यहाँ तक भी कहना था कि ऑपरेशन थियेटर में भी डॉक्टर साहब के निकट सिगरेट सुलगती रहती थी और वह बीच-बीच में कश लगा लिया करते थे। अब एक ओर ये भारत के नामीग्रामी शारीरिक व्याधियों के डॉक्टर और दूसरी ओर ये विश्व के सब से बडे रुहानी साकार सर्जन। सोचिए तो अब क्या हुआ होगा।

5. डॉक्टर के प्रति बाबा के मुखारविन्द से

वास्तव में तो फैसला उसी वक्त हो गया था जब डॉक्टर की पहली निगाह अपने अद्भूत रोगी पर पडी थी। इतनी बडी आयु में भी इतना कष्ट होते हुए भी बाबा न तो करहने की कुछ आवाज कर रहे थे और न ही उनके चेहरे पर व्याधि के द्वारा उत्पीडन के कुछ चिह्न दिखाई दे रहे थे। पहली ही भेंट में जब बाबा ने डॉक्टर को डॉक्टर न कहकर 'गुडमार्निंग, बच्चे' - इस प्रकार के शब्दों से सम्बोधित किया तो डॉक्टर के शरीर में एक सिहरन सी हो उठी। उसके जीवन में ये पहला ही पेशन्ट था, जिसने अपनी तकलीफ बताने की बजाय मुस्कराते हुए डॉक्टर से 'गुडमॉर्निंग' कहा और डॉक्टर को 'बच्चे' कह कर बुलाया। अवश्य ही डॉक्टर साहब के मन में एक अजीब, सुहावनी अनुभूति हुई होगी कि ये कौन है जो मुझे 'बच्चे,बच्चे' - इन स्नेह भरे शब्दों से पुकार रहा है ? इतनी बडी आयु वाले डॉक्टर साहब को बचपन के बाद अब कई वर्ष बितने पर जब ये शब्द सुनने को मिले होंगे और उन्हें लगा होगा कि उनके लिए भी संसार में कोई ऐसा भी है जो उन्हें पिता जैसा प्यार (प्यार ही नहीं दैवी सम्पत्ति भी।) देने के लिए तैयार है। इस प्रकार, उस पहली ही मुलाकात में डॉक्टर साहब के मन में यह तो निश्चय हो गया हुआ ही लगता था कि कम से कम उनके ऑपरेशन के समय अथवा उससे पूर्व तो वह जीवन में पहली बार सिगरेट नहीं पियेंगे। फिर, ऑपरेशन के बाद तो लोग फीस देते ही हैं परंतु डॉक्टर साहब को तो पहले ही बाबा से स्नेह भरी टोली (प्रसाद) मिल गई। जिसे पाकर उसे अवश्य लगा होगा कि इस दुनिया के बाजार में सौदाबाजी तो सब करते हैं। लेकिन ये बाबा तो कोई ऐसे अलौकिक बाबा हैं कि जिनका हर कार्य-कलाप नि:स्वार्थ स्नेह वाला है।

6. अस्पताल में ईश्वरीय संदेश

अब बहुत से लोग बाबा से मिलने आने लगे थे। गोया अस्पताल में भी ईश्ववरीय संदेश की सेवा चालू हो गई थी। अस्पताल में अन्य सभी रोगियों के कानों में भी ये समाचार पहुँच चुका था कि फलाँ नम्बर कमरे में कोई महात्मा जी आए हुए हैं। उन रोगियों से मिलने के लिये जो उनके मित्र सम्बन्धी आते ये सूचना उन्हें भी मिल जाती। कई लोग इस बात के लिए प्रार्थना करते कि उन्हें बाबा के दर्शन करने का सुअवसर दिया जाय। अस्पताल की नर्सो के मन में भी उत्सुकता बनी रहती कि कम से कम झांक कर बाबा को देख तो लिया जाय। अलौकिक शान्ति से युक्त श्वेत वस्त्रधारी बाबा के मुस्कुराते चेहरे को देखकर सबके मन में ये संदेह हो जाता कि ये अस्वस्थ हैं भी ? गोया उनके मन व उनके कान एक दूसरे की बात को न मानते। बाबा उन नर्सो को भी 'बच्ची, मीठी बच्ची, अथवा कई बार तो 'बच्चे' ऐसा कहकर बुलाते और उन्हें प्रसाद भी देते। सबका मन यही करता कि बाबा सदा यही रहें और इनसे किसी प्रकार बिछुडना न हो। परंतु अवश्य ही उनकी अपनी बुद्धि अपने मन को डाँट देती होगी कि ऐसा तो सोचना भी आयुक्त है।

7. अपकारियों पर भी उपकार

बाबा से जो लोग मिलने आते, उनमें वो सिन्धी लोग भी थे जिन्होंने सिन्धी में ओम मण्डली के साथ स्नेह का नाता नहीं निभाया था और जो भारत आने के बाद भी इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के कार्य की महिमा सुनने के बावजूद भी कुछ संकोच वश और कुछ पूर्व मनोभाव के कारण बाबा से नहीं मिले थे। जब वो बाबा को देखते तो आश्चर्य चकित रह जाते। उनमें से प्राय: हर कोई सहसा यह कह उठता कि - 'उन्होंने जैसे बाबा को २५-३० वर्ष पहले देखा था, बाबा तो वैसे ही स्वस्थ मालूम होते हैं। न उनके शरीर में वृद्धावस्था कि कारण से कमर में कोई झुकाव है और न ही अन्य कोई ऐसे चिह्न है।' बाबा भी युक्ति संगत रीति से उन्हें ज्ञान के कुछ अनमोल रहस्य तो बता ही देते।

इस प्रकार, सम्पर्क में आने से उन्हें भी ईश्वरीय संदेश तो मिल ही गया। स्वयं बाबा ने भी उन्हें निमंत्रण तो दे ही दिया। शिवबाबा का मधुर परिचय तो उनके कानों में भी पड़ ही गया। बाबा की आकृति-प्रकृति को ही देखकर उन्हें इतना तो विचार आया ही होगा कि इस ईश्वरीय विद्यालय में जीवन सतोगुणी बनाया जाता है। फिर, ये भी देखने में आया कि मुम्बई नगर की धरनी पर बाबा के चरण पडने के बाद ईश्वरीय सेवा का कार्य उन्नति को पाने लगा, गोया बाबा जिस सर्विस के अर्थ मुम्बई आये थे, वह दिव्य प्रयोजन भी सफल ही रहा।

8. सभी को अवनिाशी ज्ञान रत्नों की सौगात

यों बाबा जैसे ही अस्पताल में पहुँचे थे तो बाबा ने यह निर्देश भी दे दिया था कि हिन्दी और इंग्लिश में जल्दी से किताबें छपवा दी जायें ताकि बाबा अविनाशी ज्ञान रत्नों की सौगात भी डॉक्टरों, नर्सो और रोगियों को दे सकें। बाबा के इस आदेशानुसार हिन्दी और अंग्रेजी में बडी शीघ्रता से दो पुस्तकें छपवा दी गई थी। और बाबा के संकल्प के अनुसार उनका नाम भी -'अविनाशी ज्ञान रत्न' और अंग्रेजी में 'इम्पेरीशेबल ट्रेजर ऑफ गाडली नॉलेज'। बाबा ने सभी को विदा होने से पहले ये ज्ञान खजाना और प्रसाद दिल खोलकर बाँटा था।

इसी प्रसंग में यह बात देना भी जरूरी होगा कि जब बाबा का ऑपरेशन था, तब डॉक्टर ने यह कह दिया कि ऑपरेशन के बाद बाबा को रक्त देना जरूरी होगा परंतु बाबा को जब यह मालूम हुआ तो बाबा ने इसके लिये मना कर दिया था क्योंकि बाबा अब इस प्रभु अर्पित शरीर में से किसी भी देह अभिमानी व्यक्ति के रक्त का समावेश करवाना ठीक नहीं मानते थे। उन्हीं दिनों संतरी बहन भी बाबा के साथ ही गई हुई थी। और उन्होंने शिवबाबा को ध्यानावस्था में ये संदेश दिया। तब शिवबाबा ने उनके द्वारा ये संदेश भेज दिया कि - 'मेरे सकार रथ को कहना कि मैं स्वयं ही उस रक्त का शुद्धिकरण करुँगा, और इसलिए, वह इस बात को स्वीकार कर लें।' तब साकार बाबा ने यह बात मान ली थी।

इधर बाबा का जब ऑपरेशन हो रहा था तब सारे ऑपरेशन के दौरान संतरी बहन एक अलग कमरे में बैठी हुई सारे ऑपरेशन को देख रही थी और शिवबाबा उस रक्त का किस प्रकार शुद्धिकारण कर रहे हैं, वह दृश्य भी उन्हें भासित हो रहा था। इसी प्रकार, ब्रह्माकुमारी पुष्पशान्ता जी भी ध्यानस्थ होकर ऑपरेशन सम्बन्धी दृश्य देख रही थी। उधर कानपूर में ब्रह्माकुमारी सती बहन भी तथा अन्य स्थानों पर अन्य 'संदेश पुत्री' बहनें भी ध्यान मग्न होकर इस दृश्य का साक्षातकार कर रही थी। ऐसे ही मधुबन में प्रतिदिन 'संदेश पुत्री' ब्रह्माकुमारी बहन बाबा के संदेश ले आती और प्रतिदिन बम्बई से समाचार का पत्र भी आया करता था। साकार रूप में यज्ञ माता सरस्वती सभी वत्सों को ज्ञान लोरी देती रही ओर हर प्रकार से सभी आध्यात्मिक उन्नति के कार्य को सुचारु रूप से चलाती रही। फिर, अभी कुछ ही दिन के बाद अब तो स्वयं बाबा के हाथों से लिखे पत्र भी आते थे। इसलिए सभी ज्ञान-विज्ञान द्वारा आध्यात्मिक पथ पर आगे बढ रहे थे और आखिर वो दिन भी आ पहुँचा जब बाबा स्वयं भी आ पधारे और फिर से यज्ञ में ज्ञान सितारों की वही रिम-झिम होने लगी।

भोलेनाथ के भण्डारे की 'भोली भण्डारी' का अलौकिक अनुभव

- भोली दादी, मधुवन

यूँ तो भगवान के सभी बच्चे अति महान हैं और कई उनकें पूर्णिमा के चन्द्र-सी छटा बिखेर रहे हैं परंतु त्याग की साक्षात् देवी भोली दादी की दिव्यता भी कम शोभनीक नहीं हैं। उनकी महान समर्पणमयता और सरल जीवन की मुस्कुराहट आत्माओं पर अमिट छाप छोड देती है। जिनके मन को मान, शान की कामना छू नहीं पाती, उन्हीं के भावों में उनका अनुभव इस प्रकार है:-

जब में १३ वर्ष की थी तो करांची में 'ओम मण्डली' तूफान की तरह बहु चर्चित थी। कोई उसे शान्ति का स्थान कह कर उससे चिपक जाना चाहता था और कोई 'घर बिगाडने वाली मण्डली' कह कर कुप्रचार में रत रहता था।

इस कम आयु में ही मेरी शादी एक सम्पन्न परिवार में हो चूकी थी। परंतु मेरे ससुराल वाले दहेज की कमी के कारण मुझे बहुत तंग करते थे। मुझ से बहुत काम कराते थे और प्रथम वर्ष में ही मेरा जीवन अशान्ति की चरम सीमा पर पहुँच चुका था। मैं शान्ति के लिए रोज लक्ष्मी-नारायण के मन्दिर में जाती थी। उसी समय मेरी भेंट मंदिर में ही मेरी चचेरी बहन से हुई और उसने मेरी दु:खभरी कहानी सुनकर मुझे ओम मण्डली से परिचित कराया। उन्होंने कहा कि वहाँ 'ओम राधे' इतना सुन्दर भजन गाती है जो मन शान्ति की तरंगों से ओत-प्रोत हो जाता है।

मैं ममा का भजन सुनने वहाँ गई। सुन्दर स्वरों से निकलती गीत की लाइनों ... 'मैंने ओम मण्डली में क्या देखा' ने मेरे मन को वैराग्य से पोत डाला और मेरा मन शान्ति के सागर में डूब गया। तब ओम मण्डली का सत्संग ओम राधा (ममा) ही कराती थी। मुझे घ्यानी बहन के योग कराने से बहुत चैन मिला और मैंने निर्णय कर लिया कि 'मेरे शेष जीवन की घडियाँ अब यहीं बीतेगी।'

परंतु जैसे ही मेरे ससुराल वालों को मेरे इस ईश्वरीय आकर्षण का पता लगा तो उन्हों ने कटु वचन का प्रहार बाबा के चरित्र पर करना प्रारम्भ किया और वे मुझे वहाँ जाने से रोकने लगे और अनेक सुख-सुविधाओं का प्रलोभन देने लगे। परंतु मेरा मन तो प्रभु प्रेम में रंग चुका था। यह देखकर वे मुझे करांची से हैदराबाद ले गये। ताकि मेरा सम्पर्क टूट सके और तब मैं तीन वर्ष वहीं पर रही।

हैदराबाद में ही मेरे माँ-बाप रहते थे। वहाँ पर मेरा मन बाबा से मिलने के लिए बहुत ही चिंतीत रहता था। तो एक दिन जबकि सभी मंदिर में गये हुए थे, मैं वहाँ से निकलकर अपने माँ-बाप के पास पहुँची। मैंने अपनी दु:खभरी गाथा अपनी माँ को सुनाई। मेरी करुण कहानी पर मेरी माँ के नयन भर आये और उन्होंने मुझे धैर्य दिलाते, दोबारा वहाँ न भेजने का आश्वासन दिलाया।

परंतु तब ही मेरी सास पाँच माताओं के साथ वहाँ आ पहुँची और उन्हों ने मुझ से अच्छा व्यवहार करने का वचन दिया और मेरी माँ के आगे हाथ जोडकर मुझे वापिस ले गई। परंतु मेरा मन वहाँ न लगा। मैं फिर माँ के पास आ गई और फिर कभी ससुराल नहीं गई।

मुझे याद है, तब मैं हैदराबाद से तडपन भरे पत्र बाबा को लिखती थी कि 'बाबा आप मुझे कब बुलाओगे, मेरी इस नैया के खिवैया तो आप ही है। अगर आप मुझे शरण न देंगे तो मैं मीन बिन नीर की तरह मर जाऊँगी।' और बाबा के बहुत ही धैर्य व सान्तवना देने वाले पत्र मुझे मिलते थे। तब वे पत्र ही मेरे सहारे थे।

फिर तो एक रात १ २ बजे की गाडी से मैं अपने माता-पिता सहित बाबा के पास आ गई और रोती-रोती बाबा से मिली। मैंने कहा था - 'बाबा, मैं कहाँ जाऊँ... आप मेरी रक्षा करो।' मेरे आलाप सुनकर उस दया के सागर का कंठ करुणा से भर आया और देखने वालों ने उनके नयनों में चमकते दो मोती देखे थे जिससे मेरे भविष्य की तस्वीर घडी गई थी।

बाबा ने मेरे लिए एक अलग मकान लिया और मैं अपने माँ बाप के साथ वहाँ रहने लगी। मैं रोज सिलाई सीखने व ज्ञान श्रवण करने ओम मण्डली में जाती थी। अब मेरे जीवन की कलियाँ खिलने लगी थी। तब मुझे एक छोटी-सी बच्ची भी थी, जो अभी मधुबन में ही 'मीरा' के नाम से जानी जाती है।

परंतु अभी मेरा कर्म खाता समाप्त नहीं हुआ था। एक दिन प्रात: ४ बजे मेरा पति ४ व्यक्तियों सहित मकान में घुस आया। मेरी गोद में मीरा थी, उन्हों ने मीरा को दूर फेंका, मेरे माँ-बाप को पीटा और मुझे सिढियों से घसीटते हुए नीचे ले आये और कार में डालकर अपने घर ले गये। तब मेरे कपडे फट चुके थे, सिर से खून बह रहा था और मैं बाबा-बाबा कहकर चिल्ला रही थी। तब सुबह के ६ बजे थे। वहाँ मेरे पति ने मुझे बहुत प्रलोभन दिये। इधर मेरी माँ पुलिस में खबर कर आई थी। तो लगभग १ ० बजे वहाँ का सूबेदार वहाँ आ पहुँचा। वे सभी जाँच करने के बाद घोडे गाडी में बिठाकर मुझे कोर्ट ले गये और मुझसे सारी बातें पूछी। फिर तो केस चला और पति ने कई उल्टी-सुल्टी बातें की। केस ३ वर्ष तक चलकर मेरे ही हक में समाप्त हुआ। तब मैंने अनुभव किया कि 'शिवबाबा मेरे द्वारा ऐसी-ऐसी बातें जज को कहलवाता था, जिनका मुझे ज्ञान ही नहीं था।'

इस प्रकार मेरे गम के बादल हट गये और जीवन में सुख-शान्ति का सूर्य उदित हुआ। मुझे सेवा में बहुत रुचि थी। बाबा ने मुझे ३ ५ छोटे बच्चे सम्भालने को दिये। उनकी पालना मैं कई वर्षो तक माँ की तरह करती रही।

मुझे बाबा का स्नेह व मस्तक का तेज बहुत आकर्षित करता था। मुझे बाबा में पूर्ण निश्चय था। मैं सोचती थी कि 'मैं कितनी सौभाग्यशाली हूँ मैं जो भगवान के साथ रहती हूँ, कानों से उनके मधुर बोल सुनती हूँ। और नयनों से उनका हर चरित्र देखती हूँ।'

फिर मुझे ममा की सेवा का अवसर मिला और फिर कुछ समय के बाद भण्डारे में भोजन बनाने की सेवा। तब मैं ३ ५ ० भाई-बहनों का भोजन बनाया करती थी और कुछ समय बाद पूरे भण्डारे की जिम्मेदारी ही बाबा ने मुझे दे दी। और साथ ही साथ 'अथक भव' का वरदान भी दिया।

भोली दादी ने भाव विभोर होकर बताया कि जब मैं अकेली होती हूँ तो सोचती हूँ कि कैसे हमारे जीवन के ७ ० वर्ष बीत गये। जीवन में सब कुछ देखा। भगवान का असीम प्यार भी देखा और शिक्षाओं का श्रृंगार भी देखा। बाबा की अनुठी मस्ती भी देखी और राजाई शान भी...।

बाबा रोज किचन (रसोई) में दो बार आते थे। मैंने बाबा को कहा हुआ था कि 'आप किचन में रोज चक्कर लगाने जरूर आओ। बाबा रोज आकर मेरी पीठ थप-थपाते थे, तो मेरे नयन भर आते थे। और सारी थकान बाबा उन हस्तों से खींच लेते थे। बाबा मुझे वरदान के दो बोल भी रोज बोलते थे।'

कभी बाबा आकर कहते थे - 'बच्ची बहुत सेवा करती है, 'अमर रहो बच्ची'।' कभी कहते थे - 'तुम तो अखण्ड ज्योति हो' क्योंकि मैं बहुत कम सोती थी। कभी कहते थे - 'तुम अथक हो, ऑल राउण्डर हो।' मेरा बाबा से असीम प्यार हो चुका था। मैं इन्तजार किया करती थी कि बाबा कब आये। बाबा मुझे कहा करते थे - 'बच्ची, जब भी आवश्यकता हो तो इसी किचन के वस्त्रों में मेरे पास आ जाया करो।' जब कोई मददगार नहीं होता था तो बाबा कहते थे कि 'बच्ची, मैं मदद करुँ...?' बाबा कहते थे कि 'बच्ची, अगर बाबा सोया भी हो तो तुम आकर उठा दिया करो।' ऐसे थे हमारे जान से प्यारे बाबा...।

साकार में अन्तिम दिन १८ जनवरी को भी बाबा किचन में आये थे और कहा था - 'बच्ची, मैं आया हूँ ऐसे नहीं कहना कि बाबा आया नहीं।' मुझे क्या पता था कि ये बाबा के आखरी बोल होंगे और दोबारा वो मन को मोह लेने वाली आवाज सुनाई नहीं देगी। परंतु आज भी अव्यक्त रूप में बाबा रोज वैसे ही किचन में चक्कर लगाते नजर आते हैं।

बाबा के अव्यक्त होने पर मैंने अपने को अकेला महसूस अवश्य किया था और काफी शोक हुआ था। मेरा मन रोता था कि 'बाबा के बिना मेरा जीवन अब केसे चलेगा।' एक दिन की बात है - मेरी तबियत इसी चिन्ता में बहुत खराब हो चुकी थी और मुझे अहमदाबाद भेजा जा रहा था। उसी दिन अव्यक्त बाबा आये थे। बाबा ने मुझे बुलाकर अपने पास बिठाकर मेरे शरीर पर हाथ फेरा था और कहा था - 'बच्ची, तुम मायानगरी में नहीं जाना, बाबा तुम्हारे लिए वतन से दवाई भेजेंगे।' बाबा ने तब मुझे बहुत प्यार किया। देखने वालों के मन पर पुराणों की गाथा उभर आई थी और मैं बाबा की दृष्टि पाकर ही स्वस्थ हो गई थी। और मैं अहमदाबाद नहीं गई थी।कुछ प्रश्नों का उत्तर भोली दादी ने इस प्रकार दिया:-

पश्न:- आप पुरुषार्थ में किन-किन बातों पर ध्यान रखती हों?

उत्तर:- १. मेरे द्वारा किसी को दु:ख न हो। २. बाबा के भण्डारे से सभी सन्तुष्ट होकर जाएँ। ३. मेरे मुख से कभी 'ना' न निकले। ४. यज्ञ का थोडा भी नुकसान न हो।

पश्न:- योग के लिए आप क्या करती हो?

उत्तर:- बाबा से तो मेरा अथाह प्यार है और मैं बाबा के कमरे में भी जाती हूँ और ध्यान रखती हूँ कि बाबा को याद करती रहूँ।

प्रश्न:- आजकल आपका कोई विशेष पुरुषार्थ?

उत्तर:- हाँ, उपराम वृत्ति। स्वत: ही मन उपराम होता जा रहा है। मैं किसी भी बात को जल्द ही समाप्त कर देती हूँ।

ईश्वरीय सेवा की धूम

- दादी शान्तामणी, शान्तिवन

नवम्बर १९५७ में देहली में लाल किले में एक 'विश्व धर्म सम्मेलन' होने का जब समाचार मिला तो बाबा ने इस अवसर पर देश-विदेश से आये धार्मिक नेताओं को, इसमें सम्मिलित होने वाले सरकारी मन्त्रीयों को तथा समस्त जनता को ईश्वरीय संदेश देने के लिये कहा। बाबा के मन में सर्व आत्माओं के प्रति एसी शुभ भावना थी कि किसी भी प्रकार सभी का कल्याण हो जाय। बाबा कहा करते कि - 'पिता तो सदा चाहता है कि उसके सभी बच्चे चरित्रवान हो, योग्य हो एवं अच्छे-अच्छे पदों पर आसीन हो। इसी प्रकार, बाबा की भी सदा यही इच्छा रहती है कि सभी मनुष्य आत्माएँ जिनमें कई ज्ञानवान तथा बहुत से ज्ञान रहित हैं, किसी तरह और किसी प्रकार भी पवित्र बनकर देवपद प्राप्त कर लें।' अत: बाबा का रात-दिन ऐसी योजनाओं पर विचार चलता ही रहता है कि सारी सृष्टि में बसे मनुष्यों को परमपिता शिव के अवतरण की खुशखबरी कैसे मिले? यह तो हम मनुष्यात्माओं, जिन्हें कि उस परमपिता ने आकर जगाया है, का कर्तव्य है कि हम दूसरों को भी यह शुभ सूचना दें कि सम्पूर्ण पवित्रता, सुख, शान्ति की विरासत देने वाला पिता आ चुका है और उसने हम मनुषात्माओं के लिये ज्ञान-यज्ञ रचा है जिस की अग्नि में हमें अपने-अपने मनोविकारों की आहुति डालनी है।

1. सभी को इस यज्ञ में पधारने के लिए निमंत्रण

बाबा कहते है कि - 'जब पिता कोई यज्ञ रचता है अथवा कोई शुभ उत्सव मनाता है तो वह अपने सभी बच्चों को निमंत्रण देता हे ताकि वे भी उस उत्सव में सम्मिलित हो। वरना अंत में उलाहना देंगे कि हमारे पिता ने यह उत्सव किया और हमें बुलाया भी नहीं तथा उसकी सूचना भी नहीं दी। अत: अब सारी सृष्टि की मनुष्यात्माएँ जो कि पारलौकिक शिव बाबा की और मुझ अलौकिक पिता ब्रह्मा की संतान हैं, उनका भी तो अलौकिक कर्तव्य है कि वे सभी मनुष्यात्माओं को यह शुभ संदेश दें कि अब ज्ञान-यज्ञ रचा है।' अत: बाबा ने निर्देश दिया कि विश्व धर्म सम्मेलन के अवसर पर 'ईश्वरीय निमंत्रण तथा सदा शुभ बधाई' - इस शीर्षक से पेम्फलेट फोल्डर इत्यादि

छपवाकर सभी आत्माओं को शिव बाबा की ओर से दिये जायें। बाबा ने यह भी कहा कि - 'यह निमंत्रण पत्र इत्यादि बहुत ही सुन्दर रूप से छपे हों और हरेक को दिये जाय।'

2. कापारी (वेहद) खुशी

सभी मनुष्यात्माओं को ईश्वरीय संदेश देने का उत्साह बाबा में सदा इतना बना रहता कि उनके सम्पर्क में आने से हरेक को इस सेवा कार्य में लगने की लगन लग जाती। शिवबाबा के अवतरण एवं मिलन की खुशी भी बाबा को सदा इतनी पराकाष्ठा की रहती कि बाबा के मन, वचन एवं कर्मों में इस खुशी का इतना प्रभाव होता कि अशान्त से अशान्त आत्मा भी बाबा के निकटता से अपार खुशी महसूस करती। बहुत बार बाबा यज्ञ वत्सों से पूछा भी करते - 'बच्चे, खुशी का पारा तो चढा हुआ है ना ? देखो, हमें त्रिलोकी नाथ, त्रिकाल दर्शी, त्रिमूर्ति, सर्वशक्तिमान शिवबाबा मिले हैं और वह हमें निरंतर २५०० वर्षो के लिये स्वर्गीय राज्य-भाग्य के अधिकारी बना रहे हैं। अत: हमें एडी से चोटी तक खुशी का पारा चढा रहना चाहिए अथवा हमें कापारी(बेहद) खुशी होनी चाहिए। वत्सों, हमें सतयुग में दैवी राज्य भाग्य पाकर भी ऐसी खुशी न होगी जो कि अभी शिवबाबा के मिलन से है।'

देखो तो भक्ति मार्ग में जिसे जन्म-जन्मांतर ढूँढा जिसके लिये इतने व्रत, तप, उपवास, हठ-क्रिया इत्यादि की परंतु जो फिर भी नहीं मिला। अब कैसे अनायास ही उसने हमें अपना परिचय दिया है, हमें अपनाया है और अपनाकर हमें सहज रीति ही अपनी सम्पूर्ण दिव्य विरासत दे रहा है। बच्चे, यदि सोचा जाय तो यह कोई कम बात नहीं है। कई बार सहज मिली वस्तु का मनुष्य के मन में उतना मूल्य नहीं होता जितना कि होना चाहिए। अत: इस अद्भुत गुप्त खजाने को सहज ही पाकर कहीं ऐसी गफलत न करना।

3. पाण्डव भवन में सदा खुशी के नगाडे वजें

कई बार बाबा कहा करते - 'वत्सों, जब किसी के घर शादी का मौका होता है तो उनके घर में ढोल या बैंड बजते हैं। अब बाबा तो कई बार सोचता है कि यहाँ २४ ही धण्टें खुशी के नगारे बजते रहें क्योंकि यहाँ तो आत्माओं की अमरनाथ परमात्मा शिव से सगाई (योग) अथवा शादी (खुशी की मुलाकात) हो रही है। जब यहाँ प्रति दिन २४ घण्टे नगारे बजेंगे तो लोग आश्चर्यान्वित होकर पूछेंगे कि क्या बात है, यहाँ रोज ही नगारे क्यों बजते हैं ? यहाँ ऐसी कौन-सी खुशी का अवसर है ? तब प्रश्न कर्ताओं को बताया जाये कि यहाँ आत्माओं की परमात्मा से सगाई होती है। इससे बढकर तो अन्य कोई खुशी की बात नहीं हो सकती।'

इस प्रकार बाबा खुशी और उत्साह के एक साकार पावर हाऊस थे। वे दूसरों में भी ईश्वरीय सेवा के लिये खूब उत्साह भरते रहते थे।

4. सम्मेलन के अवसर पर वावा का देहली पधारना

अब देहली में जो बडे पैमाने पर धर्म सम्मेलन होने वाला था, उस अवसर पर बाबा स्वयं उपस्थित होकर ईश्वरीय सेवा का ढंग सिखाना चाहते थे। अत: उन दिनों बाबा देहली के अपने निर्देश से और उनकी अपनी ही देख-रेख में सुनहरी और रुपहले रंग में कई हजारों की संख्या में फोल्डर्स 'ईश्वरीय निमंत्रण तथा सदा शुभ-बधाई' शीर्षक से छपवाये गये। वे फोल्डर इतने आकर्षक थे कि उन्हें लेकर किसी को भी फेंक देने का मन नहीं होता था बल्कि उसके सौन्दर्य के कारण भी वह उसको अपनी अमूल्य प्राप्ति मानकर सुरक्षित रखना चाहता था।

5. महादानी और कल्याणी

इसी अवसर पर बाबा ने बडे आकार के रंगीन चित्र भी छपवाये थे जिसमें कि रचयिता (परमपिता शिव) और उनकी रचना (सृष्टि चक्र) का चित्र भी छपा था। इसमें शिवबाबा को त्रिमूर्ति के रूप में दिखाया गया था। बाबा का निर्देश था कि हरेक को ये निमंत्रण तथा चित्र परमपिता शिव से सौगात के रूप में (मूल्य लिये बिना) ही दिया जाय। विशेष कर विदेशियों को जो कि दूर-दूर से काफी खर्च करके तथा भारत को एक प्राचीन एवं आध्यात्मिक देश मानकर यहाँ आये हैं और जिनका बार-बार यहाँ आना कठिन है, उन्हें तो अवश्य ही ये मिलने चाहिए। बाबा की इस सम्मति के अनुसार प्राय: सभी को ये दिये गये और इन्हें पाकर सभी बहुत ही खुश हुए। इस प्रकार पहली बार देहली सेवा स्थल पर बाबा ने वरद रूप से ईश्वरीय सेवा करना तथा महादानी और कल्याणकारी बनकर कर्तव्य करना सिखाया। बाबा जिस प्रकार ज्ञान सेवा के तरीके बताते, सभी के प्रति करुणा एवं प्रेम भरे मन से सभी को अनमोल ज्ञान रत्नों की सौगात देने के लिये उत्साह भरते, वह देखते ही बनता था और उससे बहुत प्रेरणा मिलती थी।

सबसे गुण लेने की शिक्षा, जो बाबा ने दी

- दादी धैर्य पुष्पा, नई दिल्ली

श्रीमद्भागवत् में दत्तात्रेय के बारे में यह लिखा है कि - 'उसने चौबीस वस्तुओं अथवा जीवों से गुण लिया था और उन गुणों के आधार पर उसने अपने जीवन को ज्ञान-निष्ठ, चित्त को शान्त औरवृत्ति को उपराम बनाया था।' आज भी लोग श्रीमद्भगवत् के ग्यारहवे स्कंध में जब यह पढते हैं कि दत्तात्रेय ने अमुक-अमुक वस्तु या जीव प्राणी से अमुक गुण लिया था तो वे बहुत ही खुश होते हैं। अच्छे गुणों को धारण करने की युक्तियाँ सुनकर धर्मपरायण लोगों को खुश होना एक स्वाभाविक बात है।

हम भी स्वयं को बहुत ही सौ-भाग्यशाली मानते हैं कि - 'बाबा ने हमें भी अनेकानेक वस्तुओं और जीव-प्राणियों से गुण लेने की सूझ दी।' यों तो उन्होंने हमारी मनोवृत्ति ही ऐसी बना दी की हम हरेक चीज अथवा व्यक्ति से गुण ही ग्रहण करें, परंतु फिर भी हम यहाँ संक्षेप में उल्लेख करेंगे कि बाबा ने किस-किस वस्तु, परिस्थिति, व्यक्ति अथवा जीव-प्राणियों से कया-क्या गुण लेने की बुद्धि हमें दी अथवा क्या-क्या अवगुण छोडने के लिये शिक्षा दी।

1. सागर से गम्भीरता आदि गुण

सागर :- जब हम करांची में थे तो बहुत बार बाबा के साथ हम सागर के किनारे पर जाकर बैठते थे। तब बाबा मधुर और स्नेह युक्त शब्दों में कहते - 'बच्चे, सागर की लहरें देख रहे हो ? देखो, सागर की लहरें कैसे आप बच्चों के पास तक आती है और फिर वापस चली जाती हैं। आप भी तो ज्ञानसागर परमपिता परमात्मा के बच्चे हैं, आप इस सागर से यह गुण ग्रहण करो कि अगर आप के मन में कभी माया की लहरें उठें तो आप भी ऐसे ही वापस लौटा दिया करो।'

फिर बाबा कहते - 'बच्चे, देखो लोग सागर में किचडा अथवा कुडा डालते हैं तो वह सागर के अंदर नहीं जाता बल्कि ऊपर-ऊपर ही रह जाता है। इस सागर की तरह ही आप बच्चों का भी स्वभाव होना चाहिए। आप बच्चों के मन में अंदर भी कोई किचडा नहीं ठहरना चाहिए।'

गोताखोर :- कई बार बाबा गोताखोरों की ओर इशारा करते हुए कहते - 'बच्चे, देखो, गोताखोर(मरजीवा) सागर में काफी नीचे जाकर हीरे, मोती, रत्न, लाल आदि ले आते हैं। इनकी तरह आप भी विचार-सागर का मंथन करो। आप भी ज्ञानसागर शिवबाबा के ज्ञान की गहराई में जाओ तो आप को भी बहुत ही अनमोल रत्न, हीरे और मोती मिलेंगे।' इस प्रकार, बाबा हमें गुण ग्राहक बनने की ट्रेनिंग देते रहते। फिर हमें कुछ समय आत्मा के स्वरूप में और भीतर में धैर्यवत भी हैं। भले ही इसके ऊपर लहरें हैं परंतु नीचे देखा जाय तो वह सदा शान्त होता है। आप भी ऐसे ही शान्त तथा धैर्यवत हो जाओ।

सागर के किनारे पर पडे शालिग्रामों की ओर इशारा करते हुए बाबा कहते - 'यह देखो, पानी की लहरों और छींटों से पत्थर भी घिस-घिस कर पूजनीय शालिग्राम हो गये हैं, ऐसे ही आप भी कठिनाईयों को सहन करेंगे और ज्ञानसागर की लहरों में लहरायेंगे तो एक दिन आप भी ऐसे ही साफ और पूजनीय अर्थात पावन बन जाओगे।'

2. प्रकृति के तत्त्वों से गुण

१) अग्नि :- वास्तव में बाबा हरेक तत्त्व से कोई-न-कोई गुण ग्रहण करने की शिक्षा देते। वे कहते - 'बच्चे, अग्नि में तपाने से ही सोने को शुद्ध किया जा सकता है। अग्नि सब किचडे को जलाकर भस्म कर देती है। इसी प्रकार आत्मा को पवित्र बनने के लिये योग ही अग्नि है। शिवबाबा की याद से आत्मा का जन्म-जन्मांतर का मैल धुल सकता है।'

२) वायु :- वायु, का दृष्टांत देते हुए वे कहते - 'मीठे बच्चे, योगाभ्यास करने से आत्मा में शरीर भान नहीं रहता और उससे पापों का बोझ भी उतरता है। अत: योगयुक्त होने से मनुष्य स्वयं को वायु के समान हल्का अनुभव करता है, उसे थकावट महसूस नहीं होती, सुस्ती नहीं आती और शरीर की स्थूलता नहीं खींच सकती।' फिर भी बाबा कहते - 'बच्चे, बाहर में बेहद खुली हवा में जाने से दिल को बहुत फरहत (खुशी और ताजगी) महसूस होती है, अंदर बन्द कमरे में ऐसा लगता है, जैसे कि हम गर्भ जेल में बैठे हों। इसी प्रकार, जो बच्चा अपनी बुद्धि को बेहद में टिकाता है, अर्थात् जो संकुचित विचार वाला न होकर विशाल बुद्धि वाला होता है, सभी से मिलता-जुलता और उच्च विचार करता है, वह भी सदा ताजा और खुश रहता है। जो हद में बैठता है, अर्थात् छोटे ही दायरे में स्वयं को सीमित रखता है, वह भी मूँझा हुआ (उलझा हुआ) और उदास-सा लगता है।'

३) जल :- जल में वस्तुओं को धोने और शुद्ध करने का जो गुण है, उसकी चर्चा करते हुए बाबा कहते - 'बच्चे, जल की गंगा में स्नान करने से शरीर स्वच्छ होता है, परंतु आत्मा को धोने के लिये तो ज्ञान गंगा में स्नान करने की आवश्यकता है। जो लोग सोचते हैं कि जल गंगा में स्नान करने से पाप धुल जाते हैं, वे भूल में हैं। बच्चे, जैसे आप शरीर को प्रतिदिन स्नान कराते हो, वैसे ही आत्मा

के लिए भी ज्ञान स्नान किया करो। देखो, जल एक जगह पर ठहरे रहने से दुर्गन्ध पूर्ण हो जाता है और सर्विसएबल (उपयोगी) नहीं रहता। इस बात को ध्यान में रखकर आप ज्ञान-गंगाओं को भी एक जगह बैठ नहीं जाना चाहिये बल्कि जगह-जगह जाकर दूसरों को ज्ञान जल से पावन करने की सेवा करनी चाहिए।'

चन्द्र :- चन्द्रमा के शीतलता रूपी गुण की और ध्यान आकर्षित करते हुए बाबा कहते कि - 'आप भी इसके समान शीतल बनो और १६ कला पवित्र बनो। अब अपनी ज्ञान और पवित्रता की कलाओं को बढाकर पूर्णमासी की स्टेज तक ले जाओ।'

इस प्रकार एक-एक तत्त्व से गुण लेने का पाठ पढ़ाते हुए बाबा कहते - 'बच्चे, अब सभी तत्त्व भी तमोगुणी हो गये हैं क्योंकि सभी मनुष्य तमोप्रधान बन गये हैं। इसलिये अब ये तत्त्व भी नियम को छोड कर मनुष्य को दु:ख देने वाले बन गये हैं। ये बिगडे हुए तत्त्व भी बाढ़, भूकम्प, तूफान, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अकाल अदि-आदि के रूप में भविष्य में सृष्टि के महाविनाश के निमित्त बनेंगे और मनुष्यात्माओं को घोर संकटों से घेरेंगे। अब अगर मनुष्य सुधर जाये तो ये भी सुधर जायेंगे। ये सभी मनुष्य के चरित्र पर निर्भर हैं। अत: अब आप पहले अपनी कर्मेन्द्रियों को वश करो और योग बल द्वारा इनकी भी सेवा करो, योग से ही सारी सृष्टि सतोप्रधान बनती है। बच्चे, आज अज्ञानी लोग तो सूर्य नमस्कार, वृक्ष-पूजा, भूमि-पूजा नक्षत्र-पूजा आदि-आदि के रूप में तत्त्व पूजा अथवा भूत-पूजा करने लग गये हैं, वे एक परमपिता परमात्मा शिव को भूल गये हैं। अब, आप इन सबको छोडकर एक शिवबाबा को याद करो तो ये सभी तत्त्व भी वशीभूत हो जायेंगे और सुख देने वाले हो जायेंगे।'

3. फूलों और फलों से गुण

बहुत बार बाबा फूलों के बगीचे में ले जाते। वहाँ खडे होकर बाबा उनको निहारते और उनकी सुगन्धि लेते। बाबा कहते - 'देखो, फूल कितने पवित्र होते हैं। ये सब की सेवा करते हैं। पवित्रता और सेवा ये इनके दो मुख्य गुण हैं, इसलिये ही ये देवताओं पर चढ़ाये जाते हैं। देखो, इनकी तरह आप भी काँटों के बीच रहते हुए भी अपनी कोमलता, सुन्दरता और सुगन्धि को बनाये रखो। बच्चे, देखो जो भी इनके पास आता है उसे यह सुगन्धि से खुश करते तथा उसके मस्तिष्क को ताजा करते हैं। बच्चे, आप भी चेतन फूल हो, आप भी इनकी तरह सदा खिले रहो। शिवबाबा इस बगीचे का माली हैं। उसने ही आप को काँटे से फूल बनाया है। पहले आप काँटे थे, अर्थात् आप में काम, क्रोध आदि विकार थे और उनके कारण आप दूसरों को दु:ख देते थे। अब आप फूलों की तरह पवित्र बनो और दिव्य गुण रूपी सुगन्धि धारण करो और काँटा बनना छोड दो। अर्थात् दूसरों को दु:ख देना छोड दो। सबसे बडा काँटा है - काम का काँटा। यह जन्म-जन्मांतर दु:ख देता है। क्रोध का काँटा भी कम नहीं है। ये दो तो बहुत बडे काँटे हैं। आज सभी मनुष्य काँटे हैं, एक-दूसरे को दु:ख देने के निमित्त बने हुए हैं। यह कलियुगी दुनिया एक जंगल ही तो है, अब शिवबाबा आकर ज्ञान वर्षा से जंगल में मंगल कर रहे हैं। आप बच्चों की यह जो चेतन मानवीय फूलवाडी है, इसमें शिवबाबा जब आते हैं तो हरेक फूल की सुगन्धि लेते हैं। हरेक बच्चे में अलग-अलग प्रकार की सुगन्धि है।'

बाबा हरेक फूल का गुण बताते। बाबा कहते - 'देखो, **गुलाब** के फुल में यह गुण हैं कि उसकी सुगन्धि बहुत लुभाने वाली होती है। उसकी बनावट भी अच्छी होती है, और रंग-ढंग भी। आप भी गुलाब की तरह खुश्बूदार बनो और सदा खिले हुए अर्थात् हर्षितमुख रहो। **कमल** फूल में यह गुण है कि वह जल में अथवा दल-दल में रहते हुए भी उनसे न्यारा और अलिप्त रहता है। उसका यह गुण आपको भी धारण करना चाहिए।' **सूर्यमुखी** में यह गुण है कि - 'जिधर-जिधर सूर्य होता है, उधर ही वह भी अपना मुख फेर लेता है। उसके इस गुण को आप भी जीवन में उतारो। आप का मन भी सदा ज्ञान-सूर्य परमपिता परमात्मा ही की ओर लगा रहना चाहिये। आपको चाहिये कि आप सदा सूर्यमुखी हो रहो, अर्थात् एक शिवबाबा से ही राय (निर्देश) लो और ब्रह्माबाबा के ही आचरण को देखो (उसका ही का अनुकरण करो)।' **रात की रानी** में यह गुण है कि 'वह फूल रात को बहुत सुगन्धि देता है। आप भी इस कलियुग रूपी रात्रि में सबको दिव्य गुणों की सुगन्धि दो।' इस प्रकार बाबा **चमेली, चम्पा, मोतिया (मोगरो)** आदि के गुण बताते। वे कहते थे कि - 'भले ही ये फूल छोटे हैं परंतु इनमें खुश्बू अच्छी है।' फिर बाबा **अक(आकडो)** के फूल का उदाहरण देते हुए कहते - 'आप अक की तरह कडवे मत बनो। देखो, लोग शिवबाबा पर अक के फूल चढ़ाते हैं। आपके स्वभाव में भी जो कडवा-पन अथवा कटुता है, वह शिवबाबा के हवाले कर दो, उसे भेंट कर दो।' **छुई-मुई (शर्मबूटी, लजामणी)** अथवा लाजवन्ती का उदाहरण देते हुए बाबा कहते - 'छूई-मुई को हाथ लगाते ही वह मुरझा जोती है अथवा सिकुड जाती है, आप को वैसा नहीं बनना चाहिये। ऐसा नहीं होना चहिये कि कोई आपको कडवी बात कहे ओर आपके चेहरे पर मुरझाहट आ जाये।' **दूह (धतूरो)** के फूल से उपमा करते हुए बाबा बताते - 'दूह का फूल रंग रूप या दिखावे की दृष्टि से तो अच्छा होता है परंतु उसमें सुगन्धि जरा भी नहीं होती। दूह के फूल जैसा आप न बनना अर्थात् आप ऐसा न बनना कि आप में दिव्य गुणों की सुगन्धि तो हो ही न, केवल दिखावा मात्र हो।'

फिर बाबा कहते कि - 'मैं यहाँ (पाण्डव भवन में) बगीचे में सभी प्रकार के फूल बनाऊँगा और जो भी बच्चे बाहर से यहाँ आयेंगे, उनसे पूछुँगा कि बताओ, आप छुई-मुई (शर्म बूटी), अक या दूह का फूल तो नहीं हो ? आप में कौन -से फूल का गुण हैं ? जिन बच्चों में दिव्य गुणों की सुगन्धि नहीं होगी अथवा जो कमल फूल के समान न्यारे और प्यारे बनकर नहीं रहते होंगे, उन्हें मेरे वचन सुनकर लज्जा आयेगी और वे गुण धारण करने का पुरुषार्थ करने लगेंगे।'

कई वत्स यदि बाबा को कभी फूलों की माला भेंट करते तो बाबा कहते - 'नहीं बच्चे, मुझे तो आप चेतन फूल अथवा मानव फूल (ह्युमन फूल) चाहिए जिन्हें मैं सतयुगी सृष्टि रूपी बगीचे में लगा सकूँ। बच्चे, साधु और महात्मा लोग ही जन्म-जन्मांतर आप आत्माओं से फूलों और पुष्प-मालाओं की भेट लेते आये हैं, परंतु मैं कोई साधु-सन्यासी नहीं हूँ, मैं तो आप सभी आत्माओं का पिता हूँ। मैं आप से फूल लेने नहीं, आप को फूल बनाने आया हूँ। परंतु मैं देखता हूँ कि कई बच्चे तो अभी तक काँटे से बदल कर कलियाँ बने हैं, अभी वे खिले नहीं है और अभी उनमें वह सुगन्धि नहीं है, जिससे कि वे दूसरों की सेवा कर सके। अभी तो स्वयं उनकी भी देख-रेख और सेवा करने की जरुरत है। अभी उन पर माली को पूरा ध्यान देने की जरुरत है वरना कई बच्चों को तो माया रूपी चिडिया बडा होने से पहले ही खा जाती हैं। बच्चे, बाप को गुलदस्ता देना चाहते हो तो उसके लिये यह पुरुषार्थ करो कि अन्य तो काँटे सम मनुष्य हैं उनको फूल बनाओ। फिर उनकी ज्ञान सेवा करके, हरेक में दिव्य गुणों की सुगन्धि भरकर उन्हें इकठ्ठा करके बाबा के पास ले आओ। उन्हें परस्पर प्रेम सूत्र में बाँध कर लाना ही गोया बाबा के पास मानवी फूलों का गुलदस्ता लाना है। ऐसा गुलदस्ता बाबा स्वीकार कर सकता है और उनकी सुगन्धि से खुश हो सकता है। मैं जानता हूँ कि उसमें भी सब तरह के फूल होंगे। कई तो फूल भी नहीं, हरे पत्ते ही होंगे। गुलदस्ते की वे शोभा होंगे। हरे पत्ते वे नर-नारी हैं जिनमें ज्ञान की कुछ तो हरियाली है परंतु उनमें दिव्यगुणों की सुगन्धि नहीं है और वे इस दैवी गुलदस्ते के बाहर-बाहर, दूर-दूर रहते हैं। अब आप स्वयं से पूछो कि आप फूल हैं या पत्तें ?'

इस प्रकार बाबा फलों का नाम ले-लेकर भी पवित्रता, दिव्यगुण रूपी सुगन्धि, माया से अलिप्तता आदि-आदि गुण हम बच्चों में भरते रहते। जिसमें ज्ञान का रस भर जाता, जो योग से पक जाता, बाबा उसे फल मानते। इसलिए बहुत बार बाबा पूछते - 'बताओ, आप कली हो, फूल हो या फल हो ? आप में कहाँ तक ज्ञान का रस, योग की मिठास अथवा परिपक्वता या पुष्प-सी सुगन्धि भरी हैं ?' फिर बाबा समझाते कि - 'सभी बच्चों को नम्र स्वभाव का भी होना चाहिए, जैसे कि फलों से लदा हुआ वृक्ष झुक जाता है ताकि लोग सहज ही फल को ले लेवें। यदि किसी में नम्रता नहीं है तो बाबा समझते है कि उसे अभी फल और फूल नहीं लगे बल्कि वह सूखा हुआ-सा वृक्ष है।'

जीव प्राणीयों से भी गुण ग्रहण करने तथा अवगुणों को छोडने की शिक्षा देते। बाबा **मोर और ढेल** (मोरनी) के सम्बन्ध को पवित्र बताते और यह भी बताया करते कि - 'श्री कृष्ण के मुकुट में जो मोर पँख है, वह वास्तव में पवित्रता का सूचक है। मोर ही वास्तव में राष्ट्र पक्षी बनाये जाने के योग्य है क्योंकि वह सतयुगी पवित्रता का प्रतीक है।' अत: बाबा कहते - 'बच्चे, आप भी मोर मुकुट धारी बनने के लिए इस जन्म में योगी और निर्विकारी बनो तो फिर सतयुग में आपको ताऊसी तख्त मिलेगा।' आज तक भी लोगों में यह रिवाज है कि वे पुस्तकों में मोर पँख रखते हैं। उनका ऐसा विश्वास है कि इसके फल स्वरूप विद्या अध्ययन में सफलता मिलती है। वे धर्म ग्रंथों पर अथवा महात्माओं पर भी मोर पँखों का बना हुआ चँवर या पँखा झुलाते हैं। इसका कारण भी यही है कि मोर पवित्रता का संकेतक है और यह ठीक मंतव्य है कि पवित्रता धारण करने से ही मनुष्य को विद्या की प्राप्ति में सफलता होती है और वह महात्मा भी बनता है।

भ्रमरी और कीडे का उदाहरण देते हुए बाबा कहते - 'जैसे भ्रमरी, कीडे को अपनी बिंबी में ले जाकर उसे बंद कर देती है और भूँ.... भूँ.... करके उसे अपने समान बना देती है, वैसे ही आप बच्चे, जिन्होंने कि ईश्वरीय ज्ञान लिया है, का भी यही कर्तव्य है कि आप कीडों की तरह विकारी मनुष्यों को ज्ञान सुना-सुनाकर अपने समान बना दें। भ्रमरी और ब्राह्मणी लगभग एक ही जाति है अर्थात् शब्द मिलते-जुलते ही हैं। आप भी ईश्वरीय ज्ञान की गुंजार से शुद्रों को ब्राह्मण बनाने का उच्च कर्तव्य करो। यह गुण आप भ्रमरी से सीखो।'

पतंगों (पतंगीया) की उपमा देकर बाबा समझाते कि - 'पतंगों में से भी कुछ तो ऐसे होते हैं जो कि शमा (दीपक) पर फिदा हो जाते हैं अर्थात् जल मरते हैं और बहुत से ऐसे भी होते हैं जो कि शमा पर चक्कर लगा कर लौट जाते हैं। इसी प्रकार कुछ मनुष्यात्माएँ ऐसी होती हैं जो कि जागती ज्योति अथवा चेतन शमा (परमात्मा) पर फिदा हो जाती हैं, तन-मन-धन से न्योछावर हो जाती हैं और अन्य बहुत-सी आत्माएँ हैं जिन्हें हम कहते हैं कि परमपिता परमात्मा शिव आकर अपना कर्तव्य कर रहे हैं परंतु वे आकर और रुककर लौट जाते हैं। अब आप वत्स सच्चे परवानों से यह गुण लो कि शिवबाबा पर कुर्बान हो जाओ।'

बाबा **सर्प** में यह गुण बताते कि - 'वह अपनी पुरानी खाल सहज ही उतार फैंक देता है। इसी प्रकार जो योगाभ्यास द्वारा शरीर भान को छोडना सीख जाता है, उसके फल स्वरूप सतयुग में, जीवन-मुक्त अवस्था में उसमें यह योग्यता होती है कि वह पुराने शरीर को कष्ट के बिना छोड सकता है। अत: इस दृष्टिकोण से तो सर्प में भी एक ऐसा गुण है जो कि आज के मनुष्यों में नहीं हैं। उस योग्यता को धारण करने के लिए मनुष्यों को योगाभ्यास करना चाहिए।'

बाबा कहते कि - 'शंकराचार्य और दूसरे संन्यासी जो कि उसके अनुयायी हैं, स्त्री को सर्पणी मानते हैं। उनका मंतव्य है कि नारी नरक का द्वार है, वह माया का रूप अथवा नागिन है।' बाबा समझाते कि - 'वास्तव में ऐसा मानना गलत है क्योंकि इस संसार में यदि स्त्री नागिन है तो पुरुष भी तो नाग है? दोनों ही एक-दूसरे को काम रूपी विष पिलाते हैं । दोनों ही एक-दूसरे को डसते हैं।' अत: बाबा कहते कि - 'आप लोगों को काम रूपी विष से छूडा देना चाहिए और विशेष तौर पर माताओं को चाहिये कि वे ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करके स्वर्ग का द्वार बनने का कर्तव्य करें और स्त्री-पुरुष दोनों ही घर में रहते हुए काम विकार पर विजय प्राप्त करें।'

गधे का मिसाल देते हुए बाबा कहते कि - 'खोदरे के पुट (गधे का बच्चा) का लाख शृंगार करो, फिर भी वह मिट्टी में लोट-पोट हो जाता है और सारा शृंगार बिगाड देता है, वह खोदरा (गधा) ही रहता है। इसी प्रकार कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उन्हें आप ज्ञान रूपी आभूषणों से कितना भी सजाइये परंतु वे फिर जाकर विकारों रूपी धूल से लत-पत हो जाते हैं।' बाबा कहते कि - 'आप बच्चों को ऐसा नहीं करना चाहिए।'

कछुए से गुण सीखने के विषय में बाबा कहते कि - 'बच्चे, जैसे कछुआ कार्य कर लेने के बाद कर्मेन्द्रियों को अपने अंदर समेट लेता है, वैसे ही आप बच्चों को भी चाहिए कि आवश्य क कार्य व्यवहार कर लेने के बाद कर्मेन्द्रियों को समेट लें और देह से न्यारे होकर शिवबाबा की स्मृति में स्थित हो जायें।'

'**मधु-मक्खी** सभी फूलों से रस को ले लेती है। यह गुण तो उसमें है ही उनमें दूसरी विशेषता यह होती है कि सभी मधु-मक्खीयाँ अपनी रानी के पीछे जाती हैं, जब रानी एक छत्ते को छोडकर जाती है तो वे भी सभी छोड जाती हैं। रानी के पीछे ही सदा वे सभी जाती हैं।' इसका दृष्टांत देते हुए बाबा कहते कि - 'कल्प के अंत में सभी मनुष्यात्माएँ इसी प्रकार ही शिवबाबा के पीछे-पीछे परमधाम रूपी छत्ते की ओर चली जायेंगी।'

हँस में जो मोती चुगने की विशेषता है, उसका हवाला देते हुए बाबा हमेशा कहते कि - 'आप वत्स परम हँस और हँसनियाँ हो क्योंकि आप ज्ञान रूपी मोती चुगते हो और आप में विवेक भी है। आपको बगुलों का संग नहीं करना चाहिए क्योंकि हँस और बगुले का कोई मेल नहीं हैं।'

'माया' की तुलना बाबा '**अजगर**' या 'ग्राह' से किया करते और ज्ञानवान वत्सों की तुलना 'हाथी' से अथवा 'गज' से। बाबा कहते - 'बच्चे, सदा सावधान होकर चलना, कहीं ऐसा न हो कि माया रूपी ग्राह आपको पकड ले। शिवबाबा को याद करते रहोगे तो माया रूपी ग्राह से छूट जाओगे। वरना माया ऐसा अजगर है कि यह मनुष्य को सारा ही निगल जाता है, अर्थात् उसका सारा ज्ञान चट कर देती हैं।'

ऊँट-पक्षी (शुतुर मुर्ग, शाहमृग) के बारे में बाबा बताया करते कि - 'इस पक्षी की गर्दन आदि ऊँट की तरह होती है और शरीर पक्षी जैसा। परंतु यह काफी बडे कद का होता है।' इस पक्षी के बारे में एक बात प्रसिद्ध है। कहते हैं कि ऊँट -पक्षी से किसी ने कहा - 'उडो' तो उस पक्षी ने जवाब दिया कि - 'मैं तो ऊँट (शुतुर) हूँ, मैं उड कैसे सकता हूँ?' फिर उसे कहा गया कि - 'अच्छा, अगर आप ऊँट हैं और उड नहीं सकते तो चलो और यह सामान लाद कर ले चलो।' तब वह बोला कि - 'मैं सामान लाद कर चल कैसे सकता हूँ, मैं तो पक्षी (मुर्ग) हूँ।' कहने का भाव यह है कि - 'वह करना कुछ भी नहीं चाहता, यों ही हरेक बात का कोई-न-कोई उत्तर दे देता हैं। यों ही बहाना बाजी करता है।' तो इस पक्षी का उदाहरण देते हुए बाबा कहते कि - 'जो ज्ञान निष्ठ बच्चे होंगे, वे कभी किसी कार्य को करने के समय बहाना नहीं बनायेंगे और ऊँट-पक्षी की तरह इन्कार नहीं करेंगे। परंतु जिनमें ज्ञान की पूरी धारणा नहीं होगी या जिनमें आलस्य का विकार होगा वे ऊँट-पक्षी की तरह कोई-न-कोई जवाब देकर चल देंगे। बाबा कहते कि आप 'ऊँट-पक्षी' मत बनो।

ऊँट का उदाहरण देते हुए बाबा कहते कि - 'वह जहाँ पेशाब करता है वहीं उसका पाँव फिसल जाता है और वह गिर पडता है। इतना बडा कद होते हुए भी उसमें यह समझ नहीं हैं।' जिन लोगों का मन काम-विकार से पैदा हुए शरीरों को देख कर फिसल जाता है और उन्हें धर्म से गिरा देता है, उनके बारे में बाबा कहते कि - 'ये तो ऊँट के समान मूत में फिसल जाता है, (क्योंकि यह शरीर ऐसे ही तो पैदा हुआ है और उस पर इसका मन फिसल गया है) यह इतना गंदा है, इसे समझ नहीं है।'

चातक और मछली का बाबा यह गुण बताया करते कि - 'चातक वर्षा के जल के लिए तडपता है और मछली भी जल के बिना जीवित नहीं रह सकती। ऐसे ही मनुष्य को 'ज्ञान का चातक' होना चाहिए, अर्थात् ज्ञान सागर शिवबाबा अब जो ज्ञान वर्षा कर रहे हैं, उसके बिना उसे एक दिन भी नहीं रहना चाहिए।'

बाबा कहते कि - '**तोते** भी दो प्रकार के होते हैं। एक तो कँठी वाले और बिना कँठी के। इसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञान सुनने वाले बच्चे भी दो प्रकार के होते हैं - एक तो वे जो ज्ञान सुनने के बाद दूसरों को ज्ञान सुनाते भी हैं। और दूसरे वे जो सुनते तो हैं परंतु सुना नहीं सकते।' बाबा कहते - 'आप सभी को कँठी वाले तोते बनना चाहिये, अर्थात जो ज्ञान सुनते हो वह दूसरों को सुनाना भी चाहिए।'

बाबा कहते कि - '**बन्दर** में पँचों विकार प्रधान होते हैं। उसमें मोह भी इतना होता है कि उसका बच्चा चाहे टुकडे-टुकडे हो जाये, बन्दरिया उसे अपनी छाती से लटकाये रहती है। उनमें क्रोध और अहंकार भी बहुत होता है - इतना कि यदि हाथी गुजरें तो वह उनसे कमजोर होते हुए भी हाथियों पर 'गुर्र-गुर्र' करते हैं। उनमें काम भी बहुत होता है, तभी तो वे ढेर सारे बच्चे पैदा करते हैं। लोभ उनमें इतना होता है कि आप यदि उनके आगे चने डालें तो वे खाकर पेट भर लेने के बाद भी लपक-लपक कर इतनी जल्दी से और भी चने उठाते जाते हैं जैसे कि जन्म से लेकर आज तक इन्होंने कुछ खाया ही न हो।' इस प्रकार बन्दर या बन्दरिया का उदाहरण देकर बाबा कहते कि - 'आज सभी मनुष्य बन्दर से भी तुच्छ हैं क्योंकि उनमें पाँचों विकार तो खूब भरे हुए हैं ही, इसके हुए हैं ही, इसके अतिरिक्त वे परमपिता परमात्मा के बारे में भी कुछ नहीं जानते।' बाबा कहते कि - 'अब शिवबाबा बन्दर से मंदिर लायक बनाने आये हैं। आज सभी मनुष्य बन्दर अथवा लंगूर हैं। वे परस्पर लडते रहते हैं और विकारों में जकडे हुए हैं। अब इन्हीं बन्दरों को माया रूपी रावण से ज्ञान रूपी बाणों द्वारा लडना सिखाकर शिवबाबा लंका को जलाने की तैयारी कर रहे हैं। आप सभी को बन्दर-पन छोडकर, बन्दरिया जैसी मोह-ममता त्याग कर, राम (शिव) की वानर-सेना में भरती हो, माया रूपी रावण पर विजय प्राप्त करनी चाहिए।'

शास्त्रों में लिखा हैं कि - 'जब शिव मोहिनी पर कामातुर हो गया तो उसके बीज से बिच्छु-टिंडन पैदा हुए।' बाबा कहा करते कि - 'अज्ञानी पुरुष ने यह शिवबाबा पर मिथ्या लांछन लगाया है क्योंकि वास्तव में यह शिवबाबा (परमात्मा) के बच्चों अर्थात् मनुष्यात्माओं पर घटता है। जब मनुष्यात्माएँ द्वापर युग में स्वरूप को भूलकर पतित हो जाती है तो वे काम के वशीभूत हो जाती हैं। तब से लेकर उनकी जो सन्तति (काम विकार से) पैदा होती है, वह बिच्छू और टिंडन की तरह होती है, अर्थात् उसमें दूसरों को दु:ख देने का स्वभाव होता है।' अत: आजकल के मनुष्यों का जो बिच्छू और टिंडन जैसे स्वभाव है, उसका कारण काम विकार को ठहराते हुए बाबा कहते कि - 'अब आप काम विकार को छोडो तो फिर सतयुग आ जायेगा और उसमें पवित्रता के बल से जो सृष्टि पैदा होगी वह बिच्छू-टिंडन की तरह मलेच्छ नहीं होगी बल्कि पवित्र और दैवी स्वभाव की होगी।'

बिच्छू (वींछी) के बारे में बाबा एक बात और भी बताया करते। बाबा कहते कि - 'बिच्छू पहले डँक से देखता है कि यह जगह नरम है या सख्त। जगह को नरम पाकर ही वह डँक मारता है। इस प्रकार इतनी समझ तो बिच्छू में भी है कि कहाँ डँक मारना है और कहाँ नहीं काटना।' इससे ज्ञानवान मनुष्य को यह गुण लेना चाहिये कि - 'वे ईश्वरीय ज्ञान उसी को दें जो उसे कुछ सुनने का इच्छुक भी हो अर्थात् जिसके मन में सुनाने वाले के प्रति कुछ नरमी भी हो, वरना सुनाना व्यर्थ है।' इस प्रकार इस विष वाले जीव से भी बाबा गुण लेने की शिक्षा देते।

जिन मनुष्यों की सदा 'काम' की दृष्टि-वृत्ति बनी रहती है, उनके बारे में कहते कि - 'ये तो कामी **कुत्ते** हैं। जैसे कुत्ते के कई बच्चे पैदा होते हैं, और उसमें वासना बहुत अधिक होती हैं, वैसा ही यह मनुष्य भी है।' अत: बाबा कहते कि - 'देखो, आज मनुष्य कितना गिर गया है । अपने परमपिता (परमात्मा) को भूलने के कारण वह गॉड से बदल कर डॉग बन गया है।' बाबा कहते कि - 'अब यह कुत्ते जैसा वासना पूर्ण स्वभाव छोडो और पवित्र बनो।'

इस प्रकार **टिड्डी (तीड)** का उदाहरण देते हुए बाबा कहते कि 'टिड्डीयों के झुण्ड अर्थात् टिड्डी दल सारे क्षेत्र को, दूसरों की मेहनत की कमाई को चट कर जाता है।' बाबा कहते कि - 'यह भी एक अवगुण है।' ज्ञानवान मनुष्य को चाहिये कि 'दूसरों की सेवा करे। वह बिना परिश्रम के दूसरों की कमाई न खाये।' जो संन्यासी भी गृहस्थीयों का भला किये बिना अथवा परिश्रम किये बिना उनकी मेहनत की कमाई खाते हैं - वे भी टिड्डी दल के समान है।

बाबा कहते कि - 'जैसे **उल्लु (घुवड)** को दिन में कुछ दिखाई नहीं देता, यहाँ तक कि सूर्य भी दिखाई नहीं देता या जैसे चमगादड(चामाचीडीयुं) उल्टे लटके रहते हैं, वैसे ही आज-कल के मनुष्य भी मानो उल्टे लटके हुए हैं और उन्हें ज्ञान-सूर्य परमपिता परमात्मा जो कि अवतरित होकर कार्य कर रहे हैं, ज्ञान प्रकाश फैला रहे हैं - दिखाई नहीं देता। वे शरीर को आत्मा मान बैठे हैं, कल्प

की आयु करोडो वर्ष माने बैठे हैं और 'गीता का भगवान' अजन्मा परमात्मा की बजाय ८४ जन्मों के चक्र में आने वाले श्री कृष्ण को मान बैठे हैं और इस प्रकार उल्टे लटके हुए हैं, अर्थात् उल्लू के समान अंधे बने हुए हैं।' बाबा कहते कि - 'अब मनुष्य को चाहिए कि वह ईश्वरीय ज्ञान ले, ताकि उसे ज्ञान नेत्र मिले और वह उल्लू से बदल कर अल्लाह का बच्चा बन जाय।'

बाबा समझाते कि - 'मनुष्य को **ठठारी बिल्ली** (जिद्दी) नहीं बनना चाहिये।' इस प्रकार बाबा हरेक से गुण लेने और उनमें जो अवगुण हमें बुरे लगते हैं उन अवगुणों को छोडने की शिक्षा से गुणवान बनाते।

पाण्डव भवन और बाबा का बगीचा

- ईशु दादी, माउण्ट आबू

सन् १९५६ की बात है कि - 'राजस्थान सरकार ने ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के नाम एक नोटिस भेज दिया कि कोटा हाऊस और धोलपूर हाऊस (जहाँ पर उन दिनों इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का मुख्यालय और मुख्य केन्द्र था।) को खाली कर दिया जाय।' बात यह थी कि दोनों भवन पहले गुजरात प्रदेश की सरकार के पास थे। उनसे ही ये ईश्वरीय सेवा के लिए किराए पर लिए गए थे। परंतु अब कुछ वर्षे से आबू पर्वत एवं नगर पर राजस्थान प्रादेशिक सरकार के प्रशासनिक क्षेत्र में आ गया था। अब राजस्थान सरकार ने यह निर्णय लिया था कि - 'वह यहाँ पर अपना सर्किट हाऊस बनाएगी, जहाँ पर कि सरकारी अधिकारी आकर रहा करेंगे। नोटिस में यह लिखा था कि दोनों भवन सरकार को अपने प्रयोग के लिए चाहिए, इसलिए उन्हें खाली कर दिया जाय।'

1. होगा वही जो होना होगा

अब इतने बडे संस्थान के आवास-निवास, कार्यालय इत्यादि को स्थानांतरित करने की समस्या सामने थी। कोई अनुकूल जगह मिलेगी भी या नहीं ? - यह असुविधा मन को दो टूक कर सकती थी परंतु 'बाबा तो भगवान और भावी के भरोसे पर बिल्कुल ही निश्चिंत थे।'

उन्होंने कोई योग्य स्थान ढूंढने के लिए भी आज्ञा दे दी थी, परंतु 'क्या होगा, अच्छी जगह मिलेगी या नहीं ?' इस प्रकार का कोई विकल्प उनके मन को छू भी नहीं सका था। बाबा सदा कहा करते - 'बच्चे, मेहनत से कार्य करते चलो। इस प्रश्न के पीछे मन को मत लगाओ कि क्या होगा ? होगा वही जो होना होगा। आप अपना पार्ट बजाओ (कर्तव्य करो)।' पिताश्रीजी ने निर्देश दिया कि - 'सरकार को इसका उत्तर दे दिया जाय और मंत्रीगण से मिलकर भी उन्हें बताया जाय कि समूचे भारत देश में ये एक ही ऐसा ईश्वरीय विश्व-विद्यालय है, जहाँ इतनी संख्या में मातायें-बहनें लोगों कि चारित्रिक सुधार के लिये ऐसा उच्च कार्य कर रही है। अत: इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का यहाँ होना तो राजस्थान सरकार के लिए एक गर्व की बात है।' बाबा ने उन्हें यह भी समझाने के लिए कहा कि - 'यह ईश्वरीय विश्व-विद्यालय तो सरकार का सहयोगी है। बापू गांधीजी, जैसे सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य के द्वारा राम राज्य स्थापना करना चाहते थे, यह तो उस ही शुभ लक्ष्य की पूर्ति में लगा हुआ है। इन माताओं-बहनों अर्थात् ब्रह्माकुमारीयों के पास जो कुछ भी था, इन्हों ने वह सर्वस्व ही देश की इस उच्च सेवा में लगा दिया। अत: जो संस्था ऐसा उच्च कार्य कर रही हो, उससे ठिकाना भी छिन लेना यह तो एक अनुचित, अन्यायकारी और अशोभनीय कार्य है। दूसरे प्रदेशों की सरकारें तो राजनीतिक बटवारे के बाद आये लोगों के पुनर्वसन के लिए सब सुविधाएँ, साधन और सम्पत्ति भी देती हैं। परंतु यह ईश्वरीय विश्व-विद्यालय तो इसके लिए भी माँग नहीं करता बल्कि यह सरकार पर कोई बोझ डालने की बजाय आत्म निर्भर रहना चाहता है।' बाबा ने यह भी लिखने के लिए आदेश दिया कि - 'प्राचीन परम्परा के अनुसार तो राजा अपनी प्रजा का पिता होता है। वह अपनी प्रजा का सन्तान से भी ज्यादा ध्यान रखता है। अत: सरकार को ये नोटिस वापस ले लेना चाहिए और अपने लिये कोई दूसरा प्रबन्ध करना चाहिए क्योंकि सरकार के पास तो सब साधन हैं। वह तो अपने लिए एक बडे भवन का भी निर्माण कर सकती है और इस संस्था को यहाँ बने रहने देकर पुण्य लाभ भी ले सकती हैं।'

2. सरकारी अधिकारियों से भेंट

बाबा के निर्देश अनुसार इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के प्रतिनिधि तत्कालीन मुख्यमंत्री महोदय से मिले और उन्हें ये सारी बात बतायी। उनहोंने सहानुभूति भी प्रदर्शित की परंतु वे बोले - 'ये किस्सा अब ऐसी सीमा पर पहुँच चुका है कि जिससे पीछे हटना मुश्किल मालूम हो रहा है क्योंकि इस स्थान पर सर्किट हाऊस बनाने की बात विधान सभा में भी कही जा चुकी है। इंजिनियरों ने इसके लिए पूरी योजना भी तैयार करली है, नक्शे भी बना लिए हैं और इस कार्य के लिए बजेट भी पास हो चुका है। अत: इस हद तक ये सब कुछ हो चुकने के बाद, अब इस मामले को समाप्त कर देना सम्भव नहीं क्योंकि ऐसा करने पर विधानसभा में भी प्रश्न उठाये जायेंगे और

ख्वामख्वाह गड-बड मचाने वाले लोग तथा यों ही आलोचना करने वाले लोग समाचार पत्र भी बात का बतंगड बना देंगे। अत: उन्होंने ये कहा कि इन भवनों को छोडना तो होगा ही। हाँ, खाली करने की अवधिको बढाया जा सकता है। अत: उन्होंने ठहरने के लिए अधिक समय दे दिया।'

इस बीच भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद जी से भी कहा गया कि वे इस मामले में अपना हाथ डाले और उन्होंने इस विषय में राजस्थान सरकार को लिखा भी क्योंकि आबू एक छोटी-सी पहाडी जगह है और वहाँ पर कोई इतनी बडी जगह मिलना, जहाँ पर कि सैंकडों की संख्या में भाई-बहन ठहर सके, तुरंत सम्भव नहीं था। राष्ट्रपति महोदय के पत्र के फल स्वरूप हमें उन भवनों को अपने पास रखने की और अवधि दे दी गई। परंतु फिर भी खाली करने के लिए तो कहा ही गया।

इसके बाद इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के प्रतिनिधि राजस्थान के कुछ कैबिनट मंत्रियों से व्यक्तिग रूप में मिले और उन्होंने भी अपनी सहानूभूति प्रगट की तथा इस मामले को उठाने का आश्वासन भी दिया परंतु उसके परिणाम स्वरूप भी केवल अवधि ही कुछ और बढा दी गयी। बाबा तो सदा कहा ही करते थे कि - 'प्रजातन्त्र में किसी बात का अंतिमनिर्णय लेने के लिए किसी एक व्यक्तिको पूर्ण अधिकार नहीं होता।' देश के राष्ट्रपति तक को भी संतुष्ट कर देने के बाद अथवा किसी प्रदेश के मुख्यमंत्री को युक्ति-संगत रीति से मामले के बारे में संतुष्ट करने के बाद भी समस्या का हल नहीं होता है। एक व्यक्ति को यदि आप यह मनवा भी लें कि आपकी बात ठीक है तो आगे जाकर दूसरा व्यक्ति अड़ जाता है, और दूसरे को साथ ले लेने के बाद अन्य सरकारी अधिकारियों की पंक्ति खत्म ही नहीं होती और इस पंक्ति के अंत तक पहुँचने से पहले वह व्यक्ति भी बदल जाते जिनसे आपने पहले बात की थी और इसी लाल फीते में समय भी खप जाता है। इसलिए बाबा कहते - 'वत्सों, यहाँ किसी एक राजा का राज्य तो है नहीं कि जो किसी बात का अंतिम निर्णय कर सकें और जिसकी बात मानने के लिए सभी अनुशासन बद्ध हो।'

अब तो हालत ऐसी है कि आज लोग जिसको अपना प्रमुख चुनते हैं कल वे उस पर दोष लगाकर उसे अपमानित और दण्डित करने से भी नहीं चूकते और प्राय: उस प्रमुख में दोष होते भी हैं। यदि, आज यहाँ किसी राजा का राज्य होता भी तो भी बात सधती नहीं क्योंकि आज राजा पर भी सच्चाई और पवित्रता का अंकुशतो है ही नहीं। आज राज्यसत्ता अलग है और धर्मसत्ता अलग है। अलग क्या आज सही अर्थ में धर्म तो है ही नहीं।

3. सूई की नोक के वरावर भी जगह नहीं।

तो जब यह निश्चित हो गया कि इस स्थान को छोडना ही होगा तब एक दूसरे स्थान को लेने के लिए निर्णय करना जरूरी था। बाबा ने तो पहले से ही कह दिया था कि - 'यह वृतांन्त, महाभारत में लिखित उस वृतान्त की पुनरावृत्ति है जिसमें बताया गया है कि कौरवों ने पाण्डवों को सूई की नोक के बराबर भी जगह देने से इन्कार कर दिया था।' बाबा बोले - 'भारतवासी इस बात को तो भूल ही गये हैं कि परमपिता परमात्मा का स्वरूप क्या है और वह कैसे गुप्त रूप से लोक कल्याण का कर्तव्य करते हैं? अत: वह यह तो पहचान ही नहीं सकते कि इस संस्था द्वारा स्वयं परमपिता परमात्मा ही भारत को पावन एवं सुख शान्ति सम्पन्न बनाने का कर्तव्य कर रहे हैं।'

4. तीन कदमों में तीन लोक ले लेंगे

बाबा बोले - 'यदि मंत्री हम से इन भवनों को ले लेते हैं तो गोया वे अनजाने ही पाँच हजार वर्ष पहले हुए अपने पार्ट को अदा कर रहे हैं। परंतु वत्सों, यदि हमें ईश्वरीय सेवा करने के लिए तीन पैर पृथ्वी भी नहीं देते तो घबराने की कोई बात नहीं। हम तो तीन पैर में ये सारी पृथ्वी ही माप लेंगे अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान, सहज राजयोग तथा दिव्य गुणों की सेवा द्वारा सारे भू-मण्डल को ही स्वर्ग बना लेंगे।

अब दूसरा स्थान लेना तो था ही और बाबा के कथन अनुसार उसमें भी कल्याण ही समाया हुआ था। अत: अब ढूँढे गये भवनों में से एक को चुनना था। 'कोटा हाऊस' और 'धोलपुर हाऊस' जहाँ अभी हम रह रहे थे, के निकट ही 'पोकरण हाऊस' नाम वाला भवन मिल गया। उन दिनों यह भवन लगता तो अजीब सा ही था परंतु इसमें मैदान काफी था। कमरे भी बन्द-बन्द लगते थे। परंतु शिव बाबा के पास तो इसके लिए एक बडी योजना थी। अत: उनकी प्रेरणा से इसी भवन को किराये पर ले लिया गया और बाद में खरीद भी लिया।

5. पाण्डव भवन का निर्माण

अब भारत के कई नगरों एवं उप-नगरों में ईश्वरीय सेवा केन्द्र खुल गये थे और वहाँ से मधुबन आने वालों की संख्या दिनों दिन बढ़ रही थी। इसी पोकरण हाऊस में खाली मैदान काफी था। अत: अब बाबा ने अन्य सेवा कन्द्रों से आने वाले वत्सों के आवास के लिए

इसमें कमरे बनवाने शुरु कर दिये। सभी की बेहद सभा के लिए एक काफी बडे हॉल का भी निर्माण कराया गया। बाबा की योजना थी कि समूचे विश्व भर में ईश्वरीय ज्ञान और संदेश देने के लिए यहाँ शिक्षिकाओं का प्रशिक्षण होगा और सभी की योगावस्था को परिपक्व करने के लिए भी उन्हें विशेष पुरषार्थ कराया जाएगा। इस प्रयोजन से बाबा ने पोकरण हाऊस के एक खुले हिस्से में भावी शिक्षिकाओं के आवास तथा प्रशिक्षण के लिए कमरे भी निर्मित करवाये और कक्षायें भी बनवाई। पिताश्रीजी विश्व में पवित्रता की स्थापना के लिए नित्य नई-नई योजनायें बनाते और उन्हें कार्यान्वित करते रहते।

स्थापत्य कला अथवा भवन कला में बाबा के विचार बहुत उच्च और अनूठे थे। बाबा इस कार्य में विशेष रूचि लेते थे। प्रेम पल्लवित हृदय से वे कागज पर अपने कोमल हस्तों से रेखा-चित्र बनाते हुए कहते - ''यहाँ हमारे बच्चे सुख से रहेंगे। यहाँ वे ईश्वरीय विद्या पढेंगे। मैं उनके सुख की पूरी व्यवस्था करूँगा। चीज ऐसी बनाई जाएगी जो कि 'कम खर्च और बाला नशीन' होगी। यहाँ प्रबन्ध ऐसा होगा कि बच्चे जब दुनिया के धन्धों से और माया के तूफानों से थककर यहाँ आयेंगे तो शिवबाबा के इस घर में ऐसा सुख पूर्वक विश्राम पायेंगे कि उन्हें छी-छी दुनिया भूल ही जायेगी। वे प्राय: निर्माण स्थल पर स्वयं जाया करते और आने वाले वत्सों की याद में वे जिस प्रकार निर्देश दिया करते, वो देखते ही बनता।

6. राज ऋषियों अथवा भावी राजकुमारों का शिक्षा स्थल

अब बाहर सेवाकेन्दों से प्रतिदिन काफी संख्या में वत्स वहाँ आते। बाबा उन्हें कहते - 'बच्चे, बाबा आपके लिये जगह बनवा रहे हैं। जाओ, उन्हें देखकर आओ।' इतना कहते ही वे उठ खड़े होते और अपनी अंगुली वत्सों के हाथ में दे देते और कहते - 'चलो, बच्चे, बाबा स्वयं आपको दिखला लाते हैं।' रास्ते में वे उनसे पूछते, 'बच्चे, किसके साथ चल रहे हो?' ऐसा पूछते हुए मुस्कान भरकर योग-दृष्टि से उनके नेत्रों में उनको ऐसे अनुपम स्नेह से निहारते कि उन वत्सों के आत्मन् को बहुत सुख महसूस होता। बाबा कहते - 'वत्सों, आप राजर्षि हैं और राजयोगी भी। इस पुरुषार्थ द्वारा आप भविष्य में राजाओं के भी राजा बनोगे। गोया आप भविष्य में दैवी राजकुमार और दैवी राजकुमारियाँ बनने वाले हैं। अत: आपके उठने-बैठने, पढने इत्यादि की व्यवस्था जैसे अंग्रेजों के जमाने में राजकुमारों के लिए होती थी, उससे भी उच्च होनी चाहिए। परंतु अभी तो आप पट पर बैठते हैं क्योंकि ये आपका जीवन त्याग और तपस्या का है। वर्तमान समय सब साधारण और पुरुषार्थी रूप में हैं। परंतु इस पट पर बैठे हुए भी आप में ऐसी ईश्वरीय मस्ती है कि सतयुग में श्री लक्ष्मी और श्री नारायण को रत्न जडित सिंहासन पर बैठने पर भी ऐसी नहीं होगी। इस समय तो आप पद्मा-पद्म दैवी सम्पत्ति के मालिक बनते हैं।'

7. बाबा के साथ कदम-कदम में पद्मा-पद्म की कमाई

इस प्रकार, बाबा भवन भी दिखा देते और बातों ही बातों में ईश्वरीय खुशी रूप खजाने से झोली भी भर देते। फर्श पर बैठने की बात करते हुए भी वो रुहानियत के अर्श पर ले जाते। त्याग और तपस्या का पाठ पढाते हुए भी वे राजाई और रुहानी नशे से सराबोर कर देते। बाबा की अँगुली पकडे हुए लगता कि कोई रुहानी बिजली सी उनके जिस्म और आत्मा दोनों को एक नई शक्ति संचारित कर रही है। वे घडियाँ, वे दृश्य सभी की कल्प कहानी के ऐसे स्वर्णिम संस्मरण बन जाते कि उन दृश्यों के स्वप्न जाग्रत अवस्था में भी आते रहते और स्वप्न में भी उनको देखकर आत्मा जाग्रत अवस्था का अनुभव करती। वे किसी कक्षा में बिठाकर औपचारिक रीति से पढ़ाये गये ज्ञान-पाठ तो नहीं थे परंतु वे प्रेम के पाठ थे जो मनुष्य के मन में रहे हुए कलैष को धो डालते....।

फिर कमरे में आकर बाबा कहते - 'बच्चे, ये तो नहीं गये? लो ये 'टोली' खा लो। बाबा ने आप जैसे सिकीलधे बच्चों के लिये यह बनवाई है।' इस प्रकार हँसी-बहलाव में ही बाबा 'मन-मनाभव' का पाठ पढा देते और हर कोई ऐसा महसूस करता कि हम तो वास्तव में थे ही शिवबाबा के परंतु बीते कुछ समय से इस बात को जैसै-कैसे भूल गये थे और अब इसकी हमें स्मृति दिलाई जा रही है।

8. इसका नाम पाण्डव भवन

बाबा ने इस भवन का नाम रखा - 'पाण्डव भवन'। बाबा कहते लोगों को यह तो मालूम नहीं कि पाण्डवों और शिव-शक्तियों की जो सेना थी वो अहिंसक और आध्यात्मिक थी। उन्होंने बाहु-बल अथवा शस्त्र-बल से राज्य नहीं लिया था बल्कि ज्ञान-बल, योग-बल एवं पवित्रता-बल के द्वारा ही मन में बैठे असुरों का मलियामेट किया था। वह आध्यात्मिक सेना आप ही तो हैं। यह बात लोक प्रसिद्ध है कि पाण्डव स्वयं भगवान ही के निर्देशानुसार धर्म के पथ को ग्रहण करते थे। अब पाण्डव पति परमात्मा के श्रीमत के अनुसार अपने गँवाये हुए दैवी स्वराज्य के लिये पुरुषार्थ करने वाला शक्ति दल अथवा पाण्डव सेना आप ही तो हो, जिनका ही ये मुख्य कार्य-स्थल अथवा यह रुहानी किला 'पाण्डव भवन' है जहाँ पर किसी भी देह अभिमानी, विकारी दृष्टि-वृत्ति वाले, भोग प्रिय व्यक्ति को रहने

का अधिकार नहीं। बाबा सदा यही कहा करते कि - 'यह पाण्डव भवन योग बल एवं ब्रह्मचर्य का किला है। यहाँ पर शिवबाबा, ब्रह्माबाबा के द्वारा ज्ञान वर्षा करते हैं। जिससे नर-नारी देवी-देवता बनते हैं। अत: इस अर्थ में, यहाँ इन्द्र की सभा लगती है जहाँ पर कि दैवी वृत्ति को धारण करने वाले केवल पवित्र, योग-युक्त एवं निश्चय बुद्धि वत्स ही कर सकते हैं ताकि यहाँ के वातावरण में अशुद्ध संकल्पों-विकल्पों के प्रकम्पन न हों। यही पाण्डव भवन मधुबन भी हैं क्योंकि यह नगर और ग्राम से दूर तो है ही, जहाँ पर परम मधुर शिवबाबा से आप वत्स ज्ञान माधुर्य का रसास्वादन करते हैं अथवा विकारों के कडवे-पन को निकाल कर देवताओं के समान मधुर स्वभाव के बनते हैं। आज इसी पाण्डव भवन अथवा मधुबन में शिव के रावण राज्य को अथवा माया के विभिन्न रूपों को परास्त करने का ईश्वरीय कार्य बहुत तीव्र गति से हो रहा है। इस मधुबन तपोवन का वातावरण ऐसा तो अव्यक्त, शान्तिपूर्ण एवं शुद्ध आध्यात्मिक है कि जहाँ कुछ ही दिन रहने से मनुष्य को परम शान्ति मिलती है तथा उसके पुरुषार्थ में तीव्रता आती है।

इस पर सब हँस पडते और सबके मन में एक मीठी चिन्ता-सी हो जाती कि न जाने सबके सामने अब हमें कौन-सा और कैसा फूल मिलेगा। परंतु बाबा तो केवल हँसी के भाव से ऐसा कहते थे ताकि सबके मन में गुद्‌गुदी का अनुभव हो, वरना तो बाबा सबको सन्मान देते थे, वे भला भरी सभा में किसी को ऐसा सुगन्धि हीन अथवा छोटा फूल कैसे दिला सकते थे कि जिसे पाकर किसी की खुशी ही कम हो जाए?

9. मधुवन के अंगूर

बाबा ने इस बगीचे में अंगूरों की बेल भी लगाई थी। ये इतनी नीची थी कि किसी उँचे कद वाले व्यक्ति के ऐडी उठाकर कोशिश करने से तो लटकते हुए गुच्छे का निचला सिरा उसके मुँह में भी आ सकता था। हर वर्ष जब अुगूरों के गुच्छे उतारे जाते तो बाबा इस अल्लाह के बगीचे के अंगूरों को बडे चाव से प्राय: हरेक सेवाकेन्द्र पर भेजने का यत्न किया करते। अंगूर तो प्राय: भारत के सब शहरों में मिलते ही हैं और वे सारे खट्टे ही नहीं बल्कि मीठे और रसीले भी होते हैं। परंतु इन अंगूरों की विशेषता यह थी कि 'इनमें ईश्वरीय प्यार रूपी रस भी भरा होता था। बाबा इन्हें पार्सल करके नहीं भेजते थे बल्कि एक स्नेह भरे पत्र के साथ पत्र वाहक के हाथ वे अंगूरों का टोकरा भरकर भेज देते और हरेक बच्चे का नाम लिखकर कहते कि इन सभी को अंगूर मिलने चाहिये।' किसी मुख्य केन्द्र पर जब ये टोकरा आस-पास के केन्द्रों पर वितराणर्थ आ पहुँचता तो उस टोकरे के आस-पास खडे भाई-बहनों के चेहरे देखते ही बनते थे। उन पर स्नेह और मुस्कान की मिश्रित रेखाएँ आज बहुत ही गहरे रूप में उभर आती। उन्हें उन अंगूरों में प्रियतम प्रभु शिवबाबा का संदेश झलकता दिखाई देता और बाबा के प्रति अथाह स्नेह में वे उसे स्वीकार करते योगयुक्त से हो जाते। जो वत्स किन्हीं कारणों से उस दिन न आ पाते, उन्हें भी संदेश भेजा जाता कि बाबा ने आप के लिये मधुबन के बगीचे के अंगूर भेजे हैं। संदेश को सुनते ही वह सिर पर पाँव रखकर दौड जाते। इस प्रकार से सबको रसानुभूति के साथ-साथ 'त्वमेव माताश्च पिता त्वमेव' - इस प्रसिद्ध छन्द की पंक्तियों की रहस्यानुभूति भी प्राप्त होती।

10. बाबा की कुटिया

इस बगीचे में बाबा ने एक कुटिया भी बनवाई। देखने में बिल्कुल सादी और प्राचीन-कला की परिचायक। परंतु इसमें बैठे बाबा के पास जब कोई अपने मन का हाल बताने जाता तो उसे लगता कि आज किसी ने मेरे आत्मान पर से सारा बोझ हटा दिया है और उसके बदले में मुझे हर्ष और हल्का-पन दे दिया है। क्षण भर में उन्हें बडी से बडी समस्या का हल मिल जाता। वे बाबा के निकट बैठ कर ज्ञान के गहन रहस्यों तक पहुँच प्राप्त लेते और उन्हें ऐसा लगता कि अब इन शिक्षाओं को अपने जीवन में ढालना कठिन नहीं होगा। इसी कुटिया में बैठकर ही बाबा विभिन्न सेवा केन्द्रों से आये अनेक वत्सों के पत्रों का भी उत्तर देते जिसे पाकर उन्हें बहुत उल्लास, उत्साह और आत्मीयता का अनुभव होता। गोया यह कुटिया, कुटिया नहीं थी बल्कि इस संसार सागर में, जहाँ पर मनुष्य माया के तूफानों से तथा दु:ख और अशान्ति की चट्टानों से घिरा हुआ हैं, उसमें उसके जीवन रूपी जहाज के लिये एक लाइट हऊस का काम करती जहाँ से सभी को ज्ञान और योग की सर्च लाइट मिलती रहती।

बाबा ने केवल आवास और प्रशिक्षण के लिये सीधे-सादे कमरे ही नहीं बनवायें, बल्कि स्वास्थ्य और सौन्दर्य के नियमों का भी ध्यान रखा।

बाबा ने बारह दरी वाले, दो हवा दार कमरे भी अच्छी खासी ऊँचाई पर बनवा दिये और राजस्थानी भवन निर्माण कला में दिव्यता का समावेश करते हुए बाबा ने इन पर बहुत सुंदर गुम्बद बनवा दिये। ऐसा लगता है कि ये गुम्बद दूर से ही माया से थके माँदे जिज्ञासुओं का आह्वान करते हुए मूक भाव में शिवबाबा का यह संदेश देते हैं कि 'आओ, मेरी छत्र छाया में आओ और अपने जीवन को कमल पुष्प के समान बनाओ।' अपने जीवन में इस नये और ताजा ज्ञान की ताजगी अनुभव करो और पुराने पथों एवं रुढियों की

घुटनो से मुक्ति पाओ। इन गुम्बदों के ऊपर रात्रि को सदा एक-एक बल्ब जगता रहता जो शिव बाबा के इस संदेश को किरणों की तरह फैलाता कि - 'अज्ञान की इस अंधेरी रात में मुझ सदा जागती ज्योंति परमात्मा के पास आओ। जीवन पथ पर भूले भटके मुसाफिरों, आओ और सुख शान्ति की विरासत पाओ।'

11. इस तपोवन में बाबा की तपस्या

इस प्रकारपाण्डव भवन में सब सुख-सुविधायें सहज सुलभ कराकर भी बाबा स्वयं तो सदा एक छोटे-से पुराने कमरे में ही बने रहे। यह देखकर कई वत्स बाबा से कहते - 'बाबा, क्या यही अच्छा हो कि इतने कठिन परिश्रम से बनवाये गये इस बडे भवन में आप भी किसी एक नये ही कमरे में आवास करें। बाबा, हम इस नये भवन की सुख-सुविधा को लेते हैं और आप इस पुराने ही कमरे में रहते हैं। बाबा, इस बात पर तो हमारा मन नहीं मानता...।'

तब बाबा कहते - 'वत्सो, शिवबाबा तो आते ही पुरानी दुनिया में और पुराने शरीर रूपी रथ में हैं। नई सतयुगी दुनिया तो वेा आप बच्चों के लिये ही बनाते हैं। अत: बाप तो आप बच्चों को नये भवन में देखकर खुश होता है।' बाबा कहते - 'मैं किन्हीं कर्म सन्यासियों की तरह कोई गुरु या आचार्य नहीं हूँ कि स्वयं सुख लूटूँ और अपनी सेवा-पूजा आप बच्चों से कराऊँ बल्कि यह बाप तो सारी सृष्टि का रुहानी सेवक है जोकि सबको मानव से देवता बनाने की सेवा करने पर तत्पर है। अत: बच्चे, सेवक का तो ऐसे ही कमरे में रहना ठीक बनता है।' बाबा की यह बातें सुनकर सभी मूक होकर रह जाते क्योंकि वे जानते कि वे युक्ति अथवा दलील से तो कभी बाबा को मनवा नहीं सकते। वे हँसते-मुस्कुराते हुए इतना मात्र ही कह पाते कि - नहीं बाबा, ऐसा नहीं होगा। परंतु वे स्वयं अपने मन में जानते कि वे बाबा को अपनी बात पचा नहीं पा रहे। देखो तो, कितनी थी बाबा की त्याग और तपस्या की भावना और उनका लोक सेवा का संकल्प। उनका हाथ सदा देने की मुद्रा में रहता था और वे सांसारिक सुख-सुविधाओं के प्रति बेपरवाह थे। वे इसी कमरे में ही तपस्या करते रहते, इसी स्थान पर ही वत्सों को योग दृष्टि एवं व्यक्तिगत परामर्श देकर, उन्हें अनेक वरदान देते रहते। आज यह तपस्या का कमरा हो गया है क्योंकि उस त्याग, तपस्या और सादगी के आदर्श बाबा ने यहाँ तपस्या की थी। परंतु हाय, जब ऐसे स्नेही, सहायक एवं साधारण रुप में मानव मात्र के अलौकिक और पारलौकिक पिता इस पर ऐसे महान चरित्र कर रहे थे तो संसार के लोग आँख मूँद कर विकारों से मूर्च्छित होकर बे-सुध और बे-खबर सोये पडे थे और उनमें से कितने तो ऐसे थे जिनके कंधे झंझोडने पर भी वे करवट तक नहीं लेते थे और कितने तो ऐसे भी थे जो सुनकर भी अनसुनी कर देते थे। और सबसे ज्यादा दयनीय तो वे थे जो सुनने पर भी उस पिता के प्रति असहिष्णुता, मन-मुटाव और वैर-विरोध की भावना को अपने मन में पालते रहते।

इस भवन को बनाने के कार्य में जो मिस्त्री और मजदूर लोग लगे हुए थे, वे भी बाबा के सुमधुर, सुकोमल एवं पितृवत व्यवहार से बहुत प्रभावित थे। बाबा उन्हें - 'बच्चे, बच्चे' कह कर बुलाते थे। वे वहाँ के माली को भी 'माली बच्चे' कहकर पुकारते थे। वे उन्हें सर्दी प्रारम्भ होते ही गरम कपडे दिया करते थे और उनकी मजदूरी के अतिरिक्त उन्हें छाछ, चाय आदि भी दिया करते। वे उनके लिये कभी मीठे चावल बनवा देते और कभी खाने की और कोई चीज दिया करते। वे उनके छोटे बच्चों को भी कई प्रकार की चीजें दिलाया करते। कई बार बाबा ने उनके लिये कम्बल भी मँगवाये और चप्पल अथवा जूते भी। जब कभी बाबा बाहर जाते तो पाण्डव भवन के मिस्त्रियों, मालियों तथा सफाई कर्मचारियों को विशेष खर्चा भी दिया करते। अत: बाबा को देखते ही उन लोगों का मन रूपी मोर नाच उठता। उन्हें लगता कि यह धरती के देवता हैं, अत: वे कर-बद्ध होकर भावना पूर्वक नमस्ते किया करते।

12. बाबा का बगीचा

बाबा को फूलों का भी बहुत शौक था। अत: बाबा ने पाण्डव भवन के निमार्ण में जहाँ अन्य आवश्यकताओं को स्थान दिया, वहाँ इसके एक बडे हिस्से में फूलों का एक बगीचा भी बनवाया तथा उसमें कई प्रकार के फूल भी लगवाये। बाबा कहते - 'इस बगीचे में मैं सभी प्रकार के फूल और फल लगवाऊँगा। सेवाकेन्द्रों से, पवित्र बनने अथवा सेवा करने वाले जो बच्चे यहाँ आयेंगे, उन्हें मैं अपने हाथों से ये फल खिलाऊँगा। इस बगीचे में अनेक प्रकार के जो फूल होंगे, वे जिस आध्यात्मिक रहस्य के परिचायक होंगे, उसका बोध भी बच्चों को कराऊँगा। मेरे ये ज्ञान वत्स भी मानव रूप में फूल ही हैं और शिवबाबा रुहानी माली हैं, जो इन सभी को देखकर हर्षित होते हैं। इस ज्ञान के बगीचे में भी कोई तो अभी कली बना है, कोई फूल। इसमें कोई तो सूर्यमुखी है जिसका मन सदा ज्ञान-सूर्य परमात्मा ही की ओर रहता है। कोई रुहे गुलाब है, जिसकी रुह में दिव्य गुणों की सुगन्धि है। कोई मोतिया(मोगरो) या चमेली की तरह खुश्बूदार और पवित्र हैं। किसी की कली 'गुलाब' की तरह ज्ञान से खिल उठी है तो कोई 'गैंदे' (गलगोटो) की तरह इस ईश्वरीय बगीचे की शोभा है। इसके अतिरिक्त कोई तो अब 'फल' बन चुका है जिसमें कि ज्ञान रस भर गया है, परिपक्व हो गया है और दूसरों की सेवा में लगा चुका है।' इस प्रकार, ये बगीचा भी सेवा कन्द्रों से आने वाले वत्सों को ज्ञान देने का एक निमित्त कारण बन जाता।

13. आप कली हो, फूल हो या फल हो?

कई बार बाबा आगन्तुक व्यक्तियों को फूल भेंट करके उनसे पूछते - 'बताओ बच्चे, अभी आप कली हो या फूल बने हो या अब फल बन चुके हो ?' कोई कोई तो बाबा की इस पहेली को समझ ही न पाता और किन्हीं-किन्हीं को तो उनके सेवाकेन्द्र की इन्चार्ज बहन पहले से ही ये पाठ पढाकर ले आती कि बाबा ऐसे-ऐसे प्रश्न पूछा करते हैं। कभी बाबा यह भी पूछते कि बताओ - 'बच्चे, अभी आप में माया का कोई काँटा तो नहीं रहा हुआ ?' कभी बाबा कहते कि - 'हरेक सेवा केन्द्र पर आने वाले ज्ञान वत्स गोया एक मानवी गुलदस्ता ही है। बच्चे, आपस में गुलदस्ता बनकर रहना और अपनी-अपनी खुश्बू शिवबाबा को देते रहना।' कई बार बाबा क्लास के अंत में थाली में फूल लाने का निर्देश पहले से दे देते और वाणी के अंत में मुस्कराते हुए कहते कि अच्छा जिस वत्स की जेसी अवस्था हो, कोई आकर उसको वैसा ही फूल दे दे।

14. नेष्ठी अवस्था

बाबा के जीवन की एक मुख्य विशेषता तो यह थी कि वे स्वरूप निष्ठ थे। उन्हें शिवबाबा के अंग-संग रहने का इतना अभ्यास था कि वे दोनों शायद अलग ही न होते थे। वे जब खाना खाते तो अपने साथ भोजन करते वत्सों को कहते - 'यह देखो, यह हाथ तो इसका है परंतु शिवबाबा इस हाथ द्वारा इस बच्चे(ब्रह्मा) को कितने प्यार से भोजन करा रहे हैं, यह(ब्रह्मा) बाबा (शिव) का मुरब्बी बच्चा है ना।' जब वे स्नान कर रहे होते और कोई उन्हें आकर कहता कि - 'बाबा, ट्रंक-कॉल आया है।' तो बाबा कहते - 'बच्चे, उन्हें कह दो कि बाबा शिव पर लोटी चढा कर अभी आता हैं।' कभी तो वे ऐसा महसूस करते कि वे नहा नहीं रहे बल्कि उनके तन में जो शिव बाबा आया है, उस पर वे जल की लोटी चढा रहे हैं और कभी उन्हें ऐसा लगता कि जैसे माता-पिता किसी बच्चे को नहलाते हैं, शिवबाबा अब उन्हें नहला रहे हैं। इस प्रकार उन्हें देह की सुध न रहती और देह से सम्बन्धित कर्मो में भी वे शिवबाबा को न भूलते। सारा दिन अशरीरी शिवबाबा का मनन-चिन्तन, स्मरण, गुणानुवाद, गायन आदि करते-करते वे काया के आभास और माया के प्रहार से परे होते गये थे और उनकी स्थिति ऐसी होती गई थी कि जैसे देह में होते हुए भी वे न हों। उनकी निद्रा में भी निद्रा नहीं रही थी बल्कि उसमें सुषुप्ति का अंश तो आटे में नमक के समान ही रह गया था, या शायद इतना भी न था क्योंकि शायद उसमें भी वे विश्व सेवा के स्वप्न देखते और शिवबाबा से बातें करते। उनकी इस योगारूढ सदा जागति ज्योति के समान अवस्था का सुफल यह था कि जब कोई भी उनके निकट आकर बैठता तो उनकी योग-दीप-शिखा उस व्यक्ति की ज्योति को भी जगा देती। कोई उनकी आँखों में देख लेता तो वह इस दुनिया से कहीं दूर एक सूक्ष्म, सुखमय लोक में पहुँच जाता। कोई भी पुरुषार्थ किये बिना वह एक पंख के समान हल्का-पन अनुभव करता, कम से कम उतने समय के लिए तो उसमें देह और संदेह का भाव मिट जाता। उसका पुराने से पुराना मनोविकार भी शान्त हो जाता और उसे एक अचिन्त्य, अवर्णनीय शान्ति का अनुभव होता। यदि उसने अपने इस या पिछले किसी जन्म में कुछ भक्ति या उपासना की होती तो सहज ही उसे बाबा के मुखमण्डल पर और उसके आस-पास प्रभामण्डल दिखाई देता जिसे वह देखता ही रहता। गोया बाबा की निकटता मात्र से बिना बताये - 'मूक स्थिति में भी यह परिचय मिल जाता कि वह बाबा क्या कर्तव्य करते हैं और कैसी सृष्टि स्थापन कर रहे हैं और यह भी मन में विचार आता कि ऐसी आत्म-स्थिति की अवस्था अथवा देह से न्यारेपन की स्थिति बडी मधुर है और सहज ही हो सकती है।'

15. सादगी और सद्-व्यवहार

बाबा सादगी एक उत्तम उदाहरण थे। वे एक छोटे से कमरे में रहते थे जो पुराने ढंग का था और जिसकी छत भी पक्की नहीं बनी हुई थी बल्कि टीन की चादरों से बनी हुई है। उसी कमरे में वे आगन्तुक लोगों से, अतिथियों से और वत्सों से मिलते भी और उसी में पत्र भी लिखते। वहीं आकर उन्हें कोई अपने मन का हाल भी बताता, परामर्श भी करता तथा मार्ग प्रदर्शन भी लेता। वही कमरा उनका शयनागार भी था, उनका भोजनगृह भी, उनका छोटा कार्यालय भी और मुलाकात का कमरा भी। वहाँ न कोई आधुनिक प्रकार का फर्नीचर रखा रहता, न उसमें कोई गलीचा बिछा था, न वहाँ वातानुकूलित था और नहीं वहाँ कोई डबल फोम पडा था बल्कि एक बडी-सी गद्दी थी जिस पर वे स्वयं भी बैठते और कई बार वत्सों को भी बिठाकर प्यार, पुचकार और दुलार तथा अपने हाथों से मिष्टान्न (टोली) देते। परंतु स्वच्छता में वह कमरा अनुपम था। बिस्तर पर सफेद चादरें बिछी हुई, दिवारों पर सफेद चुना हुआ, गद्दी भी सफेद वस्त्र से ढकी हुई और यहाँ तक कि कमरे की अलमारी भी सफेद रोगन से भी शोभायमान थी। उसमें जबश्वेत वस्त्रधारी बाबा के सामने बैठे और उनकी पावनकारी वार्ता सुनते तो मन की कालिमा भी मिट जाती और वह भी निर्मल तथा उज्जवल हो जाता। न कमरे की कोई विशेष साज-सज्जा थी और न कोई बनाव-ठनाव परंतु उस कमरे में बैठकर सेवा मूर्ति बाबा ने कितनी आत्माओं को एक नया जीवन प्रदान किया होगा, कितनों-कितनों ने वहाँ बैठकर प्रभु मिलन का सुख पाया होगा और ईश्वरार्पित होने का संकल्प लिया होगा। न बाबा के तन पर कोई बनावटी शृंगार, न बाबा के कमरे में।

बाबा कहते - 'बच्चे, इस ईश्वरीय सेवा में जिस किसीने एक पैसा भी अर्पित किया है, उसका वह पैसा भी एक लाख रुपये से अधिक मूल्यवान है और वह मनुष्यात्माओं को पावन बनाने तथा उनको शान्ति देने की सेवा के लिये है, उसे हम अपने सुख-भोग के लिये खर्च नहीं कर सकते वरना वह 'अमानत' में 'ख्यानत' होगी।' उन दिनों पाण्डव भवन में एक नव भवन भी बना था। जिसमें अनेकानेक कमरे थे। कई वत्स बाबा से कहते - 'बाबा, अब आप उनमें से किसी कमरे में क्यों नहीं आ जाते।' तब कभी तो बाबा कहते - 'बच्चे, अब तो इस दुनिया को भी छोडना है, इस कमरे की क्या बात करते हो। अब तो फर्श से अर्श में जाना है।' दूसरे किसी अवसर पर वे कहते - 'बच्चे, इस दुनिया में कुछ भी नया नहीं, नया तो अब सतयुग में जाकर बनायेंगे, यह तो सारी दुनिया ही पुरानी है। बाबा ने पुराना तन लिया है, अपना योग भी पुरातन है तो कमरा भी पुराना ही ठीक है। ऐसा कहते हुए वे मुस्कुरा देते और प्यार से कहते कि नया मकान तो आप सर्विसएबल, सिकीलधे बच्चों के लिए प्यार से बनाया है। बाबा प्यारे बच्चों को वहाँ रहा देखकर खुश होते हैं।' कभी बाबा यह भी कहते - 'बाप तो बच्चों को सुख देने आया है, बाप बच्चों का सदा सर्वेन्ट (सेवाधारी) होता है तभी तो लौकिक बाप भी बच्चों को पैदा कर उनके लिए जीवन भर कमाता है और उन्हें विरासत देता है। बाप का जो कुछ भी होता है, वह बच्चों के लिये होता है। अत: यह भी आप बच्चों ही के लिये है, यह बाप तो विश्वसेवक है न। सेवक तो सर्वेन्टस क्वार्टर में रहते हैं। नये मकान में तो मालिक रहता है और आप तो बालक सो मालिक हैं।' इस प्रकार बाबा के त्याग, सेवा और उनकी सादगी की क्या दासतां सुनायें।

उनका आहार अल्प, खर्च अल्पतम और उनकी सेवा अथक तथा उनके स्नेह की छाप अमिट थी। वे भद्रता, सज्जनता, आतिथ्य और सत्कार के आदर्श देवता रहे। मधुबन में आकर जो कोई भी रहता, वह चाहे किसी कारखाने का दैनिक वेतन पर कार्य करने वाला, अशिक्षित व्यक्ति हो और चाहे शिक्षित एवं बुद्धिजीवी, समाज का केाई विशिष्ट एवं मान्य व्यक्ति हो, बाबा का प्यार सभी के लिये पितृवत था। वे सभी को विशेष आत्मा(वी.आई.पी.) मानकर उनसे संभाषण करते। उन्हों ने कभी किसी को व्यक्तिगत रूप से फटकार, ललकार या डाँट-डपाट नहीं दी बल्कि वे सदा सभी से सुकोमल, सुमधुर, सद्भावना पूर्ण और सम्मान सहित शब्दों से वार्ता करते। सदा उच्च स्थिति में रहते हुए, महानता के शिखर पर बैठे हुए वे सभी को महान बनाने की चेष्टा करते और उनके साथ मर्यादित व्यवहार, श्रेष्ठ वर्ताव, शालीन रीति-नीति और सम्मान पूर्ण विधि से वर्ताव करते । उनके मीठे बोल, उनकी मीठी दृष्टि, उनके मधुर व्यवहार, ज्ञान की मीठी बातें और उनकी मीठी मुस्कान और 'मीठे बच्चों' कहकर पुकार ने के कारण ही तो उनके निवास का नाम पडा- 'मधुबन तपोवन'।

आज भी बाबा का वह कमरा सेवा के निमित्त है। उस कमरे में वही चारपाई मौजूद है, वही गद्दी बिछी है, वहाँ सफेद अलमारी भी है, परंतु बीच की एक दिवार निकाल दी गई है जिसमें वह कमरा अब बडा हो गया है। बाबा ने उस कमरे में रात-दिन जो सेवा की, वह अविनाशी हो गई। उस वायुमण्डल में त्याग, तपस्या, सेवा, सादगी, स्नेह, माधुर्य, वात्सल्य, दुलार के प्रकम्पन, स्पन्दन और सुगन्धित तरंगे अभी भी वहाँ बैठने वाली आत्माओं को प्रभावित करती हैं। बाबा का वहाँ रखा ट्राँस-लाईट आज भी संदेश और निर्देश देता हुआ तथा स्नेह और वात्सल्य की भाव तरंगों से तरंगित करता हुआ तथा दृष्टि लेने चाहने वालों को दृष्टि देता हुआ, पूछने वालों को प्रश्न का उत्तर और मिलना चाहने वालों से मिलन मुलाकात करता हुआ प्रतित होता है। बाबा फर्श से अर्श पर चले जाने के बाद भी अथवा व्यक्त से अव्यक्त होने के बाद भी उस कमरे में आने वालों से मिलते हैं, उनको सूक्ष्म वरदान देते हैं, उन्हें कमियाँ दूर करने की विधि बताते हैं और उन्हें वहाँ से खाली नहीं भेजते वे उनहें कोई न कोई सूक्ष्म सौगात देते हैं। कोई पृथ्वी पर स्थित निकट स्थान से आता है और कोई दूर से परंतु बाबा सूक्ष्म लोक से आकर स्नेही वत्सों से स्नेह पूर्वक मिलते हैं।

आओ, आज हम उस ऐसे मीठे बाप को जान व जिगर से, तन और मन से अपनी हर तार, हर नस से, दिल की तह से शुक्रिया अदा करें कि जिसने रुहानी प्यार से हमें 'मीठे बच्चे' कहा हमारे लिए अपनी सर्व सम्पत्ति और सर्वस्व लगा दिया, हमारे लिये अपने सम्पत्तिमय जीवन को समाप्त कर, अपनी नींद व अपने आराम को भी छोडकर, लोगों की निन्दा, कटु-आलोचना, विरोध और हंगामों को सहन कर हमें मनुष्य से देवता बनाने के लिए अपनी हड्डी-हड्डी भी दे दी कि जिन अस्थियों पर भी बना हुआ शान्ति स्तम्भ आज हमें विश्व को शान्ति देने की प्रेरणा देता है और हम में सेवा, त्याग, तपस्या तथा एकता के नये प्राण फूँकता है।

भागीरथ बाबा

- बी.के. जगदीशभाई, दिल्ली

अठारह जनवरी का दिन हमारे मन में कई प्रकार की संस्मृतियाँ उभार देता है और कई प्रकार की भाव-तरंगे पैदा करता है। इस दिन के निकट आने पर ब्रह्मा बाबा के साकार जीवन रूपी गुण सागर का जब हम मंथन करते हैं तो हमें नये-नये हीरे और रत्न प्राप्त होते हैं। बाबा के जीवन वृत्त की रील जब मन के सामने से गुजरती है तब किसी दृश्य को देखकर मन हर्ष में हिलोरे लेने लगता है, तो किसी दूसरे दृश्य से ऐसा प्रेम-पल्लवित हो उठता है कि नैन भीग जाते हैं। बाबा के जीवन में अनेकानेक विशेषताओं और महानताओं को देख कर मुख से स्वत: ही यह शब्द विनिसत होते हैं - 'वाह, प्यारे बाबा, वाह।'

1. शिववाबा से ऐसी घनिष्ठता का आधार

परंतु सोचने की बात है कि बाबा के जीवन में वह कौन-सी अद्भूत महानता थी कि उन्हें शिवबाबा की ऐसी निकटता प्राप्त हुई ? जब वे साकार रूप में थे तब भी शिवबाबा उनके तन रूपी कुटिया में उनके संग रहते रहे और जब से वे अव्यक्त हुए हैं तब से भी वे प्रकाशपुरी में उनके संग रहते हैं। शिवबाबा से ऐसी घनिष्ठता प्राप्त कराने वाली भी तो विशेषताएँ ब्रह्माबाबा में रही होंगी। शिवबाबा ने उन्हें ऐसा अपना लिया, उनसे ऐसी मित्रता जोड ली, ऐसा नाता बना लिया, कि दोनों सदा अंग-संग ही रहते रहे और अब भी एक साथ ही हैं। जिस परमपिता की एक झलक के लिए भी द्वापर युग के भक्तिकाल में भक्तराज तरसते थे अथवा जिससे मानसिक रूप से सम्पर्क मात्र स्थापित करने के लिए विविध प्रकार के 'योगी' एकाग्रता का धोर अभ्यास करते रहे, उस शिवबाबा ने ब्रह्माबाबा को ऐसा तो अपना लिया कि हम लगभग आधी शताब्दी से दोनों का अटूट और घुला-मिला सम्बन्ध देखते हैं। प्रभु प्रेम के कई आकांक्षी तो मुक्ति प्राप्त करने के बाद आत्मा के परमात्मा में लीन होने की असम्भव बात कहते आये परंतु साकार में भी प्रभु की ऐसी मैत्री, ऐसा पारस संग, ऐसी निकटता और अव्यक्त होने पर भी ऐसा मेल-मिलन तो किसी ने सोचा ही नहीं होगा। अत: विचार करने की बात है कि बाबा के जीवन की अनेक अनमोल विशेषताओं में से ऐसी कौन-सी विशेषता थी जिससे उन्हें यह परम सौभाग्य प्राप्त हुआ।

इसका उत्तर पाना कठिन नहीं है क्योंकि बाबा की वह विशेषता प्रत्यक्ष ही थी। वह यह कि 'बाबा के मन का अटूट नाता एक शिवबाबा ही से था। बाबा को और किसी चीज की चाह थी ही नहीं। न उन्हें मान की इच्छा थी, न शान की, न धन की, न सत्ता की, न गुरुडम की, न भभके की। वे तो सदा शिवबाबा ही के गुण गाते थे।' उन्होंने बम्बई के हैंगिंग गार्डन के बूट को देखकर यहाँ तक जो कह दिया कि 'यह तन तो शिवबाबा का 'लाँग बूट' है, यह शिवबाबा की कुटिया है सो भी ऐसी कि मरम्मत माँगती रहती है।' उन्हों ने अपने सभी नाते शिवबाबा से जोडे हुए थे। उनके प्रारंभिक वाक्यों में से एक यह था कि - 'पाना था सो पा लिया और क्या बाकी रहा ?' उनके पास पहले जो भी सम्पत्ति थी वह सब भी उन्हों ने शिवबाबा को समर्पित कर दी थी। उन्हों ने उसके बाद एक पैसा भी अपना नहीं समझा। कई वर्षो तक वे अपने पत्रो के अंत में भी हस्ताक्षर से पहले लिखते थे - 'आज आकिंचन कल विश्व महाराजन (बेगर टू प्रिन्स)।' वे भोजन करते तो भी शिव बाबा की याद में अथवा शिवबाबा के साथ ही। मधुबन में तब प्राय: नित्य प्रति ही भोग लगा करता । ब्रह्माबाबा कहते कि 'शिवबाबा के साथ मनाने के यही तो दिन हैं।' जब वे शिवबाबा के मनोमिलन और सूक्ष्म वार्तालाप की बात समझाते, तब शिवबाबा के प्यार में उनके हाव-भाव देखने योग्य होते। उनके अपने व्यक्तित्व या व्यवहार से यदि कोई प्रभावित होता और महिमा करते तो भी वे यही कहते कि - 'महिमा एक शिवबाबा ही की करो जिसने हम सभी को उच्च बनाया है, हम तो कुछ भी जानते नहीं थे।'

शिवबाबा के बनाये हुए जो भी नियम थे और जो भी निर्देश थे, उनमें से किसी एक की भी, रंच मात्र भी अहवेलना नहीं की। उनकी बातचीत से तथा दिनचर्या से, बस, यही महसूस होता था कि जैसे भक्ति मार्ग में वे श्री नारायण के चित्र को सदा अपने साथ रखते थे, अब परमपिता शिव का परिचय होने पर वे अपार प्रेम से शिवबाबा को ही अपना सर्वस्व मान कर उनको अपने साथ ही रखते हैं। गोया उनकी अटूट प्रीति थी। जो ज्ञान-यज्ञ उन्हों ने स्थापित किया उसमें उनके लौकिक, नजदीकी सम्बन्धी भी थे परंतु अब बाबा के सभी घनिष्ठ सम्बन्ध प्रथमत: शिवबाबा ही से थे... अन्य सभी को वे शिवबाबा के वत्स समझकर संभालते थे। वे कहा भी करते थे कि 'जब प्राण तन से निकले तो केवल एक शिवबाबा ही की याद हो और उससे पहले, जीवन काल में उन्हीं के संग खायें, उन्हीं के संग बैठें, उन्हीं के साथ ही हमारे सभी नाते हों।' यही उनकी ऐसी प्रीति थी जिस कारण से उन्हें शिवबाबा के इतने निकट होने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ।

2. पिता तुल्य संरक्षण, स्नेह और सहायता देने में निपुण

शिवबाबा से ऐसी घनिष्ठता के कारण उनमें उत्तम गुण थे। एक मानव आत्मा होते भी वे अन्य सभी मनुष्यों से भिन्न थे। उनमें पिता-पन का प्रेम था। जैसे पिता अपने सभी बच्चों को अच्छा पद प्राप्त करते देख हर्षित होता है, वैसा ही हर्ष उन्हें होता था। संसार में हम देखते हैं कि यदि किसी व्यक्ति के बच्चे जीवन में उच्च स्थान प्राप्त कर लेते हैं तो वह सभी से यह कहते हुए खुश होता है कि उसका एक बच्चा डॉक्टर है, दूसरा प्रोफेसर है और तीसरा इंजीनियर। बच्चों में से तो कोई ऐसा भी होता है जो दूसरे भाई को अधिक पैत्रिक सम्पत्ति मिलते देखकर इर्षा भी करता हो या सांसारिक दृष्टि से कम सम्पन्न होने पर अपने दूसरे भाईयों से द्वेष भाव रखता हो। परंतु एक योग्य पिता की तो सदा यही इच्छा बनी रहती है कि उसके सभी बच्चे सुयोग्य हों और सदा सुखी हो। ऐसी ही भावना बाबा की अन्य सभी मानव आत्माओं के प्रति रहती थी। वे सदा यही कहते कि - 'अमुक वत्स विवाहित होने पर भी पवित्र है, अत: वह संन्यासियों से भी आगे हैं। कोई बच्चा ऐसी उच्च और इतनी अधिक ईश्वरीय सेवा करता है कि वह बाप का दिलतख्तनशीन है। कोई इतना चरित्रवान है और गुणवान है कि बाबा भी उसकी महिमा करते हैं।' वह वत्सों की महिमा करते हुए यह भी कह देते थे कि — 'ये बाबा से भी अधिक सेवा करते हैं अथवा यह अन्य आत्माओं को ज्ञान समझाने में बाबा से भी अधिक होंशियार है।' इस प्रकार दूसरी आत्माओं को तीव्र पुरुषार्थ करते देखकर अथवा जीवन में सफल होते देखकर वे खुश ही होते थे।'

फिर जैसे पिता अपने बच्चों का संरक्षक भी होता है, वे भी वैसे ही स्नेह एवं संरक्षण पूर्वक व्यवहार करते थे। वे प्राय: वत्सों को पत्र लिखकर उनका हर्ष, उल्लास, उत्साह और उमंग बढ़ाते रहते थे और उन्हें मार्ग प्रदर्शना देकर माया के कष्टों से उनका संरक्षण करते थे। यदि किसी का कई दिन तक पत्र न आता तो वे उसे विशेष रूप से स्नेह-युक्त शब्दों में लिखते थे कि - 'बच्चे, पत्र न आने से बाप को बच्चों की अवस्था के बारे में ख्याल चलता है, अत: जल्दी-जल्दी पत्र लिखा करो।' कितने ही लोग ऐसे हैं जो पहले अपने लौकिक सम्बन्ध तथा व्यापार में भी शायद ही कभी किसी को पत्र लिखते होंगे परंतु अब बाबा के पत्र जब सेवाकेन्द्र पर आते और उनमें इनके लिये भी याद, प्यार, संदेश और निर्देश होते तो अब वे भी बाबा को स्नेह से पत्र लिखते थे। एक सांसारिक मनुष्य के पास तो तार कभी-कभी ही आती है और वह भी तभी जब कोई निकटवर्ती सम्बन्धी सख्त बीमार होता है या किसी की मृत्यु हो जाती है परंतु बाबा तो बच्चों को ईश्वरीय सेवार्थ संदेश देने के लिए तार कर दिया करते थे। इससे सहयोग और संरक्षण देकर बाबा ने आत्माओं का परमपिता शिव के साथ मन का स्नेह जोडा और उन्हें पुत्र तुल्य व्यवहार करना सिखाया। अलौकिक पिता का कर्तव्य निभाते हुए उन्हों ने अलौकिक अर्थात आध्यात्मिक वत्स का नाता निभाने का पाठ पढ़ाया।

3. अभय और शक्ति रूप बनने का वरदान

बाबा के गुणों का जितना वर्णन करें उतना थोडा है। उन्होंने हर वर्ग में अलौकिकता का संचार किया था। माताओं -बहिनों को ईश्वरीय सेवा के निमित्त मुख्य स्थान देते हुए उन्हों ने उनमें शक्ति रूप धारण करने की भी प्रबल प्रेरणा दी। उन्हों ने कहा - 'देखो, आप सभी आत्माओं का आदि स्वरूप चतुर्भूज है। चतुर्भूज की चार भुजाओं में से दो स्त्री की और दो पुरुष की अर्थात् दो श्री लक्ष्मी की और दो श्री नारायण की प्रतीक हैं। अत: आप स्वयं को एक 'अबला नारी' न मानकर चतुर्भूज समझो। गोया आप में नारी और नर दोनों रूपों के संस्कार हैं। अत: स्त्री रूपी चोले को देखकर डरने का केाई कारण नहीं हैं क्योंकि वास्तव में तो आप अलंकृत हैं - शंख, चक्र, गदा और पदम आपके अलंकार है।' इस प्रकार 'शक्ति रूप' और चतुर्भूज रूप की स्मृति दिला-दिलाकर कन्याओं माताओं को जिन्हें लोग अबला मानते हैं और जो स्वयं भी स्वयं को नारी मानते हुए हीन भाव लिए रहती हैं, उन्हें ज्ञान शक्ति, योगशक्ति, और पवित्रता की शक्ति देकर कल्याण के निमित्त अभय बनाया। जो कभी किसी से बात करने में भी पहले संकोच करती थी, अब वे मंच से निर्भीक होकर 'आत्मा और परमात्मा' के गहन विषयों पर सुगमता और सरलता से प्रभावशाली भाषण करती थी, जो पहले हर समस्या के समाधान के लिए पुरुषों पर निर्भर करती थी, अब वे पुरुषों को भी परामर्श देकर उनकी समस्याओं का भी हल कर देती हैं। इस प्रकार ब्रह्माबाबा ने हर वत्स को कुछ न कुछ वरदान देकर उसे ईश्वरीय कार्य में सहयोगी बना लिया। इसी कारण ही तो चित्रकार प्रजापिता ब्रह्मा की हजार भूजाएँ दिखाते हैं।

4. सभी में योग्यता भरने की कला में निष्णात

वरदान देकर योग्य बनाना और ईश्वरीय सेवा में जुटाना तो ब्रह्मा बाबा की विशेष कला थी। किसी को उन्होंने भवन कला(निर्माण कला) में निष्णात और निपुण बना दिया कि उसने इतना बडा पाण्डव भवन, योग भवन आदि का निर्माण करा डाला तो किसी अन्य को हिसाब-किताब की कला सिखाकर अथवा शीघ्र नोट लेने का वरदान देकर लेखाधिकारी अथवा शीध्र लिपिक बना दिया। जो पहले किसी स्कूल या कालेज में भी उस विद्या को नहीं पढे थे, उन्हें पढे लिखों से भी अधिक कुशल और अनुभवी बना डाला यह बाबा की कमाल थी। आज वे वत्स इतने अलौकिक रूप से इतनी विशाल सेवा करने में तत्पर हैं कि उनके कार्य कुशल,

कलाकृत्य को देखकर लोग आश्चर्यन्वित होते हैं कि किसी कलह-कलेश और रगडे-झगडे के बिना वे इतना विशाल कार्य करा रहे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि वे योगियों में शिरामणि तो थे और स्वयं गुणों से भरपूर भी थे। परंतु विशेष बात यह है कि वे दूसरों में गुण भरने, उन्हें वरदान देने, उनमें योग्यता लाने, उनकी उन्नति में खुश होने, उनको संरक्षण, स्नेह एवं सहयोग देने में भी कलावान थे। उनकी सदा स्थायी मुस्कान, उनके नेत्रों में शिवबाबा की याद की झलक, उनके महावाक्यों में माधुर्य और रुहानियत उनके हर कदम में लोक संग्रह, इतना महान होने पर भी उनकी नम्रता, विकट परिस्थितियाँ सामने आने पर भी उनकी निर्भीकता एवं निश्चिंतता, उनकी सात्विकता, उनका सन्तोष और उनका झर-झर करता हुआ प्रेम का साश्वत झरना, उनकी अमिट प्रभु प्रीति और अटल निश्चय, उनका बहुमुखी व्यक्तित्व अद्वितीय ही था जिससे कि वे मानव मात्र के पिता श्री बनने के पूर्णत: योग्य थे।

निराले बाबा

- वी.के. जगदीश भाई, दिल्ली

१८ जनवरी के साथ बाबा की यादें अटूट रीति से जुट गई हैं। उन यादों में अनेकानेक वृतान्त एक चल चित्र की तरह मानस चक्षु के सामने से गुजर जाते हैं। वे सभी चित्र जीवन पर एक विशेष प्रभाव छोड जाते हैं। और ये मन भावन प्रभाव फिर-फिर ताजा होते रहते हैं। उनमें से थोडी-सी यादें जो मन में उभर आयी हैं, उन्हें हम यहाँ शब्द चित्रों में प्रस्तुत करने का यत्न करेंगे।

1. नेष्ठी और देहातीत बनाने वाली शक्ति शाली दृष्टि

मधुबन में बाबा के सम्मुख अनेक बहन भाईयों को बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ही है और सभी के अनुभव भी सुनने के योग्य हैं। बाबा के सम्मुख बैठने का सौभाग्य लेखक को भी बहुत बार प्राप्त हुआ। हर बार के अनुभव की एक अनोखी ही दास्तान और एक निराली ही कहानी है। सन् १९५५-५६ में मधुबन में थोडे ही से बहन-भाई थे। तब मधुबन में भोग के समय भी हम थोडें से ही लोग मातेश्वरी और पिताश्री जी के सामने बैठे होते। तब हम बाबा से दृष्टि लेने पर जो अनुभव करते, उस निराले अनुभव का स्मरण करके आज भी रोम-रोम में एक बिजली की लहर सी दौडती हुई मालूम होती है। दृष्टि लेते हुए तुरंत ही ऐसे लगता कि यह आत्मा उडते-उडते शिवबाबा के निकट जाकर पहुँची है। अपलक नेत्रों से आँसू बहने लगते परंतु मन को ऐसा सुख अनुभव होता कि आँखें पोंछने अथवा आँखों को झपकाने की सुध ही नहीं रहती और यदि कहीं ऐसा भान आ भी जाता तो भी अव्यक्त यात्रा के अनुभव से नीचे उतर ने को मन तैयार न होता। इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के सम्पर्क में अपने से पहले हमने ग्रन्थों में नेष्ठी-नेत्रों की बात पढ तो रखी थी परंतु नेष्ठी-नेत्रों का साक्षात्कार तो बाबा के सामने बैठने से ही हो पाया। बाबा के नेत्रों की ओर देखने से अपने शरीर को भूलाने के लिये कुछ भी पुरुषार्थ न करना पडता और ऐसा लगता कि प्रकाश की गति से आत्मा अशरीरी होकर कहीं दूर-दूर आकाश से पार, ज्योति के देश में जा रही है। यह अनुभव जितना ही सूक्ष्म होता था, उतना ही गहरा और उच्च पराकाष्ठा वाला होता था जो बाद में भी आत्मा की स्थिति को अव्यक्त बनाए रखता था। इससे स्पष्ट ही यह समझा जा सकता है कि बाबा की योग स्थिति कितनी परिपक्व, शक्तिशाली एवं गहन रही होगी और स्वयं कितने देहातीत एवं अव्यक्त अवस्था में रहते होंगे।

2. शिव बाबा से अनन्य प्रीति

हम भोग की बात कर रहे थे। जिस प्रात: को भोग लगाना होता, उससे पहले की रात्रि को विश्राम करने से पूर्व बाबा संदेशी को बुलाते और कहते - 'बाबा, को दिल व जान, सिक व प्रेम से निमन्त्रण देना और कहना कि कल भोग स्वीकार करें।' जिस समय बाबा ऐसा कह रहे होते, उस समय बाबा के नेत्र बाबा का मुखमण्डल और उनके हाव-भाव देखते ही बनता। बाबा केवल औपचारिकता के नाते से 'दिल व जान, सिक व प्रेम' आदि शब्द प्रयोग न कर रहे होते बल्कि इन्हीं भावों का स्वरूप होकर शिवबाबा की ओर आँखें करते हुए पूरे हृदय से कहते। बाबा जब यह संदेश दे रहे होते तो कई बार जब यह लेखक भी वहाँ मौजूद होता और उसका भी मन कहने लगता कि संदेशी मेरी भी याद बाबा को दे दे। तब बाबा हमारे मन के भावों को जानकर संदेशी को कहते - 'बाबा को कहना, जगदीश बच्चा भी बहुत-बहुत याद दे रहा था।' ऐसा कहकर वे मुस्कराते हुए प्रेम भरी आँखों से हमारी ओर देख लेते कि हम उछल कर बाबा को अपनी बाँहों में ले लेते। औरबाबा हमें अपनी बाँहों में ले लेते। फिर जब हम बाबा की ओर देखते तब भी हम यही पाते कि हमें स्नेह का स्पर्श देते हुए भी बाबा स्वयं शिवबाबा ही की याद में है क्योंकि उनके मुखारविन्द से ये शब्द प्रवाहित होत - 'बच्चे, तुम बाबा को ज्यादा याद करते हो या बाबा तुम्हें ज्यादा याद करते हैं? देखो बच्चे, बाबा कितना मीठा है। उसे याद करते ही कितना खुशी का पारा चढ जाता है। ऐसे बाबा को भला कैसे भुलाया जा सकता है?'

फिर जब भोग लगता तब भी कभी बाबा कहते - 'देखो तो, यह संगम का समय कितना सुहावना है। डायरेक्ट शिवबाबा के यज्ञ से यह भोग प्राप्त करने वाले आप बच्चे कितने सौभाग्यशाली हो भले ही देवताओं को सब पदार्थ प्राप्त होंगें परंतु शिवबाबा का यह भोग तो उन्हें भी नसीब में नहीं होगा। ओहो.... बच्चे, कोई सोचे तो उसके कपाट खुल जायें। शिव बाबा का यज्ञ प्रसाद अथवा भोग बाबा के साथ भोजन करने का अवसर यह कोई कम बात थोडी ही है।'

बाबा की एक-एक बात से ऐसा लगता कि शिवबाबा से उनका इतना घनिष्ठ प्यार है, उनके आत्मन में शिव बाबा की प्रीति ऐसे तो मिल गई है कि वो उनके हर बोल एवं हर कर्तव्य में स्वाभाविक रूप से झर-झर होकर प्रवाहित होती है और दूसरों को भी उसके रोम-रोम में बहा देती है। कभी बाबा कहते - 'मैं उसकी सजनी हूँ। फिर कभी यह भी कहते कि वो मेरी वही है। कभी वे कहते - मैं उसका मुरब्बी बच्चा हूँ। शिव बाबा मुझ से बहुत प्यार करता है।' जब वे ऐसा कह रहे होते तब उनकी मुख मुद्रा और उनके नैन-चैन देखने वाले होते। अपना अनुभव सुनाते हुए वे कहते कि स्नान करते समय मुझे ऐसा लगता है कि बाबा ही इन हाथों से लोटे भर-भर कर मुझे नहला रहे है। इसी प्रकार, भोजन करते हुए बाबा के हाथों की गति इस प्रकार की लगती जैसे कि वे ऐसा अनुभव कर रहे हों कि मानो शिवबाबा ही उनहें एक बालक की तरह खिला रहे हों। सचमुच, उनका इतना प्यार था, इतना प्यार था कि दोनों बाबा अंग-संग रहते। संसार में ऐसी कई प्रसिद्ध प्रेम कहानियाँ सुनी गई है जिनके अनुवाद देश-देशान्तरों में विविध भाषाओं में हुए हैं परंतु ऐसा अटूट, एक रस, निर्मल, सर्वांगीण सवोच्च प्यार न कभी सुनने को, पढने को और न कल्पना करने को मिला है और न मिलेगा।

बाबा की याद और प्यार की लम्बी दास्तान कहाँ तक सुनायें, कैसे सुनायें। बाबा की सारी अलौकिक जीवन कहानी ही एक सर्वोच्च प्रेम कहानी है। जैसे कोई प्रेमिका अथवा प्रेमी अपने स्नेह भोजन के लिए अपना सर्वस्व लुटा देता है, ऐसा तो बाबा ने इस प्रेम द्वार में प्रवेश करते ही पहले ही क्षण पल में कर दिया। हम मीरा के गीत सुनते हैं कि वह प्रेम दीवानी हुई और उसने लोक-लाज खोई, परंतु बाबा की जीवन गाथा में तो वह प्रेम का वह सर्वांगीण रुप में पनपा है। बाबा ने उस प्रभु प्रेम में न केवल लोक लाज खोई बल्कि संसार में जितने भी रूपों में अथवा जितने भी सम्बन्धों में प्रेम की अभिव्यक्ति होती है, उन सभी सम्बन्धों में शुद्ध प्रेम की एक तीव्र धारा बाबा के जीवन में देखने को मिलती और बाबा का प्रेम एक ऐसे प्रभु के प्रति प्रेम नहीं था जिसका कोई दैहिक रूप हो और जिसके बारे में आत्मा को केवल धुँधली ही पहचान हो बल्कि बाबा का प्यार उस प्रियतम के पूर्ण परिचय को लेकर उससे वैसे ही ताल-मेल बनाये हुए था जिसमें विरह का नाम नहीं था, विरह अग्नि नहीं थी, व्यथा और पीडा को स्थान नहीं था बल्कि माधुर्य, लालित्य और आत्मीयता का परम उत्कर्ष था।

3. ज्ञान और प्रेम का अद्‌भूत मेल

यह ठीक है कि बाबा में ज्ञान की एक अथाह गहराई थी, तभी तो उनके जीवन में ज्ञान की एक अजीब मस्ती झलकती थी और तभी वे सदा यही कहते कि यह ज्ञान अनमोल और अविनाशी रत्न है। परंतु वह ज्ञान कोई शुष्क ज्ञान न था। ऐसा भी नहीं कि वे ज्ञान को प्रेम की केवल पुट देते थे बल्कि यों कहना ज्यादा ठीक होगा कि वे जिस ज्ञान की बात कहते वह ज्ञान प्रेम पूर्ण था। ज्ञान और प्रेम का उनके जीवन में ऐसा ताल-मेल था कि दोनों को अलग-अलग बताना असंभव-सा था। जो उनके सम्पर्क में आये हैं, उनमें से कोई तो कहेगा कि उनके जीवन में प्रेम अधिक था और अन्य कोई कहेगा कि वे प्रारंभ में प्रेम का आश्रय देकर ज्ञान की सुदृढ मित्ति पर टिकाने की कोशिश करते। वास्तव में यह देखने वाले की दृष्टि का अन्तर है और अपनी-अपनी जगह दोनों ठीक भी है। वास्तव में बाबा के ज्ञान के बोल प्रेम के बिना होते ही न थे और उनके प्रेम के बोल में सदा ज्ञान भरा रहता था और प्रेम तथा ज्ञान दोनों का लक्ष्य मनुष्यात्मा को पवित्र और योगी बनाना ही था।

4. ज्ञान और प्रेम साहित्य वितरण के रूप में

बाबा ईश्वरीय ज्ञान को इतना मूल्यवान समझते थे कि 'उनहों ने निर्देश दिया हुआ था कि ईश्वरीय ज्ञान के साहित्य को बेचा न जाये क्योंकि बेचने का अर्थ इसका मूल्य चुकाना है जबकि वास्तव में यह अनमोल है इसका मूल्य कोई चुका नहीं सकता।' पुनश्च, वे यह भी कहते है कि - 'इस ज्ञान को सुन्दर से सुन्दर रूप में, अच्छे से अच्छे कागज पर छपवाया जाये क्योंकि इतने उच्च ज्ञान को रद्दी कागज पर छपवाने और इसकी घटिया-सी छपाई कराना गोया इसके मूल्यको न समझना है।' वे कला और सौन्दर्य को भी महत्व देते तथा सुपठनीयता को भी। इस रीति से साहित्य सांसारिक दृष्टि से महँगा हो जाता है। इस पर भी बाबा कहते कि - 'इसे बेचना नहीं हैं क्योंकि सभी मेरे बच्चे ही तो है, उन्हें साहित्य दाम पर थोडे ही दिया जायेगा।' गोया ज्ञान के साथ-साथ मनुष्यात्माओं के प्रति उनका प्रेम भी उतना ही था कि वे कहते कि इसका मूल्य न लो। परंतु हुआ यह कि - 'मनुष्य आत्मायें रूपी बच्चे अपने अलौकिक पिता के इस प्रेम के पात्र न बन सके। कहीं भी हम मेज पर साहित्य रखते तो लोग उस पर छीना-झपटी करने लगते और कई-कई प्रतियाँ उठा

ले जाते। तब भी बाबा के प्रेम में कभी कमी नहीं आई। बाबा ने इसे आय का साधन नहीं बनाया बल्कि प्रेम वश इसे जन-जन को वितरीत करने की सीख दी ताकि कोई आत्मा इससे वंचित न रह जाये।' इसके अतिरिक्त बाबा ने कई अन्य अलौकिक तरीके बताये। जब अंग्रेजी भाषा में रीयल गीता छपवाई गई तब बाबा ने उसके प्रारंभ में एक सूचना संलग्न करने का निर्देश दिया। उसमें लिखा था कि इसमें ज्ञान का अनमोल खजाना है। इस पुस्तक का केवल उतना ही दाम रखा गया है जितने इसके कागज और छपाई पर आया है। यदि पढ़ने पर किसी को पसन्द न आये तो वह ठीक हालत में इसे वापस लौटाकर अपने दाम वापस ले जाये। वह इतनी बडी पुस्तक थी और उसके दाम कम थे कि उसे लेने वाले आश्चर्यान्वित होते थे। आज तक भी लोग उसकी प्रतियाँ माँगते हैं।

5. हर परिस्थति में बाबा की याद

बाबा का शिव बाबा से ऐसा तो ज्ञान युक्त प्यार था कि वे हर परिस्थति को निमित्त बनाकर उनकी याद में रहते। वे कोई 'टोली' बाँटते तो भी पूछते - 'क्या शिवबाबा को याद किया है? और यदि कोई समस्या सामने आती तो भी कहते कि शिवबाबा को याद करो तभी पुरुषार्थ में पूर्णता आएगी।' जैसे किसी छोटे बच्चे को प्रात: जगाते ही माँ की याद आ जाती है और उसके मुख से 'माँ-माँ' शब्द ध्वनित हो जाते हैं अथवा जैसे किसी प्रौढ व्यक्ति को अपने परिवार की सुध बनी ही रहती हैं, वैसे ब्रह्माबाबा को शिवबाबा की प्रेम विभोर स्मृति बनी ही रहती। इसलिये वे सदा उस ही की चर्चा करते। एक बार बाबा शरद ऋतु में वत्सों सहित पहाडी पर घुमने गये तो लौटने के समय तक धुन्ध इतनी बढ गयी कि दो फुट आगे का मार्ग भी दिखाई नहीं देता था। सभी थोडी देर रुके रहे ताकि धुन्ध कम हो जाये। परंतु धुन्ध और कोहरा कम हुआ ही नहीं। तब बाबा ने मुस्कराते हुए संदेशी को कहा - 'ध्यानावस्था में जाकर बाबा से कहो कि वापस जाना है, वहाँ सभी हमारी प्रतिक्षा कर रहे होंगे, परंतु रास्ता ही स्पष्ट दिखाई नहीं दता....। संदेशी अव्यक्त स्थिति में, ध्यानावस्था में गयी और उसने बाबा को यह बात कह सुनाई... । खैर, वह एक अलग ही किस्सा है परंतु प्रस्तुत प्रसंग में इसका उल्लेख करने का भाव यह है कि लौकिक, स्थूल परिस्थितियों को भी बाबा शिवबाबा की याद के निमित्त बना लेते। बस, 'बाबा-बाबा', 'मीठे बाबा' ही की याद उनके मन में बनी रहती। जैसे रात्रि को दो घनिष्ठ दोस्त, छोटे बालक, सोने के लिए अपने-अपने घर चले जाते हैं और प्रात: होते ही फिर एक-दूसरे को उसके घर से बुला कर पढ़ना-खेलना आदि शुरु कर देते हैं, ऐसे ही बाबा के बिना रह ही न सकते। वे तो पूरी रात्रि भी एक-दूसरे से विदा न होते। प्रात: दो-ढाई तीन बजे तो बाबा उठ जाते ही परंतु वे तो कहा करते कि मैं बाबा ही के साथ सोता हूँ। यह प्यार और याद का कैसा ताता-नाता है।

6. शिव बाबा के यज्ञ की संभाल

उन दिनों बाबा प्रात: क्लास के बाद विश्राम कक्ष में भी वत्सों से अनौपचारिक रूप से ज्ञान चर्चा किया करते। यह वही कमरा था जहाँ आज-कल दीदीजी का कार्य स्थान है। एक बार बाबा वहाँ वत्सों के समक्ष ज्ञान चर्चा कर रहे थे। वत्सों ने देखा कि बाबा के एक पाँव के अंगूठे को छोटी-सी पट्टी बन्धी हुई थी। एक वत्स ने पूछा - 'बाबा, यह क्या हुआ है?' बाबा ने कहा - 'बच्चे, रात्रि को जब सोया हुआ था तो स्वप्न में देखा कि इस कमरे के सामने वाली पहाडी पर वत्सो के वस्त्र सुख रहे हैं। (आज-कल जहाँ ऑफिस और जिज्ञासु कक्ष है, पहले वहाँ पहाडी थी।) तब यह भी देखा कि कुछ पशु अन्दर घुस आये हैं और वे कपडों को उठाकर चबाना चाहते हैं। तो बाबा ने सोचा कि उठकर इन्हें हटाना चाहिए और शिवबाबा के यज्ञ की चीजों को हानि पहुँचाने से बचाना चाहिए।' बाबा बोले- 'मैंने जल्दी से जाने की कोशिश की तो स्वप्न अवस्था में ही जैसे ही पाँव को आगे बढाया वैसे यह दरवाजा पाँव से थोडा-सा लगा। उससे बहुत मामूली-सी झरीट आई है। बच्चे, थोडा बहुत जो हिसाब किताब है, वह तो सामने आता ही है और चुक्ता होता जा रहा है। हम ब्राह्मणों को इस यज्ञ की हरेक चीज की संभाल तो करनी ही है न। बच्चे, बाबा हर बात का ध्यान रखता है कि कहीं बच्चों की गफलत से शिव बाबा के यज्ञ की कोई चीज का नुकसान न हो। इसलिए बाबा यहाँ समय निकाल कर एक-आध चक्कर लगा कर भी देखते हैं कि कहीं कोई वस्तु व्यर्थ तो नहीं जा रही है।' इस प्रकार बाबा न केवल प्रीति पूर्वक याद ही करते और न केवल ज्ञान में रमण ही करते बल्कि कर्तव्य करने में भी किसी से पीछे न रहते बल्कि सभी से अधिक उन्हें ही सेवा तथा यज्ञ कार्य का ख्याल रहता गोया शिवबाबा के प्रति उनका जो घनिष्ठ प्यार था वह उन्हें कर्म में भी प्रवृत्त करता था।

7. अद्‌भूत संतुलन

जैसे बाबा के जीवन में ज्ञान और प्रेम का अद्‌भूत ताल-मेल था वैसे ही बाबा के जीवन में हर प्रकार का संतुलन था। वे देही-अभिमानी बनने पर तो पूरा जोर देते ही थे परंतु देह के स्वास्थ्य और उसकी संभाल की अवहेलना करने को नहीं कहते थे। हाँ, वे यह तो कहते थे कि - 'बार-बार शारीरिक अस्वस्थता की चर्चा करके हमें अपने श्वास व्यर्थ नहीं गंवाने चाहिए क्योंकि आज जबकि प्रकृति तमोप्रधान है और हमने अज्ञान काल में विकर्म भी किये हैं तो रोग और व्याधियाँ तो शायद आयेंगी ही, अत: उन्हीं में मन-बुद्धि लगाये

रखने से तो हम शिव बाबा की याद के लिए समय निकाल ही नहीं पायेंगे। अत: वे कहते - बच्चे, दवा और दुआ दोनों से काम लो और सेवा की अवस्था में भी योग को न भूलो वरना देह-अभिमान का संस्कार पक्का होता जायेगा।' इस पर भी वे कहते कि यह शरीर मूल्यवान है, अत: इसे कोशिश करके ठीक रखो ताकि इस द्वारा ईश्वरीय सेवा भी कर सको और योग रूप पुरुषार्थ में विघ्न न पडे।

इसी प्रकार, 'बाबा अच्छा भोजन खाने के लिए भी कहते हैं परंतु साथ-साथ यह भी सम्मति देते कि अपने पेट पालन पर ही अधिक खर्च न करो और कि पदार्थ खाओ भले ही परंतु उनके प्रति आप में आकर्षण नहीं होना चाहिए।' अत: जीवन को शुष्क बनाने के लिए न कहते परंतु साथ-साथ सादगी, स्वच्छता और सात्विकता पर भी बल देते।

कोई स्थान बाग-बगीचा आदि घुमने या देखने के लिए योग्य होते तो वे उसे देखने या वहाँ तक जाने के लिए मना न करते बल्कि कई बार स्वयं ही कहा करते कि जाकर उसे देख आओ, परंतु दूसरी ओर वे यह भी कहते कि 'बच्चों में घूमने और देखने का शौक या व्यर्थ की हॉबी नहीं होनी चाहिए।' वे कहते कि किसी ऐतिहासिक अथवा प्राकृतिक सौन्दर्य के स्थान को देखो तो उसके देखते हुए भी अपनी योग स्थिति को मत छोडो और आने वाली सतयुगी सृष्टि के अतुल सौन्दर्य को मत भूलो। अत: वे कहते कि सदा यह याद रखो कि - 'शिवबाबा हमें जिस अद्भूत सतयुगी सृष्टि में ले जा रहे हैं, वह तो अतुलनीय है, उसकी आभा और शोभा, उसका सुख और सौन्दर्य अद्वितीय है।' इस प्रकार, बाबा विचित्र रीति से संतुलन रखते और योग स्थिति को बनाये रखने की ओर ध्यान दिलाते।

बाबा के जीवन के जिस पहलू की जितनी चर्चा करें उतनी कम है। उनके मुख पर सदा मुसकान होती परंतु वे अंर्तमुखी और गम्भीर भी होते, वे खूब टोली खिलाते और पिकनिक कराते परंतु साथ-साथ वे बाजार के खान-पान से मन हटा देते और मन की तृष्णाओं को भी शान्त करा देते, वे अथक रीति से सेवा करने तथा कर्म करने में प्रवृत्त करते परंतु वे उतना ही ध्यान अपनी मनोस्थिति और अपने परम पुरुषार्थ पर दिलाते और अलबेले पन से होने वाली अवर्णनीय क्षति के प्रति भी सचेत करते, वे मनोविनोद तथा खेल में भी ले जाते परंतु उतनी ही महत्ता वे विदेही अवस्था, उपराम अवस्था तथा मौनावस्था को भी देते। इस प्रकार, एक निराला और सर्वागीण व्यक्तित्व था बाबा का जो प्रेरक भी था, आकर्षक भी था, व्यावहारिक भी, लौकिक चर्चा में भी कुशलता लिये हुए था और अलौकिक तथा पारलौकिक दृष्टिकोण से भी सर्वश्रेष्ठ था।

गुण मूर्ति, ज्ञान मूर्ति, स्नेह मूर्ति प्यारे बाबा का अनोखा जीवन

- बी.के. जगदीश भाई, दिल्ली

शिवबाबा तो सर्व कल्याणकारी, सर्व समय सर्व गुणों के भण्डार और परिपूर्ण है ही परंतु साकार ब्रह्माबाबा के जीवन में भी इतने महान गुण हम अनुभव करते कि वे सबसे न्यारे, प्यारे और अद्भूत व्यक्तित्व के मालिक तो मालूम होते ही, साथ-साथ ऐसा भी होता था कि जो लोग उनके सम्पर्क में आते उन्हें भी उनके गुणों से इतनी प्रेरणा मिलती कि वे भी वैसे ही पावन बनना शुरु हो जाते, जैसे कि पारस के साथ लगने से पत्थर भी सोना हो जाता है अथवा सच्चे चन्दन के निकट के वृक्ष भी अपनी सुगन्धि लेकर सुगन्धि देने लगते हैं।

1. आत्मिक दृष्टि

उन अनेकानेक गुणों में से साकार बाबा में एक मुख्य गुण, जो कि उनके व्यक्तित्व में सदा झलकता रहता, उनके चारों ओर पवित्रता बिखेरता रहता, वायुमण्डल को शुद्ध करता रहता और लोगों के जीवन को पलट देता - वह था आत्मिक दृष्टिकोण बाबा सदा आत्मिक स्थिति में रहते हुए, सब देहों में आत्मा ही को देखते। बाबा की क्लास (ज्ञान सभा) में छोटे बच्चे भी बैठे होते, बुढे भी उपस्थित होते, ग्रामीण भी होते और बडे-बडे नगरों में ठाठ-बाठ से रहने वाले व्यक्ति भी विराजमान होते, परंतु बाबा सबको आत्मिक दृष्टि से देखते। यदि किसी अन्य उच्च वक्ता की सभा में छोटी आयु वाले बच्चे बैठे हो तो वह अपने मन में सोचेगा कि ये बच्चे भला मेरी गहरी बातों को क्या समझेंगे अथवा ये अत्यंत वृद्ध आयु वाले शक्ति हीन व्यक्ति मेरी इन अनमोल बातों को सूचन क्या करेंगे ? परंतु बाबा तो यही देखते कि यह भी आत्माएँ हैं। किसी की कर्मेन्द्रियों रूपी उपकरण अविकसित हैं, किसी के जर्जरीभूत परंतु इन आत्माओं का भी येन-केन प्रकारेण कल्याण तो करना ही है। अत: वे ऐसे सरल, स्पष्ट, सुबोध और सरस तरीके से अन्यंत उच्च अध्यात्म तत्त्वों को दर्शाते ताकि अबाल-वृद्ध सभी उसको भली भांति समझकर कल्याण के भागी बनें, तभी तो वे सभा के बाद छोटे या बडे, हरेक शरीर धारी आत्मा से अलग बैठ करके उस ज्ञान धन से लाभान्वित करते, उसे पितृत्व स्नेह देते, उसके मन की उलझनों को दूर करते और उसे आदि-मध्य-अंत का हाल सुनाते और उसे यथा-योग्य ईश्वरीय सेवा में लगाकर आत्मिक स्थिति में स्थित कर देते।

बाबा की आत्मिक स्थिति इतनी तो उच्च और प्रभावशाली होती कि उनके पास बैठे हुए लोग प्राय: ऐसा महसूस करते कि वे अपनी देह से न्यारे हो रहे हैं। वे भार शून्यता अथवा हल्का-पन अनुभव करते और उनके मन के अशुद्ध संकल्प शान्त हो जाते। उस समय उनका मन शुद्ध पुरुषार्थ एवं आध्यात्मिक जीवन के लिए प्रेरित होता और उन्हें अपने पतन की अवस्था खटकने लगती तथा पावन बनने की अंत:प्रेरणा मिलती। बहुत लोगों को कुछ समय के लिए इस संसार का अनुभव न रहता बल्कि उनके नेत्र मानो दिव्य दृष्टि से युक्त होकर बाबा के चारों ओर दिव्य आभा अथवा श्वेत अव्यक्त प्रकाश को देखते और उस समय का अलौकिक अनुभव उन्हें इतना भाता कि उनका मन चाहता कि बस, इस अवस्था का हम रस लेते ही रहें। उन्हें बाबा की भृकुटि में एक दिव्य ज्योति प्रकाशमान दिखाई देती ओर वे एक ऐसे आत्मिक सुख तथा सच्ची शान्ति का अनुभव करते कि बस, उसी में टिके रहना चाहते। वे वातावरण में एक अभूतपूर्व मौन तथा पवित्रता के प्रकम्पन अनुभव करते और उसमें बाबा जब उन्हें यह कहते - 'बच्चे, आप आत्मा हो यह शरीर तो पाँच तत्त्वों का नश्वर पुतला हैं...।' तो उस वचन की उन्हें साक्षात अनुभूति होती। ऐसा भी कई बार हुआ कि जिस धर्म का व्यक्ति उनके सामने आया उसे बाबा में अपने-अपने धर्म पिता का साक्षात्कार हुआ।

यह बाबा की आत्मिक दृष्टि का ही फल था कि वे विभिन्न धर्मावलम्बियों को भी आत्मा ही मानकर उनसे व्यवहार करते। एक बार की बात है कि बाबा के पास उत्तर प्रदेश के सेवा केन्द्र से आये हुए एक ग्रुप में खान वंश का एक मुसलमान भी था। उस दिन यज्ञ भोजन तैयार करने का कार्य उस ग्रुप ने स्वेच्छा से अपने जिम्मे लिया था। परंतु वह ब्रह्मचारी बालक खान थोडा संकोच वश भण्डारे से बाहर खडा था। उसके मन में यह संकल्प था कि मैं भी यज्ञ भोजन बनाने के कार्य में भागीदार बनूँ, परंतु साथ-साथ उसके मन में यह विचार भी उठता था कि यहाँ भोजन की पवित्रता के नियम का पालन होता है। अत: शायद पठान होने के कारण मुझे भोजन बनाने के कार्य में सम्मिलित होने की इजाजत नहीं मिलेगी और यहाँ के पवित्र भण्डारे में मेरा हाथ लगाना अनुचित माना जायेगा। इसी बीच क्या हुआ कि बाबा स्वयं वहाँ देख-रेख करने आ पहुँचे। बाबा ने खुद ही तो उसको दुलारते हुए कहा - 'मीठे बच्चे, आप बाहर क्यों खडे हो ? तुम ब्रह्मचारी तो हो ही, चलो शिवबाबा को याद करके आटा गुँधो।' अहा! वह बहुत खुश हुआ और उसने यह अनुभव किया कि यहाँ दैहिक जन्म पर आधारित धर्मो को लेकर कोई भेद नहीं किया जाता बल्कि बाबा सबको आत्मा की दृष्टि से देखते हैं तथा मन में प्रभु प्रेम और आचरण में ब्रह्मचर्य आदि की धारणा को मुख्यता(प्रमुखता) देते हैं।

इसी प्रकार, जब कैथोलिक ईसाईयों के धर्म गुरु पोप भारत में आया था तब सभी लोग उसको इस दृष्टिकोण से देखते कि यह ईसाई धर्म का सर्वोच्च अधिकारी भारत में आया हुआ है, परंतु बाबा फिर भी उसे तथा उसके साथ आये हुए पादरियों को आत्मिक दृष्टिकोण से देखते हुए उनके हितैषि बन भारत के सर्व प्रथम सहज राजयोग और ईश्वरीय ज्ञान से उन्हें परिचित कराने अर्थात् निराकार पिता परमात्मा का परिचय दिलाने की योजना बनाने में लगे रहे। उन्होंने मुम्बई के ईश्वरीय सेवाकेन्द्र पर यह विशेष निर्देश भेजा कि वे पोप तथा पादरियों से मिलकर उन्हें ईश्वरीय ज्ञान की सौगात शिवबाबा की ओर से भेंट करें और निराकार परमपिता शिव का परिचय दें और उन सबका भी कल्याण करें।

जिस प्रकार विभिन्न धर्म वालों को बाबा आत्मिक नाते से देखते, उसी तरह बाबा अपने लौकिक सम्बन्धियों अर्थात् दैहिक कुटुम्बियों को भी आत्मिक सम्बन्ध से देखते और उन सभी को - 'बच्चे, बच्चे' ऐसा कहकर पुकारते। इन तथा अन्य परिस्थितियों में भी सभी को यह बात स्पष्ट देखने को मिलता कि - 'बाबा दैहिक सम्बन्धों और दैहिक जन्म पर आधारित धर्मो से ऊँचे उठकर आत्मा के स्वरूप में स्थित हैं और एक शिवबाबा के साथ अटूट सम्बन्ध जोड कर - 'सर्व धर्म परित्यज, मामेकं शरणम वज्र' के ईश्वरीय महावाक्यानुसार आत्मनिष्ठ स्थिति में चल रहे हैं।'

2. सब के शुभ चिन्तक

बाबा कभी भी किसी का अशुभ अथवा अमंगल नहीं सोचते। दूसरों को भी वे सदा यही शिक्षा देते कि - 'न किसी के अकल्याण की बात सोचो और न कभी मुख से अशुभ बोलो।' वह ये भी कहते कि जिस किसी भी जिज्ञासु को आप ईश्वरीय ज्ञान सुनाने लगते हैं उसके लिए भी पहले मन-ही-मन शिव बाबा को याद करके कहो - 'शिव बाबा, यह भी किसी तरह ज्ञान समझ जाय, इसकी अन्तरात्मा के कपाट खुल जाये और इसका कल्याण हो जाये। और फिर जब आप योग में बैठे तो उस अवस्था में उस व्यक्ति को भी अपनी अंतर्दृष्टि के सामने लाकर उसे योग का दान दे ताकि उसका मन निर्मल हो जाय और ईश्वरीय ज्ञान का बीज उसमें अंकुरित हो।' देखिये, तो साकार ब्रह्माबाबा किस पराकाष्टा तक सभी के शुभ चिन्तक थे।

बाबा केवल नये आये जिज्ञासुओं के लिए शुभचिन्तक होकर उन पर परिश्रम करने का निर्देश नहीं देते बल्कि जो लोग कुछ समय तक ज्ञान लेने के बाद, रहने के बाद, किसी-न-किसी परिस्थिति अथवा मन की चंचलता के कारण ज्ञान छोडकर चले जाते, उनके

बारे में भी बाबा कहते कि - 'बच्चे, फिर-फिर उन लोगों के पास जाकर उन्हें आलस्य अथवा अज्ञान की निद्रा से कोई जगाते रहो।' बाबा कहते कि - 'ईश्वरीय ज्ञान को छोडकर वे बेचारे कहाँ जायेंगे, उनका कल्याण कैसे होगा ? यद्यपि आज वे माया से आच्छादित होकर अथवा अपने किसी पूर्व संस्कार वश, इस अनमोल ईश्वरीय खजाने से लाभान्वित नहीं होते परंतु आप द्वारा संदेश, स्मृति, चेतावनी, निमंत्रण आदि मिलते रहने पर कभी-न-कभी वे इस कलियुगी, दु:खमय संसार से ठोकर खाकर जाग ही जाएँगे।' इसलिए बाबा कहते कि 'आप बच्चे अपना कर्तव्य करते चलो।'

बाबा इतने विशाल हृदय वाले तथा शुभचिन्तक थे कि जिन माताओं-कन्याओं को उनके लौकिक सम्बन्धी ज्ञान से लाभान्वित होने से रोकते अथवा उन पर सितम करते, उनको भी बाबा कहते कि - 'यद्यपि उन लोगों में आपके साथ अपकार, अनर्थ, अन्याय और अत्याचार का व्यवहार किया है तथापि आप उनको ज्ञान सेवा करके तथा उन्हें योग का दर्शन देते हुए उनका कल्याण करने का पुरुषार्थ करते रहो। बच्चे, आप उनसे भी घृणा न करो। वे बेचारे परमपिता को पहचानते नहीं है और ब्रह्मचर्य आदि के महत्व को जानते नहीं है। इसलिए अज्ञानता वश आप पर अत्याचार करते हैं परंतु आप सदा उनके प्रति शुभ सोचो, अन्त में एक दिन उनका भी आत्मन जाग जायेगा।' देखिये तो, बाबा उनके प्रति भी शुभ चिन्तक बने रहने की शिक्षा देते जिनसे दु:ख मिलता हो।

सभी के शुभ चिन्तक बन बाबा रात-रात भर निंद त्याग कर भी मनुष्य आत्माओं को पावन बनाने तथा योग-युक्त करने के लिए, उन्हें प्रभु परिचय देने की योजनाएँ बनाते रहते और हर आये दिन उन्हें लोगों की ज्ञान सेवा की कोई-न-कोई नई विधि और नई योजना बनाते रहते। कभी वे कहते कि शिवबाबा के मंदिर में जाकर शिव भक्तों को यह बताओ कि शिवबाबा का क्या परिचय हैं ? कभी वे श्री कृष्ण के भक्तों को श्री कृष्ण के पुनरागमन का संदेश देने के लिए प्रेरित करते, कभी वे अन्य मतावलम्बियों को अन्य रीति से प्रभु परिचय देने के लिए साधन और विधि बताते। दीपावली, जन्माष्टमी, शिवरात्रि, दशहरा, होली आदि-आदि सभी त्योहारों पर विशाल उत्सव का आयेजन करके लोगों को आमन्त्रित करके, उन्हें इस अवसर पर जगाने का प्रोग्राम भी बनाते तथा कराते रहते। हर व्यवसाय तथा हर मत वाले मनुष्य को समझाने की विधि वे सिखाते। जीवन का कोई भी ऐसा पहलू नहीं होगा और समाज की ऐसी कोई भी समस्या नहीं रही होगी जिस पर उन्होंने ज्ञान प्रकाश न डाला हो। यह सब वे इसलिये करते ताकि किसी भी बात पर चर्चा हो रही हो अथवा कोई भी अवसर हो उससे सम्बद्ध करके लोगों को ईश्वरीय ज्ञान दिया जा सके।

बाबा को लोक कल्याण का इतना विचार रहता कि वे सबको यही कहते - 'बच्चे, कोई भी ऐसा कर्म न करो अथवा ऐसा वचन न बोलो जिसका अनुकरण करने से किसी की गिरावट हो।' वे स्वयं तो सदा शुभचिन्तक होकर सेवा में लगे रहते ही और अन्य वत्सों को भी कहते कि 'देखो बच्चे, भक्त उस प्रभु को पुकार रहे हैं जबकि वह इस धरा पर आकर कर्तव्य कर रहे हैं। क्या उन भक्तों की पुकार आपको सुनाई नहीं देती ? किंचित एकान्त में बैठकर देखो तो आपको ऐसा मालूम होगा कि वे बिचारे उस प्रभु अथवा परमात्मा के मिलन के प्यासे हो उसे पुकार रहे हैं। तो क्या आप उन्हें शिवबाबा का संदेश, आदेश और परिचय सुनाकर तृप्त नहीं करोगे ?' इस प्रकार वे स्वयं सर्व के, प्रैक्टिकल रीति शुभचिन्तक हो दूसरों को भी शुभचिन्तक बनने और शुभ चिन्तन करने की शिक्षा देते रहते।

3. अपार उत्साह और अदम्य हिम्मत

बहुत कोशिश करने पर भी यदि कोई कार्य सम्पन्न न होता तो भी अन्तिम क्षण तक बाबा उसके लिए पूरा प्रयत्न करते तथा कराते रहते। पुरुषार्थ की चरम सीमा देखनी हो और हिम्मत तथा हौसले की पराकाष्टा जाननी हो तो ये दोनों साकार ब्रह्माबाबा के जीवन में सदा स्पष्ट मिल सकते। कभी भी किसी ने उनमें उत्साह की कमी, पुरुषार्थ के प्रति उदासीनता या हारी हुई हिम्मत या आलस्य को नहीं देखा होगा।, उन्हें कोई भी कार्य अधुरा छोडना, अपूर्ण रीति से करना अथवा बिना कोई परिणाम निकले उसे छोड देना अच्छा न लगता। अत: वे बार-बार किसी कार्य के पीछे वत्सों को लगाकर भी उन्हें हिम्मतवान बनाते हुए सफलता तक लाने में तत्पर रहते।

एक बार की बात है कि नई दिल्ली में ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के अलौकिक कार्य के लिए जो जमीन ली गई थी, उसे दिल्ली प्रशासन ने सरकारी प्रयोग के लिए लेने के लिए राज पत्राडित (गॅझेट नोटीफिकेशन) करके अपने हाथ कर लिया। और भी बहुत लोगों की जमीन इस तरह सरकार ने हस्तगत कर ली थी और अब जमीन वापस मिलना मुश्किल मालूम होता था। परंतु बाबा ने हिम्मत बँधाई और उसे सरकार से छूडाने के लिए पूरा प्रयत्न करने के लिए कहा। पहले तो कुछ परिणाम न निकला परंतु बाबा बार-बार कोशिश करने की ताकीद करते रहें। अत: फिर-फिर कोशिश करते रहने से कार्य हो गया परंतु फिर किन्हीं कारणों से वह जमीन सरकार ने दुबारा अपने पास ले ली। तब बाबा ने फिर उसे छुडाने के लिए कोशिश करने को कहा। मामला सुलझता दिखाई नहीं देता था, हर कदम पर कठिनाईयाँ आती थी, अनेकानेक व्यक्तियों से, यहाँ तक कि राष्ट्रपति से भी मिलना पडा परंतु फिर भी कुछ विशेष परिणाम न निकला। तब भी बाबा हिम्मत ही देते रहे। बाबा ने कभी भी उस कार्य को छोडने के लिए नहीं माना बल्कि बाबा ने कहा - 'बच्चे,

कौरवों और पाण्डवों का युद्ध तो बहुत चर्चित है, शास्त्रों में भी इसका उल्लेख है। अत: चाहे वह जमीन यह सरकार इस ईश्वरीय कार्यार्थ आपको न दे, आप पुरुषार्थ करना न छोडो। जमीन नहीं मिलेगी तो क्या हुआ, इस कार्य के निमित्त कारण से आप कई सरकारी कर्मचारियों तथा अधिकारियों से मिलेंगे तो उन्हें आप द्वारा प्रभु परिचय तथा ईश्वरीय संदेश तो मिल ही जायेगा।'

कहने का भाव यह है कि कोई कार्य कैसा भी असम्भव देखने में क्यों न आता हो, बाबा उसे हिम्मत, योग युक्त अवस्था, आत्म अविश्वास, भरसक प्रयत्न तथा मधुर वाणी के माध्यम और बार-बार के अथक प्रयत्नों द्वारा उसे सफल करने की शिक्षा देते।

ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने कुछ व्यक्ति ऐसे भी आते जो कि उच्च नियमों में अथवा ब्रह्मचर्य व्रत की धारणा में अटूट व्रती होकर न रह पाते। वे बाबा से कहते - 'बाबा, हमारी धारणा कच्ची है, हम कोशिश करने पर भी धर्म से गिर जाते हैं....।' बाबा कहते - 'बच्चे, तुम्हारा योग पूरा नहीं है, संग ठीक नहीं है अथवा संस्कार बहुत खराब हैं। चलो फिर पुरुषार्थ करो। हिम्मत मत हारो। माया के साथ युद्ध करना न छोडो। यदि हिम्मत हार जाओगे तो 'कायर' कहलाओगे और दैवी राज्य-भाग्य भी गँवाओगे। अत: फिर उठो और मन में दृढ़ प्रतिज्ञा लो तथा शिवबाबा से बातें करो तो आपको शक्ति मिलेगी, वरना पुरुषार्थ ही छोड दोगे तो सद्गति कैसे होगी....?'

इसी प्रकार कई माताएँ बाबा से कहती - 'बाबा, हम ब्रह्मचर्य व्रत की धारणा करती हैं तो हमें पति द्वारा मार मिलती है...। बाबा, बहुत सितम होता है....।' बाबा कहते - 'बच्ची, हिम्मत मत हारो। प्रति दिन प्रात: उठकर शिव बाबा को याद करो और कहो - बाबा, मैं पवित्र बनाती हूँ और मुझे मार मिलती है, इस प्रकार मेरा पति पाप का भागी बनता है। बाबा, उसको सद्-बुद्धि दो और मेरा यह बन्धन छुडाओ....। इस प्रकार आप प्रतिदिन उस परमपिता के पास आवेदन (एप्लीकेशन) डालती जाओ। जब उन सूक्ष्म आवेदन पत्रों की फाईल बहुत बडी हो जायेगी तो शिवबाबा जरूर कुछ करेंगे ही। बच्ची, हिम्मत मत हारो। इतनी उच्च प्राप्ति के लिए ये सहन करना कोई बडी बात नहीं....।'

इसी तरह कई बार जब कई अज्ञानी लोग किन्हीं सेवा केन्द्रों की ब्रह्माकुमारी बहनों का कडा विरोध करते तथा अत्याचार करते तो वे बाबा को समाचार लिखती कि - 'बाबा, परिस्थिति बहुत विकट है....।' बाबा कहते - 'बच्ची, हिम्मत करो। ईश्वर की ओर आगे बढने वालों पर सितम तो होते ही हैं। ये कल्प पहले भी हुए थे, इसलिए यह कोई नई बात नहीं है। नथिंग न्यू। यह पार्ट तो आपने असंख्य बार बजाया है....।' इस प्रकार जिसे मानव हृदय भयावह और विकट स्थिति मानता, उसके बारें में भी बाबा हिम्मत बँधाते और कहते कि - 'इस सृष्टि रूपी ड्रामा को साक्षी होकर देखो.... यह सभी दृश्य बदलते जायेंगे....।'

4. माताओं का सम्मान

बाबा कन्याओं-माताओं का सदा सम्मान करना सिखाते। कभी वे कहते कि - 'इन कन्याओं-माताओं को ही ज्ञान कलश देने तथा इनका मर्तबा (स्थान) उच्च बनाने के लिए ही शिवबाबा आए हैं कयोंकि बहुत काल से इन पर बहुत सितम होते रहे हैं और समाज में इनका अपमान तथा तिरस्कार भी होता आया हैं, परंतु अब इनके कारण मुझे भी बीच में यह ज्ञान सुनने का अवसर मिल जाता है।' देखिए तो, बाबा कितनी नम्रता पूर्वक स्वयं को गुप्त करके माताओं-बहनों को प्रत्यक्ष करने की कोशिश करते। कभी वे कहते कि - 'मातायें-कन्यायें तो मुझ से भी अधिक ज्ञान में प्रवीण हैं क्योंकि ये भिन्न-भिन्न संस्कारों और योग्यताओं वाले मनुष्यों को ज्ञान देती हैं और भाषण भी करती हैं। यही वास्तव में पतित-पावन गंगायें हैं। इन माताओं को 'वंदे मातरम्' कहना चाहिए।' इस प्रकार वे माताओं का मान करते, उन्हें सहारा देने के निमित्त बने और उनका स्थान ऊँचा करने के लिए उन्हों ने स्वयं को अप्रत्यक्ष किया। वे सदा कहते - 'मैं तो उनका सेवक हूँ।' माताओं को सहारा देने के कारण उन्हें लोगों की इतनी आलोचनायें सुननी पडी, इतने कष्ट भी सहन करने पडे, परंतु इनके लिए उन्होंने सब-कुछ किया। और जो लोग हुए, उन द्वारा स्थापित संस्थाओं का नाम प्राय: उनके अपने व्यक्तिगत नाम के आधार पर रखा गया। उदाहरण के तौर पर ईसा द्वारा स्थापित धर्म अथवा संस्था 'ईसाई धर्म' कहलाया, वह ईसाईयों की संस्था कहलायी। यही बात बुद्ध, वासवानी, अरविन्द आदि के बारे में भी कही जा सकती है। उन संस्थाओं के नाम पुरुषों के प्रधानता देने वाले मालूम होते हैं परंतु बाबा ने कन्याओं-माताओं को आगे रखते हुए इसका नाम प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय रखा। आज संस्थाओं के नाम पुरुष प्रधान होने के कारण कई लोग इस विश्व-विद्यालय का ऐसा नाम देखकर पूछते कि शायद यह केवल माताओं के लिए हैं। यह कितनी उच्च बात है कि स्वयं इसकी स्थापना के निमित्त बनकर भी बाबा सदा इसका मुख्य (हेड) ब्रह्माकुमारी मातेश्वरी सरस्वती ही को बताते। बाबा ने अपना तन-मन-धन, सब कुछ इन माताओं-कन्याओं की सेवा में लगा दिया और मातेश्वरी सरस्वती को निमित्त मानकर हवाले कर दिया। आज भारत में १ ० ० ० से भी अधिक ईश्वरीय सेवाकेन्द्रों को कन्यायें मातायें चला रही हैं। माताओं के लिए इतना उच्च कार्य आज तक किसी ने भी नहीं किया।

5. साधन उच्च

कार्य को सम्पन्न करने के लिए बाबा सदा साधन भी उच्च अपनाते। वे कभी ज्ञान विरुद्ध अथवा निम्न कोटी का साधन न अपनाते और न अपनाने देते । यदि वे चाहते तो इस अच्छे कार्य के लिए उन्हें अतुल धन मिल सकता था परंतु उन्होंने सदा यह नियम अपने सामने रखा कि - 'इस ईश्वरीय कार्य में ऐसे मनुष्यों से धन नहीं लिया जा सकता जिनका जीवन ब्रह्मचर्य की धारणा में न हो तथा जो ईश्वरीय योग से युक्त न हो।' ऐसे कई अवसर सामने आए जबकि ब्रह्माकुमारी बहनों को उनके लौकिक सम्बन्धियों ने चैक (धनादेश) भेजे या इस संस्था के प्रशासक लोगों ने धन दान देने की इच्छा प्रगट की। परंतु बाबा ने उन लोगों से पैसा लेने से इन्कार कर दिया जो कि अपने जीवन को पवित्र और योगयुक्त बनाने का पुरुषार्थ न करते हों।

इस नियम के कारण बहुत से लोग प्राय: यह भी प्रश्न करते रहते कि - 'यज्ञ का खर्च कैसे चलता है अथवा पैसा कहाँ से आता है?' परंतु बाबा ने सदा इन सबका सामना किया किन्तु साधन की उच्चता के असूल को नहीं छोडा। वे चाहते तो सबसे दान स्वीकार कर सकते थे और धर्म प्रेमी लोगों से चन्दा भी इक्ट्ठा किया जा सकता था परंतु बाबा ने सदा इसके लिए मना ही किया। बाबा कहते कि ईश्वरीय कुल की संतान होकर चन्दा माँगना योग्य नहीं। दूसरे की सेवा कर उन्हें पवित्र बनाये बिना उनसे आर्थिक सेवा लेना ज्ञानोचित्त नहीं। अत: आप केवल उन्हीं से अर्थिक सहयोग लो जो कि ज्ञान के नियम अनुकूल अपने जीवन को ढालते हैं।

इसी प्रकार बाबा किसी भी कार्य को करने के लिए कोई निकृष्ट अथवा भ्रष्ट आचरण अपनाने का या हिंसात्मक रीति अथवा अशुद्ध वचनों का सहारा लेने का निषेध करते। बाबा कहते - 'जैसे आपका लक्ष्य उच्च है और ज्ञान उच्च है, वैसे ही आप को साधन भी सदा उच्च अपनाना चाहिए। बाबा कहते वाणी की मधुर तान सुनकर साँप भी वशीभूत हो जाता है तो ईश्वरीय ज्ञान के मधुर आलाप से क्या लोक कल्याणार्थ काम भी नहीं करा सकते? बच्चे, यदि आप योग युक्त अवस्था में टिककर आत्मिक दृष्टि देते हुए, पवित्रता के नियमों में रहते हुए इस सर्वोच्च ईश्वरीय ज्ञान को कहीं भी मधुरता पूर्वक कहेंगे तो आपकी वाणी में वह जौहर होगा तथा आपकी अव्यक्त शक्ति ऐसा कार्य करेगी तथा शिवबाबा की आपको ऐसी मदद मिलेगी कि यदि वह कार्य होने में कल्याण होगा तो वह हो ही जायेगा.... परंतु आप निकृष्ट साधन कभी न अपनाओ।'

6. सादगी और बचत

बाबा का अपना जीवन अत्यंत सादा और मन अत्यंत सरल था। उनका अपना कमरा, लिबास, खान-पान कम खर्चीला तथा बहुत सादा था। वह सफेद पोश और अल्पाहारी थे। अत: उन्होंने अपने प्रैक्टीकल जीवन से हजारों लोगों को प्रेरित किया। उन द्वारा नियत किया गया युनिफोर्म ये सफेद वस्त्र -स्वच्छता और सादगी का प्रतीक है। रंगीन लिबास में तो बहुत विविधता (वैराईटी) होती है, अत: वे तो अनेक प्रकार के और मूल्यवान तथा खर्चीले भी हो सकते हैं। अत: श्वेत वस्त्र यूनिफोर्म के रूप में पसन्द करके बाबा ने इस निर्धन भारत के हजारों लाखों नर-नारियों को सादगी तथा स्वच्छता का पाठ पढाया। ज्ञान रूपी आभूषणों से आत्मा को सजाने की शिक्षा देकर उन्होंने हजारों को स्वेच्छा से फैशन को तिलांजलि देने के लिए प्रेरित किया। न केवल बहुत लोगों ने जेवरों तथा फैशन को छोड दिया बल्कि कईयों ने घडी लगाना भी इस विचार से छोड दिया कि आज तो स्थान-स्थान पर घडी लगी हुई हैं तथा हरेक के पास घडी है, तब घडी पर भी खर्च करने से क्या लाभ? इसे शृंगार अथवा दिखावे के लिए पहनने का क्या अर्थ?

बाबा ने ऐसा उच्च बनाया कि - 'स्वत: ही हजारों नर-नारियों ने सिनेमा जाना, होटलों में खाना, व्यर्थ के रस्म-रिवाजों पर रूपये गँवाना भी छोड दिया।' इस प्रकार कर्मेन्द्रियों पर कन्ट्रोल होने से तथा सादगी से, न केवल उनकी आत्मिक उन्नति हुई बल्कि आर्थिक बचत भी हुई। जो लोग आर्थिक रूप से पहले सदा तंग रहते थे, अब उनके जीवन में कुछ सुहूलियत हुई तथा वे अपने घन को व्यर्थ ही गँवाने की बजाय लोक कल्याणार्थ प्रयोग करके अपनी खुशी में वृद्धि करने लगे। बाबा केवल धन की बचत ही नहीं बल्कि संकल्पों की बचन भी सिखाते तथा व्यर्थ वचनों द्वारा भी शक्ति गँवाने से बचने का आदेश देते।

7. सदा स्नेही और सदा सहयोगी

बाबा सबको इतना तो स्नेह और सहयोग देते कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता। बाबा कहते - 'बच्चे, जैसे किसी का कोई खानदानी हकीम(फैमिली डॉक्टर) होता है तो परिवार में किसी भी सदस्य को कोई तकलीफ होने पर वे नि:संकोच होकर उसका (डॉक्टर का) दरवाजा खट-खटाते हैं, इसी प्रकार, मैं भी आपका रुहानी फैमिली डॉक्टर हूँ। आपको कोई आत्मिक रोग हो, कोई भी समस्या हो, आप मेरे पास आ सकते हैं।' इस प्रकार, बाबा सभी से दिल का हाल पूछकर उनहें हर प्रकार की राहत देते। वे प्रतिदिन क्लास में पूछते - 'बच्चे, स्थूल या सूक्ष्म कोइ भी सेवा हो तो लज्जा न करना। अपने इस पिता को बता देना...।' वे प्रैक्टिकल रीति से सभी को इतना तो स्नेह, मार्गदर्शन तथा हल (सेल्वेशन) देते कोई भी यह अनुभव करते कि यही हमारा सच्चा बाप एवं मित्र है। एक

बार की बात है कि - 'किसी गाँव से कुछ व्यक्तियों का एक ग्रुप आबू में बाबा के यहाँ आकर ठहरा हुआ था। अचानक से एक रात्रि को वर्षा हुई और सर्दी भी अधिक पडने लगी। वे लोग सभी एक टेन्ट में सोये हुए थे। निंद में ही बाबा को उठने का संकल्प आया। बाबा उठे और तुरंत उस टेन्ट में चले गये। वे सभी देखकर आश्चर्यान्वित हुए कि इस समय वृद्ध शरीरधारी बाबा सर्दी में क्यों आये हैं।' बाबा बोले - 'बच्चे, सभी चलो, बाबा के कमरे में चलकर सो जाओ। भले ही जगह थोडी है परंतु रात्रि निकल जायेगी।' बाबा सभी को कमरे में ले आये। सभी ने मन में सोचा कि देखो बाबा सबका कितना ध्यान रखते हैं।

अनेकों के जीवन में न जाने कितने संकट आए होंगे परंतु अपने लौकिक तथा परमार्थिक सभी विघ्नों को हरने के लिए वे बाबा से ही दिल खोलकर राय लेते। उनका स्नेह बाबा से इतना तो जुट जाता कि आबू से विदा लेते समय उनकी आँखें तर हो जाती।

8. निर्भयता तथा सभी को सम्मान देने का गुण

बाबा सदा सभी को सम्मान देते, हॉलाकि हर दृष्टि से थे सभी उनसे बहुत छोटे। जब कभी बाहर से कोई उनके यहाँ आते तो वे उनकी खूब 'खतिरी-तवाजोह' (पालना) करते और उनकी महिमा भी करते। कई बच्चे स्वयं ही कह देते - 'बाबा, हममें जो कमियाँ है वह आप हमें सम्मुख ही बता दीजिए।' बाबा कहते - 'नहीं बच्चे, बाबा तो सभी बच्चों का सम्मान करता है, आप सर्विसएबल बच्चे हैं, लोगों के कल्याण के निमित्त बने हुए हैं, शिवबाबा तो प्रतिदिन शिक्षा देते ही रहते हैं, उनको सुनकर सबको मालूम तो हो ही जाता है कि मुझ में क्या कमी है। मीठे बच्चे, जो खामी(त्रुटी) स्वयं में समझो, उसे निकाल दो।'

अन्य सभी को बाबा उचित सम्मान देते। एक बार की बात है कि एक संन्यासी वहाँ आया। एक ब्रह्माकुमारी बहन ने उससे ज्ञान चर्चा की। तब उसने बाबा से मिलने की इच्छा प्रगट की। बाबा उससे मिलने आये तो उस संन्यासी को नीचे दरी पर बैठा देखा। बाबा बोले - 'बच्चे, एक गद्दी लाओ। गद्दी लाई गई।' वह संन्यासी बहुत मना करता रहा परंतु बाबा बोले - 'बच्चे, आप संन्यासियों ने ही तो ब्रह्मचर्य का पालन करके भारत को गरम तवे की तरह कामाग्नि से तप्त होने से बचाया है।' अत: बाबा संन्यासियों की महिमा करता है। संन्यासी को गद्दी देकर बाबा स्वयं नीचे दरी पर ही बैठे। वह संन्यासी बहुत अनुनय-विनय करने लगा कि बाबा भी एक गद्दी पर बैठे, परंतु बाबा बोले - 'बच्चे, मैं तो सारी सृष्टि का सेवक हूँ, मैं यहीं बैठूँगा।' संन्यासी अवाक हो गया। इस प्रकार बाबा ने स्नेह, सम्मान और नम्रता पूर्वक व्यवहार किया परंतु जब बाबा ईश्वरीय ज्ञान देने लगे तब उन्होंने कोई संकोच नहीं किया बल्कि अद्वैतवादियों तथा कर्म-संन्यासियों के मत से संसार को जो हानि हुई है, किस प्रकार लोग एक परमात्मा से विमुख होकर मिथ्या रीति से स्वयं को ही शिव मानने लगे हैं, उसका स्पष्टीकरण बाबा ने नि:संकोच अथवा निर्भय होकर दिया।

इस प्रकार यदि किसी को नम्रता देखनी हो तो बाबा के जीवन में उसका खूब दिग्दर्शन होता परंतु बाबा निर्भय भी उतने ही थे। यज्ञ कार्य में लोगों ने कितना विरोध किया परंतु बाबा कभी भी भयान्वित नहीं हुए।

9. आत्मा निर्भरता

बाबा आत्म निर्भरता के भी गुण की भी खूब धारणा करते। यह उनके प्रैक्टिकल जीवन तथा शिक्षा ही का फल है, कि यहाँ प्राय: सभी स्वयं ही अपने वस्त्र धोते, अपने बर्तन साफ करते तथा अन्य निजी कार्य करते हैं। बाबा कहते कि - 'हम तो स्वयं ही सेवक हैं, तब दूसरों से सेवा हम कैसे ले सकते हैं? बच्चे, अपने लिए किसी से सेवा लेना गोया अपने सिर पर बोझ चढाना है। जो दूसरों से सेवा लेते हैं उसमें अपने बडे होने का अभिमान आ जाता है...।' इस प्रकार की शिक्षा देकर बाबा हरेक में अपना कार्य आप कर, आत्म निर्भर बनने तथा लोगों की ज्ञान सेवार्थ लगे रहने की भावना भरते।

10. शिष्टता

बाबा दिव्य गुणों से युक्त थे और उनका विचार अत्यंत शिष्ट था। इसलिए वे दूसरों को भी शिष्ट-व्यवहार के लिए प्रेरित करते। हमारा उठना-बैठना, बोलना-चलना कैसा होना चाहिये - इसके बारे में वे प्राय: प्रकाश डालते हुए कहते- 'बच्चे, फरिश्तों के समान बनो। जब आप चलो तब आपके पाँवों की आवाज नहीं आनी चाहिए। जब आप बोलो तो मधुर मुस्कान से, धैर्यवत् अवस्था में टिककर, धीरे स्वर से बोलो। जब आप स्वयं हँसो तो कहकहाट की आवाज नहीं आनी चाहिए बल्कि हँसी होठों तक ही रहनी चाहिये। आप सब कार्य मूवी में करो, टाँकी में नहीं...। फजीलत (शिष्टता, सभ्यता) तथा उच्चता(रॉयल्टी) से बात करो क्योंकि आप सभी सर्वोत्तम ईश्वरीय कुल के तथा होवनहार देव कुल के हो।' यदि कभी क्लास में कोई जमाई (उबासी) देता तो बाबा उस व्यवहार को भी अशिष्ट तथा सभा के नियमों के विरुद्ध बताते और यदि कोई सभा के बीच में से उठकर चला जाता तो उसे भी बाबा समझाते कि - 'इससे कईयों का ध्यान अपनी ओर खिंचवाकर आप उनका बुद्धियोग तुडवाने के निमित्त बने... यह तो बहुत बडा अकर्तव्य है...।' इस प्रकार बाबा फरिश्तों जैसा शिष्ट बनने के लिए शिक्षा देते रहते और अपने जीवन से भी ऐसी प्रबल प्रेरणा देते थे।

11. विनोद

साकार बाबा के जीवन में अनगिनत दिव्य गुण ते थे ही, साथ-ही-साथ वे विनोदप्रिय भी थे। वे केवल नियमों और सिद्धांतों ही की शुष्क चर्या करने वाले न थे बल्कि उनकी बात सदा सरल और सुनने वाली ताजगी (रफ्रेशमेंट) महसूस करते।

एक बार की बात है कि कमरे में बाबा के पास कुछ बच्चे बैठे थे। बाबा बोले - 'बच्चे, मेरे कमरे में आप सभी बच्चों की अवस्था को देखने का मीटर लगा हुआ है।' सभी बच्चे कमरे में इधर-उधर देखने लगे और सोच में पड गए कि मानसिक अवस्थाओं को देखने के लिए कोई स्थूल मीटर कैसे हो सकता है। जब उनहें किसी तरफ कुछ दिखाई नहीं दिया तो बाबा बोले - 'बच्चे, वह मीटर इस रेडियो में लगा हुआ है।' बाबा के कमरे में एक रेडियो था। बाबा प्रतिदिन उस पर खबरें सुना करते थे। सभी रेडियों की ओर देखने लगे। तब सबको आश्चर्यचकित और मुस्कराता हुआ देख बाबा ने कहा - 'बच्चे, जब मैं प्रति दिन खबरें सुना करता हूँ तो उन द्वारा बच्चों की अवस्था को भी जान जाता हूँ। अगर लडाई तेज हो गई हो अथवा उसकी तैयारी जोरों पर हो, साईन्स का चमत्कार हो रहा हो तो मैं समझ जाता हूँ कि बच्चों का आध्यात्मिक पुरुषार्थ भी तेज हो रहा है। परंतु अगर ठण्डा समाचार हो तो समझ जाता हूँ कि आजकल बच्चों की अवस्था भी ढीली चल रही है क्योंकि साइन्स और साईलेन्स का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है।' बाबा की इस यथार्थ बात को सुनकर सभी हँस पडे। देखिए तो, बाबा बात को कैसा सरल और विनोद पूर्ण रीति से कहते थे।

इस प्रकार एक बार बाबाने कहा - 'बच्चे, मुझ से कई लोग पूछते हैं कि यज्ञ का जो इतना खर्च कैसे चलता है उसके लिए पैसा कहाँ से आता है ? उन बेचारों को यह तो मालूम नहीं कि बाबा के पास एक कूँआ है जहाँ से बाबा निकलवाता रहता है। बाबा उससे निकलवाता है, नीचे से और निकल आता है।' सुनने वाले व्यक्तियों ने सोचा कि - 'सचमूच बाबा के पास कोई ऐसा गुप्त कुँआ है।' वे बोले - 'बाबा, वह कुँआ कहाँ हैं ?' बाबा बोले - 'बच्चे, जैसे हमारा यह पानी का कुँआ है, इसका पानी चढ जाता है वैसे ही वह धन का कुँआ है परंतु वह गुप्त है।' उनके आश्चर्यान्वित होने पर बाबा बोले - 'वह कुँआ शिवबाबा ही है। दुनिया वाले नहीं जानते कि परमात्मा जो कि दाता है उसी का यह सारा कार्य चल रहा है।'

इस प्रकार बाबा के जीवन में यदि हम गुणों का वर्णन करने बैठें तो बहुत ही स्थान चाहिए। उनका वर्णन करते -करते वर्ष बीत जायेंगे परंतु वह वर्णन समाप्त नहीं होगा ?

निद्राजीत ब्रह्मा बाबा

- वी.के. जगदीश चन्द्रजी, दिल्ली

बाबा के जीवन सागर में हम जितनी डुबकियाँ लगाते हैं, हमें उतने रत्न मिलते हैं। उनकी जीवन गाथा आत्मा की ज्योति जगाने वाली, मन को खुशियों के झूले में झूलाने वाली, बुद्धि को ताजगी देने वाली और रूह को राहत देने वाली है। उसमें एक विशेष प्रकार की मधुरता और शक्ति भरी है जो आत्मा को पुर्न-जिवित कर उसमें उमंग और उत्साह भर देती है।

1. आलस्य और अलबेलेपन से अतीत तथा निद्राजीत

विशेष बात यह है कि बाबा के जीवन में हमने आलस्य का लेश मात्र भी नहीं देखा। शरीर की वृद्धावस्था होने पर भी और रात दिन मनुष्य आत्माओं के संस्कार परिवर्तन के कार्य में लगे रहने पर भी बाबा के जीवन में थकावट के चिह्न कभी दिखाई नहीं दिये। साधारण व्यक्ति अपने जीवन में कई बार सोता हुआ, आँख मूँदता हुआ, निंद से झुटका खाता हुआ दिखाई दे जाता है। नेपोलियन जैसा व्यक्ति भी सोने का स्थान न मिलने पर घोडे पर ही आँख लगा लेते थे। बडे-बडे व्यक्तियों को सार्वजनिक सभा मँच पर जब हम बैठे दिखते हैं, तो जन समूह सामने होने पर भी किसी की आँख में निंद भरी दिखाई दे जाती है परंतु बाबा सदा निद्राजीत बने रहे। कभी उन्होंने आलस्य वश किसी कार्य को स्थगित नहीं किया या तन्द्रा के कारण काम जल्दी समाप्त नहीं किया बल्कि सभी ने उन्हें सदा चुस्त जागरुक और तत्पर ही देखा। उन्होंने अकर्मण्यता, निरुत्साहिता और शिथिलता को पूरी तरह से ही निकाल दिया था। गोया तमोगुण का अंत हो चुका था और सात्विकता का झण्डा उनके तन और मन, दोनों पर सदा लहरा रहा था।

जो काम कभी सामने आया, उन्होंने उसे कभी अधूरे मन से, टूटे मन से, गफलत से या अलबेलेपन से नहीं किया बल्कि जी-जान से, कर्मठ होकर, डटकर, उत्साह पूर्वक, युद्धस्तर पर, मन लगाकर उसे पूर्णता के शिखर पर पहुँचाया चाहे कितने भी विघ्न आये, चाहे वह कार्य शुरु में असम्भव सा प्रतीत हुआ या कार्य में सहयोग देने वाले हाथ पर हाथ रखकर बैठ गये परंतु उन्होंने उस कार्य को सिरे लगाया। सभी परिस्थितियाँ प्रतिकूल होने पर भी उन्होंने कार्य को सम्पन्न करने की कोई-न-कोई राह निकाल ली। यह अनेक ओज, तेज मनोबल, दृढ़ता और प्रतिज्ञा का परचायक है।

उदाहरण के तौर पर देहली के रजोरी गार्डन क्षेत्र में इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के कार्यार्थ जो जमीन ली गई थी, उस पर सरकार ने अपना अधिकार जमाने की कोशिश की। सरकार ने ऐसा कानून भी बना लिया कि जिससे वह जमीन को अपने हाथ में लेने की कोशिश कर सके। आखिर उन्होंने नोटिस देकर जमीन को सरकारी सम्पत्ति बनाने का कदम भी पूरा कर लिया और एक बार तो उच्च न्यायालय ने भी फैसला सरकार के पक्ष में कर दिया। परंतु फिर भी बाबा ने मन से उस जमीन को नहीं छोडा।

ऐसे हैं अनुभव के कुछ चित्र

- बी.के. जगदीश चन्द्र

सागर बाबा के साथ जीवन की जो घडियाँ बीती वे सभी स्मरणीय हैं क्योंकि स्मृति पटल पर उनका पुन: उभर आना ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई रंग-बिरंगे प्रकाश का झरना मन को मुग्ध कर देता हैं। उनसे जीवन में एक नई ताजगी आती हैं, मनुष्य को एक नया संदश मिलता है और मन उन सुनहरी यादगारों को देखकर अथवा संस्मृतियों के पन्नों को पलटकर हर बार नई खुशी महसूस करता हैं। उन्हीं पन्नों को जल्दी-जल्दी पलटते हुए जो चित्र भीतर के नेत्रों के सामने आते-जाते हैं, उनमें से दो-चार का चित्रण करने का यहाँ प्रयास कर रहा हूँ।

बात सन् १९५३ की हैं। तब मैं पहली बार मधुबन गया था। उन दिनों इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का मुख्यालय वर्तमान स्थान पर न होकर बृजकोठी में था। मन की कुछ विचित्र स्थिति लेकर गया था। ब्रह्माबाबा कैसे होंगे, उनका हाव-भाव, उठना-बैठना, बात-चीत किस प्रकार की होगी, वह तो सृष्टि के पितामह हैं और सर्वोत्तम मानव हैं, उनका सब कार्य-कलाप तो निराला ही होगा - यह सब देख पाने की उत्सुकता मन में हिलोरें ले रही थी। वहाँ जाने से पहले मैंने कल्प-वृक्ष के मूल पर उनका चित्र तो देखा ही था और लाल अक्षरों में उनके कई पत्र भी पहले पा चुका था परंतु अभी साक्षात् उनके सामने बैठने का सौ-भाग्य मुझे नहीं प्राप्त हुआ था। आखिर रेल और बस द्वारा यात्रा पूरी हुई और हम मधुबन पहुँचकर नहा-धोकर, उत्सुकता को मन में बटोरे हुए पिताश्रीजी से मिलने और उनके माध्यम से शिवबाबा से मिलने की तिरोहित इच्छा को लिए हुए उनके सामने जाकर बैठ गये। सच कहता हूँ - 'इन नैनों ने ऐसी छवि कभी नहीं देखी।' बाबा के चेहरे पर अनेक राजों से युक्त परंतु स्वाभाविक और वात्सल्यपूर्ण कुछ हल्की, कुछ गहरी रेखाएँ उभर आई थी। परंतु ऐसा याद आता है कि शायद एक मिनट ही अभी मुझे वहाँ हुआ होगा कि बाबा ने मुझे निहारते हुए मुझ पर ऐसी कृपा दृष्टि की जो मैं अपने स्थान पर टिक नहीं पाया बल्कि जैसे कोई सूई बरबस ही एक शक्तिशाली चुम्बक की ओर स्वत: खींची हुई-सी चली जाती है, वैसे ही मैंने भी पँखों के बिना ही उडान भरकर उनकी गोद में जा समाया था। परंतु मुझे इतना भी आभास नहीं हुआ कि मैं वहाँ से उठकर उनकी गोद में गया बल्कि वह चेतना तो मुझे बाद ही में आई कि मैं उनकी गोद में हूँ। उससे पहले के क्षणों में जब मैं बाबा की गोद में था, तब न तो मुझे अपनी देह का रंच भी भान था, न मुझे साकार माध्यम के स्पर्श का बोध था, न पास ही में बैठी हुई माता श्री तथा बहनों का कुछ एहसास था, न मुझे ये ज्ञान ही रहा था कि मैं इस भौतिक लोक में हूँ। जैसे कोई बिछडी हुई आत्मा पारमार्थक प्यार की एक कसक के साथ अपने प्रियतम से मिलने की अनुभूति में डूबी हुई हो - एक ऐसी ही चेतना का आत्मा में संचार हुआ। ढूंढने से शब्द नहीं मिलते कि इसका वर्णन कर सकूँ। पूर्ण प्रत्याहार की अवस्था थी। प्रकृतित्त्व कुछ क्षणों के लिए बिल्कुल मिट-सा गया था। आत्मा और परमात्मा के बीच अन्य कोई रेखा और रंच कुछ भी न था। एक अपूर्व आभास था जिसकी लालसा सदा बनी रहती है। उस जयोति स्वरूप परमात्मा के ब्रह्म तत्त्व (जो कि परमधाम में होता है) का भी भान न था। मानो शिवबाबा और मेरे बीच का फासला भी समाप्त हो चुका था। फिर अनायास ही कुछ ऐसे शब्द सुनाई पडे - 'बच्चे, बच्चे ओ मीठे बच्चे'। अब तो बाप के पास अब गये हो, अब तो आप मिले हो। ऐसा लगता था कि ये शब्द मेरे भीतर के कान सुन रहे हैं यद्यपि ये शब्द साकार बाबा के माध्यम से उच्चारे गये थे। (ऐसा मुझे बाद में बताया गया)। अब घीरे-घीरे मुझे महसूस हुआ कि मैं उस पिता की शीतल गोद में हूँ और लगा कि जिस चीज को मुझे इस जीवन के बचपन से तलाश थी, जिससे मिलने के लिए मेरे मन में जन्म-जन्मांतर से आशा थी, आज मेरा उससे मिलन हुआ है।

थोडे ही समय मैं जब मेरे साथ ही आये हुए अन्य लोगों से भी बाबा मिल चुके तो वे अपने आसन से उठे और मेरी अंगुली को अपने समर्थ हाथों में थमाकर, जैसे एक पिता अपने छोटे बच्चे को कहीं ले जाता हैं, वे मुझे यज्ञ समाचार सुनाते हुए सीढियों से नीचे उतरने लगे और एक-एक उपस्थित ब्रह्माकुमारी बहन का परिचय भी देते रहे और साथ-साथ उन्होंने मुझे सारा घर, यहाँ तक कि स्टॉक के बन्द कमरे को भी खुलवाकर दिखा दिया जैसे कि चिरकाल के बाद ओय किसी बच्चे को बाप अपने घर का सारा समाचार

नि:संकोच होकर सुना देता है। और तो क्या, बाबा ने मुस्कराते हुए एक बात और भी इन शब्दों में बता दी- 'बच्चे, इस आवास स्थान के पीछे ही स्मशान है और वहाँ एक साधु ने कुटिया बना रखी है और वह रात-दिन ऊँचे-ऊँचे स्वर से बाबा पर गाली रुपी पुष्पों की वर्षा करता रहता है।' पहले ही दिन, प्रथम ही मुलाकात में इतनी निकटता का आभास बाबा ने मुझे दिया था।

सभी जानते हैं कि तब न तो मैं आयु में बडा था, न ही मेरा सांसारिक पद कोई ऊँचा था, न ही किसी भी अन्य दृष्टिकोण से मैं कोई विशेष व्यक्ति था, तो भी बाबा ने इतने स्नेह से और इतने खुले दिल से जो मुझे सारा समाचार सुनाया और जिस प्रकार मैंने उनमें सहृदयता, आत्मीयता तथा वात्सल्य पाया उसने सदा के लिए मेरे हृदय को जीत लिया। विशेष बात यह कि उन द्वारा मुझे शिवबाबा से मिलन का जो अनुभव हुआ था, वह तो एक ऐसा अविस्मरणीय वृतान्त था जिसकी गणना मैं जीवन के सर्वोत्कृष्ट क्षणों में भी विशेष रूप से किया करूँगा।

पहली बार जब मैं मधुबन गया तब मुझे कितनी ही विचित्रताएँ देखने को मिली। यज्ञ-वत्सों में कितने ही वत्स ऐसे भी थे जिनकी लौकिक माता या मासी भी प्रभु समर्पित थी तथा अन्य कई सम्बन्धी भी समर्पित वत्सों में ही सम्मिलित थे। परंतु वे सभी स्वाभाविक रूप से एक-दूसरे को 'बहन' शब्द से ही संबोधित करते थे। ज्ञान प्रवेश से पहले के जीवन के सम्बन्ध का भान उनके वर्तमान जीवन और कार्य व्यवहार में रंच भी देखने को नहीं मिलता था इसलिए मुझे यह देखकर प्रसन्नता युक्त आश्चर्य हुआ कि 'मातेश्वरी जी की लौकिक माता उनके लिए 'ममा' शब्द का प्रयोग करती थी और पिताश्री जी की लौकिक धर्म-पत्नी उन्हें 'बाबा' कहती थी और भ्राता विश्व किशोर को उनकी धर्मपत्नी 'भाऊ' (बडा भाई) कहती थी।' मातेश्वरी जी और पिताश्री जी से भिन्न-भिन्न घरों और परिवारों से आए हुए सभी यज्ञ-वत्सों का अलौकिक माँ और बाप ही के सम्बन्ध का ऐसा पक्का नाता था जैसे शारीरिक जन्म लेने वाले बच्चों का अपने लौकिक माँ-बाप के साथ होता है। नहीं, नहीं, वह उससे भी लाख गुणा अधिक पैतृक स्नेह से युक्त नाता था। यह सर्व विदित है कि महात्मा गाँधी जी ने अपने जीवन में अपनी लौकिक धर्म पत्नी को 'माँ' मान लिया था। और ऐसा ही दृष्टिकोण स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने भी अपनी पत्नी से प्रारंभ ही से अपनाया था। परंतु यहाँ तो हरेक यज्ञ-वत्स में यही धारणा थी। संसार के कुछ देह-अभिमानी लोगों के लिए यह बात आलोच्य हो सकती है परंतु मेरे लिए तो यह इस बात का साक्ष्य था कि वे यज्ञ-वत्स दैहिक सम्बन्धों से एवं मोह-ममता से ऊँचे उठकर सबको आत्मा के नाते से देखते हुए अथवा सबके साथ अलौकिक ही सम्बन्ध मानते हुए योग मार्ग के दृढ़-प्रतिज्ञ व्यक्ति थे। बाबा के द्वारा गीता-ज्ञान प्राप्त कर यह उनके 'नष्टोमोह: स्मृतिलब्धा' बनने का प्रमाण था। ये उनकी 'विदेही अवस्था' की और उन्मुख होने का सूचक था और इस विषय में उन सभी के सामने आदर्श थे पिताश्री और माताश्री।

शिवबाबा की प्रवेशता के बाद तो बाबा के चरित्र ऐसे अलौकिक दिखाई देते थे कि यह कहना भी मुश्किल मालूम होता था कि कौन-से कार्य शिवबाबा के थे और कौन-से ब्रह्माबाबा के। धर्मिक ग्रन्थों में, विशेष कर शैव ग्रन्थ में सायुज्य, सामीप्य और सारूप्य - इन तीन शब्दों का विषद वर्णन मिलता है। आगमों में तीन प्रकार की मुक्ति के वर्णन में इन तीन शब्दों का विशाष रूप से प्रयोग किया जाता हैं परंतु साकार बाबा के जीवन पर एक नये अर्थ में ये तीन ही विशेषण चरितार्थ होते थे और उनकी अव्यक्त अवस्था पर तो ये और ही ज्यादा सार्थक रूप में अनुभव किये जाते हैं। ब्रह्माबाबा का शिवबाबा से अनन्यतम येाग था। दोनों में ऐसा सायुज्य था कि मानो एक-दूसरे कि राय के बिना अथवा एक-दूसरे से अलग होकर वे कोई कार्य करते ही नहीं थे। उनमें सामीप्य भी इतना था कि वे दो न होकर एक ही मालूम होते थे। मन से, बुद्धि से, गुणों से वे एक-दूसरे के ऐसे निकट जुटे थे कि जुडवा से भी ज्यादा। उनके कर्तव्य भी एक रूप से ही हो गये थे और ब्रह्माबाबा का साकार रूप ही तो शिवबाबा का भी साकार रूप था और ब्रह्माबाबा की शब्दावली भी तो एक रूप ही लेती गई थी। जैसे दमयन्ती के स्वयंवर के बारे में प्रसिद्ध है कि - 'वहाँ राजा नल के अतिरिक्त देवता भी नल से मिलता-जुलता रूप धारण कर पधारे हुए थे। परंतु उनमें केवल अन्तर इतना ही था कि देवताओं के रूप की परछाई नहीं थी और राजा नल की परछाई थी - इस संकेत से ही दमयन्ती ने राजा नल को पहचान लिया था।' वैसे ही उपरोक्त प्रसंग में भी शिवबाबा और ब्रह्माबाबा में भी गुण, कर्म, स्वभाव में सारुप्य होता जा रहा था। ऐसा सारुप्य होता जा रहा था कि दोनों में भेद करने का प्रयत्न करना असफलता के द्वार में प्रवेश करने के तुल्य था। इन तीन विशेषताओं के कारण ही तो आज भी अव्यक्त बाप-दादा का सम्मिलित रूप से कार्य चल रहा है।

देखा जाये तो साकार बाबा अपने भक्ति काल में ही भगीरथ पुरुषार्थ में ही लग गये थे तभी तो वे शिवबाबा के भाग्यशाली रथ बने और ज्ञान-गंगा को उतारने के निमित्त बने। कुछ वर्ष पूर्व बाबा के अपने ही हाथों से लिखी एक कापी मिली थी, उससे यह स्पष्ट विदित होता था कि शिवबाबा की प्रवेशता से पहले उनकी मानसिक भूमिका कैसी थी। नमूने के तौर पर यदि एक पन्ने को लिया जाए तो उस पर कुछ इस प्रकार से लिखा था कि - 'हे मनमन्त्री, आज मैंने तुमसे बात करनी है। जब मैं आत्मा ही राजा हूँ तब तू मुझ आत्मा

की आज्ञानुसार क्यों नहीं चलता...।' इस प्रकार अंतर्मुखी होकर अपने को सुधारने और सँवारने की ही प्रबल चेष्टा उनमें स्पष्ट दिखाई पडती हैं।

ज्ञान प्राप्ति के पश्चात जिन्होंने साकार बाबा को देखा, वे शायद ही इस बात का एहसास करते होंगे कि बाबा अपने व्यापारी जीवन में काफी धन दौलत के मालिक थे क्योंकि बाबा ने कभी भी स्पष्ट रूप से यह नहीं बताया कि सम्पत्ति के वह मालिक थे। यद्यपि कभी-कभी वे यह बताया करते थे कि कलकत्ते के जवाहिरात के व्यापारी उनके बडे व्यापार के कारण उन्हें 'खिदरपुर का नवाब' कहते थे। परंतु बाबा की सम्पत्ति का कुछ संकेत एक वृतांत से लगाया जा सकता है जो बाबा की लौकिक बहु राधिका जी, अपने विवाह के प्रसंग में सुनती हैं। वे कहती हैं कि - 'जब मैं अभी एक छोटी-सी बच्ची थी और एक मिठाई की दुकान पर मिठाई खरीद रही थी और मैंने एक सुन्दर-सी टोपी पहन रखी थी जो कि जडी हुई थी, तब रास्ते से गुजरते हुए दादा ने मुझे अपने घर वालों के साथ देखा था। तभी दादा ने अपने एक बडे बच्चे के बारे में सोचते हुए यह संकल्प किया था कि वे मुझे अपने ही घर में वधु के रूप में ले आयेंगे। जब मैं बडी हुई तो दादा ने मेरे बडे भाई से इस विषय में बात की।' तब मेरे बडे भाई ने कहा - 'दादा, हमने मन में यह निश्चय किया हुआ है कि राधिका को हम उस घर में देंगे जहाँ ये तीन बातें पूरी हों - १. उसका पाँव गलीचों पर पडेगा। २. वह खाना कभी भी अपने हाथ से नहीं बनायेंगी बल्कि घर में काम करने के लिए सब प्रकार के नौकर होंगे और ३. उनके जाने-आने के लिए गाडी का प्रबन्ध होगा।' दादा ने कहा - यह तो कोई बडी बात आपने नहीं बताई, यह सब तो हमें मंजूर हैं।

राधिका जी के भाई ने अवश्य ही अपने किन्हीं विश्वसनीय लोगों से चर्चा की होगी और उन्होंने उसे दादा के इस प्रस्ताव को स्वीकार करने का सुझाव दिया होगा परंतु दादा चूँकि उन दिनों अपने व्यापार के कारण अधिकांश कलकत्ता में और मुम्बई इत्यादि में रहते थे और करांची में थोडे-थोडे समय के लिए अपने स्थान में आकर रहते थे, इसलिए मेरे बडे भाई कलकत्ते जाकर ठीक रीति से सब देख-रेख करना चाहते थे। अत: कुछ समय के पश्चात वे दादा को सूचित करने कलकत्ता पहुँचे।

दादा ने जो उनका आतिथ्य किया, और उनके रहने-सहने की व्यवस्था की, उससे तो वे बहुत प्रभावित हुए ही परंतु जिन विशेष वृतान्तों ने मेरे भाई को मुझे बाबा के घर में देने का निर्णय करने के लिए निश्चयात्मक बनाया, वे कुछ इस प्रकार थे।

बाबा ने एक दिन मेरे भाई को वह सब अलमारीयाँ खोल कर दिखाई जिनमें अनेक प्रकार के, एक-से-एक कीमती हीरे, रत्न, माणिक, मोती आदि थे। यह देखकर मेरा भाई आश्चर्यचकित हो गया। दूसरे दिन बाबा ने उन्हें वह अलमारियाँ खोल कर दिखायी जिनमें एक-से-एक सुन्दर डिजाईन के, सोने के जेवर, अंगूठियाँ, पाजेब, हार, चूडियाँ, कंठियाँ और बरतन इत्यादि थे। इसको देखकर वे दंग रह गये क्योंकि ये बहुत ही अधिक संख्या में और बहुत ही मूल्य के थे। तीसरे दिन बाबा ने उन्हें चाँदी के अनेक प्रकार के बरतन और शृंगार दिखाये। इस प्रकार वे इतने खुश होकर आये और उनहोंने आकर इस बात की यहाँ चर्चा की कि दादा लखीराज तो बहुत ही धनाढय व्यक्ति हैं। मेरा अपना लौकिक परिवार भी धन दौलत से सम्पन्न था, इस लिए ही मेरा भाई देखने गया था कि दादा कितने धनवान हैं और वह खुश होकर लौटा था। बाबा ने स्वयं अपने बारे में पहले ही से यह उन्हें नहीं बताया था कि - 'उनके जवाहिरात का व्यापार इस कोटि का है।' ज्ञान काल में भी जब कोई बाबा के सन्मुख ऐसी चर्चा करता कि - 'बाबा ने लाखों की सम्पत्ति ईश्वरीय सेवा में लगा दी।' तो बाबा सदा कहते - 'बच्चे, शिवबाबा हमें जन्म-जन्मांतर के लिए जितना दे रहे हैं, उसकी तुलना में तो बाबा ने कुछ भी नहीं किया। बच्चे, दादा के पास तो विनाशी रत्न थे, शिवबाबा तो हमें अविनाशी रत्नों से मालामाल कर रहा है और ये रतन तो अन्य किसी के पास है ही नहीं।' या तो वे कहते - 'वत्सों हमने दिया क्या है? बाबा किसी से कुछ लेता थोडे ही हैं? इस दुिनया का तो सब-कुछ डूब जाने वाला है इसलिए हमने तो बाबा के पास इन्श्योर(बीमा) करा दिया हे। और देखो तो शिवबाबा कैसा फराखदिल दाता है, हमें वह सारी सृष्टि की बादशाही दे देता है और उसमें रत्न और सोना भी इतना देते हैं कि हम अपने महलों को सोने की चादरों से मढकर ऐसे-ऐसे हीरे उसमें जड देते हैं कि जिनकी गिनती भी नहीं। तो बच्चों, सोचा तो कि हमने बाबा को कुछ दिया थोडे ही हैं...।'

यों संसार में धनी लोग तो बहुत होते हैं परंतु उनमें से कई लोग ऐसे भी होते हैं जो तंग दिल होते हैं और अपनी सम्पत्ति को यों ही लॉकर्स तिजोरियों में बन्द किये रहते हैं परंतु दादा के संस्कार शाही थे। वे फराखदिल व्यक्ति थे। ब्रह्माकुमारी बृजइन्द्रा जी अपना अनुभव सुनाते हुए कहती हैं कि - 'शिवबाबा की प्रवेशता से पहले जो कुछ वर्ष दादा की बहू के रूप में बिताये, उस अवधि में दादा ने उन्हें रानियों से भी अधिक ठाठ से रखा।' वे कहती हैं कि - 'एक बार नेपाल के राजकुल में मालूम पडा कि दादा अपने घर बहू लाये हैं तो उनके सदस्य, शहजादियाँ इत्यादि मुझ से मिलने आई थी।' जब उदयपुर के महाराजा को मालूम हुआ कि - 'दादा कलकत्ता में बहू को ले गये हैं तो उन्हों ने भी दादा को लिखा था कि वे सिन्ध जाते समय अपनी पत्नी और बहू सहित बीकानेर से होते

जायें। दोनों राजाओं के राजकुल की महिलाओंने जब मुझे देखा तो वे यह देखकर हैरान रह गयी कि मैंने उनसे ज्यादा जेवर पहन रखे थे। मैंने एक-एक अँगूली में दो-दो अँगूठियाँ पहन रखी थी और वे भी कीमती हीरों की। मेरा हार भी हीरों का बना था। यह सब देखकर वे सब बाबा को बेताज राजा मानते थे। और यह भी महसूस करते थे कि बाबा फराखदिल हैं।' परंतु जैसे-जैसे बाबा अधिकाधिक अन्तर्मुखी होते गये, उनका मन इन चीजों से हटता गया और उन्हें ये शृंगार फीके दिखाई देने लगे और आखिर सुनहरी शब्दों में लिखी जाने वाली इतिहस के वह घडी आई जब शिवबाबा ने फराखदिल और राजकुलोंचित संस्कारों वाले साधारण और साथ-साथ उच्च जीवन प्रणाली वाले दादा के रथ को माध्यम के रूप में अपनाया।

ऐसे थे हमारे और जगत् के बाबा!

- वी.के. जगदीश भाई, दिल्ली

सन् १९५३ से लेकर १९६९ के प्रारंभ तक बाबा से साकार रूप में ईश्वरीय सेवा के निमित्त जो प्राय: मिलना अथवा वार्तालाप होता उससे विभिन्न प्रकार के अनुभवों का एक अतुल खजाना बाबा से मिला। उसी के कुछ अनमोल मोती यहाँ अन्य बहन-भाईयों के लिए बाबा की प्रिय देन के रूप में प्रस्तुत करता हूँ :-

1. ईश्वरीय सेवार्थ सदा प्रोत्साहन

यह बात सन् १९५५-५६ की है। तब मुझे समाचार मिला कि दादी कुमारिका जी, रतनमोहिनी बहन और भाई आनन्द किशोर जी अमुक तिथि को एक समुद्री जहाज से मद्रास बन्दरगाह पर लौट रहे हैं। उन दिनों जापान में हो रहे सम्मेलन से सम्बन्धित सारे पत्राचार और छपाई इत्यादि का कार्य बाबा ने मुझे सौंपा हुआ था। मैंने बाबा को लिखा- 'प्यारे बाबा, मेरा विचार है कि जब ये बहन-भाई मद्रास में पहुँचे, तब मद्रास में पत्रकार सम्मेलन हो।' उन दिनों यह यज्ञ कठोर आर्थिक कठिनाई के दौर में से गुजर रहा था परंतु पत्र मिलते ही बाबा ने मुझे इसके लिए स्वीकृति की सूचना दे दी और मधुबन बुला लिया। मैं मधुबन पहुँचा तो बाबा को मालूम हुआ कि 'मेरे पास पर्याप्त वस्त्र ही नहीं हैं कि चार-पाँच दिन की लगातार इतनी लम्बी यात्रा कर सकूँ और वहाँ जाते ही कपडे धुलाये बिना उस मौके को ठीक तरह से निभा सकूँ।' परंतु एक तो आर्थिक कठिनाई, दूसरे अब तुरंत तीन-चार जोडे कहाँ से सिलवाऊँ? बाबा ने वस्त्रों के स्टॉक की संभाल रखने वाली बहन को निर्देश दिया कि वह पुराने कपडों के स्टॉक में से मेरे लिए कोई वस्त्र ढूँढे और यदि उसमें कोई पैन्ट इत्यादि मिल जाए तो मेरे लिए निकाल दें। उसने ऐसा ही किया। मेरे लिए दो सफेद पैन्ट निकाल दी। वो पैन्ट मुझे बहुत छोटी होती थी, टखनों से भी उपर तक ही पहुँच पाती थी परंतु जब बाबा ने मुझसे पूछा - 'बच्चे वस्त्र ठीक है?' परिस्थिति को देखते हुए तो मैंने कहा - 'हाँ, बाबा'। वास्तव में मुझे पैन्ट पहनने का अभ्यास नहीं था। मैंने जीवन में केवल एक रात्रि को ही अपने एक बडे भाई के विवाह के अवसर पर, अज्ञान काल में उनके आग्रह पर पैन्ट पहनी थी। परंतु ये अब बाबा ने आज्ञा दी थी, इसलिये इसी को वरदान मानकर स्वीकार किया। सोचा कि इसको पेट से काफी नीचे बाँध लूँगा।

आबू से अहमदाबाद और फिर मुम्बई पहुँचा वहाँ से जानकी बहन भी पत्रकार सम्मेलन करने मेरे साथ मद्रास गई। वहाँ उनके एक लौकिक सम्बन्धी के यहाँ हम ठहरे जिनका निवास तत्कालीन मुख्यमंत्री के बंगले के साथ रहने वाली बिल्डिंग में ही था। अत: उनके सम्बन्ध से मुख्य मन्त्री के यहाँ से ही हमने प्रैस वालों को फोन कर दिये कि - 'आज अमुक समय प्रैस कॉन्फ्रेन्स होगी और उन्हें पूछताछ के लिए वहाँ का ही टेलिफोन नम्बद हमने दे दिया।' हम तो इस बात से अनभिज्ञ थे और हमने भोलेपन से ही वह नम्बर दे दिया था परंतु सभी समाचार पत्रों के सम्वाददाताओं को तो यह मालूम था कि यह मुख्यमन्त्री के बंगले का फोन नम्बर है। हमने सम्मेलन के लिए सायंकाल का समय दिया था और जापान से आने वाले हमारे भाई बहनों ने प्रात: लगभग १०-११ बजे तक पहुँच जाना था परंतु वे सायंकाल प्रैस कान्फ्रेन्स के समय तक भी नहीं पहुँचे। तथापि हमने प्रैस वालों के लिए एक वक्तव्य बना रखा था। मुख्यमन्त्री के आवास के टेलीफोन नम्बर के कारण काफी रिपोर्टर आ गये थे। हमने उन्हें उस वक्तव्य की टंकित लिपि दे दी। वह वहाँ के मुख्य समाचार पत्र 'हिन्दु' तथा अन्य पत्रों में छप गई।

इसके बाद जब हम मुम्बई आये तो मुम्बई में भी रिपोर्टर को बुलाया गया था। वहाँ टाईम्स ऑफ इन्डिया के संवाददाता और फ्री प्रैस जनरल का संवाददाता भी स्टेशन पर आया था और दैनिक इन्डियन एक्सप्रेस ने अपने एक स्थाई स्तम्भ में फोटो सहित प्रैस-इन्टरव्यू छापा था। इस प्रकार उससे ईश्वरीय सेवा हो गई।

आज जब यह वृतांत याद आता है तो सोचता हूँ कि कितनी कठिन परिस्थितियाँ होने के बावजूद भी ईश्वरीय सेवा के लिए बाबा ने सदा ही प्रोत्साहन दिया। बाबा हमेशा कहा करते कि 'बच्चे, पेट के भोजन के खर्च से भी बचाकर ईश्वरीय सेवा में लगाना चाहिए।'

इतनी प्रेरणा देते थे बाबा ईश्वरीय सेवा के लिए।

2. ईश्वरीय सेवा की तीव्र गति

ईश्वरीय सेवार्थ बाबा के कार्य करने और कराने की रफ्तार देखते ही बनता था। उससे तो किसी को भी यह आभास हो सकता था कि सचमुच यहाँ सारे विश्व को संदेश देने की मुहिम चल रही है अथवा यह युग परिवर्तन एवं विश्व परिवर्तन का कार्य चल रहा हैं। प्रतिदिन डाक द्वरा भेजने के लिए लिटरेचर के बहुत से पैकेट बडी तीव्र गति से बन रहे होते। प्रतिदिन प्रात: बाबा स्वयं भी बहुत तीव्र गति से बहुत से पत्र लिख रहे होते। हर रोज दिन बाबा किसी विषय पर कोई पुस्तिका, फाल्डर या हैन्डबिल आदि छपवाने का निर्देश देते। उन दिनों दिल्ली में डाक घर दिन में तीन-बार डाक बाँटता था और हर डाक में बाबा के दो-तीन या कम-से-कम एक पत्र कोई-न-कोई नई चीज छपवाने के बारे में होता और मजे की बात तो यह है कि हर बार एक तिथि निश्चित की गई होती जिस तिथि तक वह साहित्य छपवा कर सेवा-स्थानों पर पहुँचा देना होता। जिस समय पत्र मिलता उसी समय ही लिखते और अनुवाद करने का कार्य शुरु हो जाता क्योंकि उसमें समय की गुँजाईश ही न होती कि एक-आधा दिन या ४-५ घण्टे का वक्त (अवधि) डालने से वह समय पर हो पाये। जब हम हाँफते-हाँफते प्रैस में पहुँचते तो छापखाने का मालिक या मैनेजर बैठते ही मुस्कुराते हुए, हाथ जोडकर कहता - 'जगदीश भाई, आप अर्जेन्ट काम ही लाये होंगे ? है न अर्जेन्ट ? देखो भाई, इस बार मैं हाथ जोडकर कहता हूँ कि मुझे माफ करो।' मैं कहता - 'माफी भगवान से माँगो, यह तो उसी का काम है और इस बार तो बहुत ही अर्जेन्ट है।' बेचारा बहुत आवेदन-निवेदन करता परंतु हम उसकी कहाँ मानते थे ? मान भी कैसे सकते थे ? वह कहता - 'जगदीश भाई, अर्जेन्ट तो कभी-कभी होता है परंतु आप तो हर बार यही कहते हो कि यह अर्जेन्ट है।' कई बार तो वे बिल्कुल ही अड जाते और हमारी ओर से अनुनय-विनय भी काम न चलता। छापखाने में अक्षर जोडने वाले भी हमारी ओर से मेनेजर को कहते - 'आप इनका काम ले लिजिये, हम रात को देर तक कर देंगे।' परंतु वे मिट्टी का माधो बनकर बैठ जाते और 'हाँ' न करते। तब हमें भी रूप रचना पडता। जब यह कहने से बात न बनती कि यह तो सतयुग की स्थापना के लिए कार्य हैं, आदि-आदि...। तब कई बार तो ये भी कहना पडता कि 'प्रैस तो शिवबाबा की है यहाँ तो उसी का काम चलेगा। क्या यह शिवबाबा का नहीं हैं ?' वह कहते - 'है तो सब-कुछ शिवबाबा का ही, हम भी उन्हीं के हैं।' इस प्रकार हुज्जत भी न चलती। तो हम साफ बोल देते कि हम तो मशीन रोक देंगे। परस्पर प्रेम तो था ही। आखिर वह समझ जाते कि सचमुच इन्हें इस काम की जल्दी है और बाद में फुर्सत में कभी संस्था की प्रशंसा करते हुए कहते कि - 'आपके बाबा की कमाल हैं जो सारा ही काम वैरी अर्जेन्ट बताते हैं।' बाबा ने आप लोगों की लग्न इतनी तीव्र कर दी है कि इस संस्था के कार्यकर्ता न अपने भोजन का ख्याल करते हैं, न आराम का और हम लोग उन्हें कुछ खाने के लिए पेश करते हैं तो वे कहते - हमें बाहर का नहीं खाना। आप सब लोगों की लग्न देखकर और इसे शिवबाबा का ही कार्य समझकर हम और काम छोडकर भी पहले इसे करते हैं.....।

बाबा केवल छपाई के लिए ही जल्दी नहीं बरते बल्कि उसे जल्दी भिजवाने के लिए भी कोई कसर न छोडते। हम हर बार जब स्टेशन पर पार्सल बुक करवाते, तब अपने सामने ही पहली गाडी में चढ़वाने पडते। बहुत बार स्टेशन सुपरिटेन्डेन्ट से पार्सल के फार्म पर 'तुरंत भेजो' लिखवाना पडता और कितने ही पार्सल तो स्टेशन पर पहली गाडी से जाने वाले फर्स्ट क्लास या एयर कन्डीशन कोच में जाने वाले यात्रियों द्वारा भेजने पडते। ऐसा भी होता कि किसी भाई को एक दिशा में एक गाडी में सब पार्सल देने पडते और रास्ते में आने वाले सब सेवाकेन्द्रों पर तार कर दी जाती अथवा टेलिफोन खडका दिये जाते कि वे अमुक गाडी से अपना पार्सल ले लें। रात-दिन सेवा का कार्य चालू था।

उन दिनों रिवाज यह था कि - 'किसी के घर में तो तब तार आती थी जब उनके किसी निकट सम्बन्धी का शरीर छूट गया होता। परंतु यहाँ तो प्रतिदिन दो-दो, तीन-तीन तार आते थे।' देहली में कमलानगर स्थित सेवा केन्द्र, यहाँ से यह कार्य होता है, वहाँ ही पहले दीदी जी भी रहा करती थी। उस सेवाकेन्द्र के नीचे वाली मंजिल पर मकान मालिक रहता है। वह रात्रि को नीचे का द्वार बन्द कर दिया करते थे। अत: प्राय: हर रात्रि को तार वाला नीचे से आकर आवाज देता - 'तार वाला'। 'ब्रह्माकुमारीजी ! तार ले लो'। आस-पास के लोग यह आवाजें सुनकर आश्चर्य चकित होते कि यहाँ रोज ही तार आते हैं। यह है तो धार्मिक संस्था, धर्म के कार्य में रोज तार की क्या आवश्यकता !! तार में या तो यह लिखा होता कि - 'तुरंत साहित्य भेजो या अमुक ब्रह्माकुमारी को अमुक सेवाकेन्द्र पर भेजो।' पडोसी भी रोज देखते कि अभी-अभी एक ताँगे में कुछ ब्रह्माकुमारी बहनें सेवाकेन्द्र पर आकर अपना सामान उतार रही है और पास में ही खडे दूसरे टाँगे में पहले ही से कुछ दूसरी ब्रह्माकुमारीयाँ का सामान लादा जा रहा है। अवश्य ही उनके मन में प्रश्न उठते होंगे कि यह कैसी विचित्र संस्था हैं। मानो कहीं लडाई हो रही है, कुछ फौजी भेजे जा रहे हैं और कुछ आ रहे हैं। और वास्तव में बात थी भी ऐसी ही। माया अथवा विकारों से युद्ध के लिये ही तो ईश्वरीय सैना द्वारा यह सब-कुछ हो रहा था।

3. जितनी सेवा की तीव्र गति की पराकाष्ठा उतनी ही प्रेम की पराकाष्टा

एक बार की बात है कि बाबा यहाँ देहली मे रजोरी गार्डन में ठहरे हुए थे। शिवरात्रि में केवल ४ या ५ दिन रहते थे। प्रात: मुरली में बाबा ने 'मनुष्य मत' और 'ईश्वरीय मत' में महान अन्तर की बात कही थी। क्लास के बाद बाबा बोले - 'बच्चे, 'मनुष्य मत और ईश्वरीय मत' पर एक पुस्तक लिखकर उसे झट-पट छपवा कर सब सेवाकेन्द्रों पर भेज दो। बोलो बच्चे, कब तक छप जायेंगी ?'

मैंने कहा - 'बाबा, कोशिश करुँगा कि एक हफ्ते में तैयार हो जायें।'

इस पर बाबा ने कहा - 'कोशिश नहीं और एक हफ्ता भी नहीं, यह तो शिवरात्रि पर सबको बाँटनी होगी।'

मैंने कहा - 'बाबा, किताब कितने पृष्ठ की हो ?'

बाबा बोले - 'यह आप जानो, परंतु उसमें मनुष्य मत और ईश्वरी मत की सभी मुख्य बातों का अन्तर आ जाना चाहिए।'

मैं सोचने लगा कि चार-पाँच ही तो दिन रहते हैं। किताब को पहले हिन्दी में लिखा जाए, फिर उसे पढकर कुछ सुधार किया जाये, फिर उसका अंग्रजी में अनुवाद किया जाये। और, उसमें कोई महान अन्तर का पॉइन्ट भी न छूटे और उसमें मनुष्य मत तथा ईश्वरीय मत पर लिखे गये वाक्य भी लगभग बराबर-बराबर आयें ताकि किताब के आमने-सामने के पृष्ठ ठीक लगें। यह सब हो और फिर प्रैस वाला भी छाप दे, और फिर सबको समय पर पहुँच भी जाये। परंतु मन में यह भी भाव था कि 'बाबा ने कहा है तो होगा जरूर।' 'हिम्मते मर्दा, मददे खुदा'।

मैंने रात-दिन लगाकर हिन्दी में मूल लेख तैयार किया और प्रैस ही में बैठकर वहाँ मैं अंग्रेजी में अनुवाद करके देता गया। भाई विश्व रत्न जी भी दो-तीन रात लगातार वहीं छापखाने में प्रुफ आदि देखते रहे। आराम और भोजन को छोडकर हमारी और समय की दौडी लग गई। ६४ पेज की हिन्दी और ६४ पेज की अंग्रेजी की बडे पृष्ठ वाली दो किताबें छपकर तैयार हो गई। बाबा की सहायता से सारा काम ठीक हो गया।

परंतु कुछ फाका-मस्ती से, दिन-चर्या में हेर-फेर से, आराम न करने से और प्रैस में ठंड लग जाने से काम समाप्त होने के दूसरे दिन मुझे लगभग १०४ बुखार आ गया। ईश्वरीय कार्य के बल के कारण फिर भी कुछ महसूस नहीं हुआ। एक मित्र डॉक्टर के कहने के अनुसार मैं सेवाकेन्द्र में थोडा आराम करने के विचार से लेट गया। मैं वहाँ अकेला ही था क्योंकि अन्य सभी बहन-भाई रजोरी गार्डन सेवाकेन्द्र पर बाबा के पास ठहरे हुए थे। अचानक से सेवाकेन्द्र के द्वार की घण्टी बजी। उठकर दरवाजा खोला तो यह देखकर आश्चर्य की कोई हद न रही कि 'भाई विश्वकिशोर के साथ बाबा स्वयं आये हैं।' मालूम नहीं, बाबा को किस प्रकार से सूचना मिली थी। बाबा ने कितना प्यार किया होगा और कैसे स्नेह युक्त शब्द बोले होंगे, वह आप समझ सकते हैं। बाबा को मिल कर मेरी सारी थकान तत्क्षण ही दूर हो गई। मैंने सोचा, बाबा ने जितनी जल्दी छपाने के लिए की थी, उससे भी ज्यादा जल्दी आकर इस बच्चे को प्यार देने के लिए की। छपाई के लिए तो बाबा ने चार दिन दिये थे और प्यार देने में तो बाबा ने एक दिन का वक्त भी नहीं डाला।

4. साहित्य कार्य में बाबा की मार्ग प्रदर्शना

साहित्य के सम्बन्ध में बाबा से मिलने और बात करने का प्राय: जो मौका मिलता उससे ज्ञान को और अधिक समझने में मदद मिलती और बाबा के विचारों को नजदीक से समझ पाते। जब हम लिखकर बाबा के पास ले जाते तो उसे देखकर बाबा समय-समय पर कई प्रकार के निर्देश-आदेश देते और उसे लेख में परिवर्तन या परिवर्धन करते। मैंने देखा कि जहाँ कहीं हिन्दी में 'परमपिता परमात्मा' शब्दों का अंग्रेजी में 'सुप्रीम फादर' शब्दों का प्रयोग होता वहाँ बाबा कमश: 'परमप्रिय' और 'मोस्ट बिलवेड' शब्द जोड देते। अपने लाल अक्षरों में जब बाबा ये शब्द जोड रहे होते, मन में प्रेम की एक लहर दौड जाती। यदि मैं बाबा के सामने न बैठकर बाबा के बाजू की ओर बैठा होता तो बाबा लिखित पृष्ठ में ये शब्द जोडकर मेरी ओर मुडकर मुस्कुराहट से मुझे मीठी दृष्टि देते जैसे लिखने के साथ-साथ वे प्रैक्टीकल में परमप्रिय का पार्ट बजा रहे हों। उस समय यह आभास होता कि, देखा न, बाबा तो सचमुच परमप्रिय हैं ही। एक बार तो मैंने यह देखा कि सारे लेख में जितनी बार भी 'परमपिता' शब्द आया था, बाबा ने उन सब जगहों पर उनके साथ 'परमप्रिय' शब्द लिख दिया। तब मैंने कहा - 'बाबा, अगर एक-दो जगह पर यह परमप्रिय शब्द आ जाये तो क्या बार-बार इसका सब जगह प्रयोग करना जरूरी हैं? क्या यह पुनरावृत्ति तो नहीं लगेगी ?' तब बाबा बोले - 'बच्चे, यह तो मीठा शब्द है न! इसे बार-बार लिखने में किसी को क्या एतराज हैं? अच्छा, यदि कभी 'परमप्रिय' न लिखो तो 'ज्ञान के सागर' या अन्य कुछ लिख दिया करो।

इसी प्रकार जहाँ की सतयुग या कलियुग का वर्णन आता तो बाबा कहते - 'बच्चे, गोल्डन एज के साथ लिखो - १००परसेन्ट

राईटियस, रिलिजियस, सॉलवेन्ट और इसी तरह कलियुग के साथ इसका विपरितार्थ लिये हुए शब्द ले लिया करो।' बाबा के कहने का भाव यह था कि '१०० परसेन्ट' शब्द और 'सालवेन्ट' शब्द (कलियुग के लिए इनसालवेन्ट) भी लिखा करो। हम तो प्राय: 'रिलिजियस और राईटियस' लिख देना ही काफी समझते थे परंतु बाबा '१०० परसेन्ट' और 'सालवेन्ट' शब्द पर भी जोर दिया करते थे। बाबा सतयुग और कलियुग के साथ इतने विशेषण प्रयोग करते कि वाक्य बहुत लम्बा हो जाता और विशेषण बहुत अधिक दिखाई देते। हाँ, उन द्वारा इन युगों के बारे में हमारा मन्तव्य तो स्पष्ट हो जाता। मैंने एक बार बाबा से कहा - 'बाबा, आजकल लोग छोटे-छोटे वाक्य पसन्द करते हैं। ऐसे बडे वाक्यों को समझना लोगों के लिए कठिन हो जाता हैं।' तब बाबा बोले - 'पढ़ने वालों को इतनी समझ नहीं है क्या ?' तो मैंने कहा - 'बाबा, आप ही तो कहते हैं कि माया ने समझ खत्म कर दी है।' बाबा बोले - 'अब तो बाबा आकर समझ दे रहे है ना। बच्चे, इससे तो उनकी बुद्धि का ताला जोर से खुलेगा।'

5. चित्रों के बारे में बाबा के महत्व पूर्ण निर्देश

चित्र बनवाने के सिलसिले में भी बाबा से कई बार बात होती। जब श्री नारायण का चित्र बन रहा था तब बाबा बोले कि - 'इसके उपर त्रिमूर्ति का चित्र भी होना चाहिए। त्रिमूर्ति के बिना यह चित्र किस काम का ? त्रिमूर्ति के बिना तो यह चित्र भक्ति मार्ग का हो जायेगा, तब उसे छापकर हम क्या करेंगे ? त्रिमूर्ति का चित्र होने से ही हम समझा सकते हैं कि इनको ऐसा पद देने वाला अथवा राज्य-भाग्य देने वाला कौन हैं ? वरना लोग तो इन्हें ही भगवान-भगवती मानते हैं। उन्हें यह थोडे ही मालूम है कि ये तो 'रचना' है और इनका 'रचयिता' तो शिवबाबा है। हमारा उद्देश्य तो उन्हीं का परिचय देना है क्योंकि ऐसी उँची पढ़ाई पढ़कर नर से श्री नारायण बनाने वाले ते वे ही हैं। श्री लक्ष्मी और श्री नारायण तो हमारी पढ़ाई का लक्ष्य हैं। इस लक्ष्य को तो स्वयं तो कोई प्राप्त कर नहीं सकता और न ही संसार को यह पता है कि इनको ऐसी उँच प्राप्ति कराने वाला कौन हैं। अत: इनको आगे रखकर हमें इशारा तो शिवबाबा ही की ओर ही करना है क्योंकि ऊँचे से ऊँचा भगवान तो एक वही हैं।' जब बाबा यह बात बता रहे थे तो समीप बैठे हुए किसी ने कहा - 'बाबा, अगर केवल शिवबाबा ही का चित्र दे दें तो कैसा रहेगा ?'

इस पर बाबा ने कहा - 'शिवबाबा तो निराकार हैं, वह साकार में आये बिना थोडे ही पढ़ाई पढ़ा सकता हैं ? इसलिए जि साकार तन में आकर वह पढ़ाई पढ़ाता है उसका भी तो चित्र देना ही पडेगा वरना लोग क्या समझेंगे कि यह गोल-गोल निराकार बाबा कैसे पढ़ाता है ? ज्ञान देने के लिए तो मुख रूपी इन्द्रिय चाहिए न और ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण निकले और ब्राह्मण से देवता बने और देवताओं में शिरोमणी श्री नारायण हुए - यह तो सहज और स्पष्ट व्याख्या है। हाँ, बच्चे, अगर स्थानाभाव के कारण मजबूरी हो तब त्रिमूर्ति की बजाय शिवबाबा का चित्र डाल दो तो और बात हैं।'

जब अकेले शिवबाबा का अलग से चित्र छपने की बात हुई, तब बाबा बोले - 'कर्तव्य के चित्र के बिना अकेले नाम और रूप के इस चित्र से लोग क्या समझेंगे ? यों तो मंदिरों में शिव पिंडी की पूजा होती है और लोग उसे 'शिव भोलानाथ' भी कहते हैं, परंतु उससे वे कुछ समझते थोडे ही हैं कि ये बाबा हमारे भण्डारे कैसे भरपूर करता है और काल-कंटक कैसे दूर करता है ? बच्चे, गोले सहित त्रिमूर्ति का चित्र अर्थ सहित है, युक्ति युक्त है और उसमें सारा ज्ञान समाया हुआ है परंतु हाँ, यदि शिवबाबा के चित्र बनाने से ईश्वरीय सेवा में बच्चों के लिए सहज होता है तो भले ही बनाओ। परंतु इसके साथ शिवबाबा के कर्तव्य का परिचय जरूर देना।'

ऐसी ही बात श्री कृष्ण के चित्र के बारे में कहते। बाबा समझाते कि - 'उसमें अनेक जन्मों की कहानी दिये बिना वह भक्ति मार्ग का चित्र हो जाता है। परंतु यदि ऐसा ही छपवाना है तो फिर जबानी इसकी कहानी बतानी जरूरी है। सभी को बताना है कि यह सतयुग के प्रथम राजकुमार थे, और फिर अब यह फिर निकट भविष्य में आने वाले हैं।'

6. ज्ञान की गरिमा और महत्ता

बाबा न केवल ज्ञान के अनमोल महावाक्य हमें सुनाते और न केवल जन-जन को ईश्वरीय संदेश देने हेतु खूब दिल खोलकर कोई-न-कोई नई पुस्तिका अथवा चित्र छपवाते बल्कि बाबा की एक बहुत बडी खूबी यह भी थी कि वे साक्षी होकर हम बच्चों को उन वाक्यों अथवा चित्रों का महत्व प्रैक्टिकल रीति से समझाते थे। जब श्री लक्ष्मी-श्री नारायण का चित्र अभी छपा नहीं था बल्कि उसका केवल डिजाईन ही बनकर बाबा के पास आया था तब भी बाबा से जो कोई विशेष व्यक्ति मिलने आता, तब बाबा हाथ में प्वॉइन्टर लेकर बहुत ही रूची से हम सभी के सामने उस चित्र की व्याख्या देते। इसी प्रकार पहले-पहले मधुबन में जब चित्रकार त्रिमूर्ति और सृष्टि-चक्र का चित्र बना रहे थे तब भी बाबा ज्ञान की एक बहुत बडी उछल और उमंग से उसको अनमोल मानने की भावना में स्थित होकर और स्पष्टत: ज्ञान-मय और ज्ञान स्वरूप रूप से, प्रेम-पूर्वक उस चित्र को समझाते। ऐसे ही देहली में जब शिवबाबा का चित्र बन रहा था तब भी बाबा शिवबाबा के बारे में रोज-रोज ऐसा प्यार भरा स्पष्टीकरण देते कि आखिर सुनने वाले की बुद्धि के कपाट खुल जाते और सुनने

वाले को ऐसा आभास होता कि बस, उसे यह चित्र तो अपने पास रखना ही चाहिए। तब उसका स्वत: ही यह प्रश्न होता - क्या यह चित्र हमें मिल सकता हैं? यह तो बहुत अच्छा हैं। अगर उसे यह कहा जाता कि अभी यह चित्र छपा नहीं हैं, तब वह यह पूछता कि कब तक छप जाएगा? उसे यह बताने पर कि ८-१० दिन में छप जायेगा तो वह कहता - १० चित्र मेरे लिए जरूर रख लेना। जाती बार फिर वह ताकीद कर जाता कि - 'देखना, कहीं चित्र खत्म न हो जायें' और साथ-साथ वह यह भी पूछ लेता कि क्या ऐसी व्याख्या भी छपी हुई हैं? स्पष्ट है कि यह सब बाबा की ज्ञान-मय स्थिति, रुचि, उमंग और प्यार तथा ज्ञान के महत्व के गहरे अभ्यास ही का मधुर फल या प्रभाव होता था।

ऐसे ही इलाहाबाद में कुम्भ का मेला था। बाबा ने कहा कि 'एक फोल्डर छपवा लो जिसमें बताया गया हो कि पतित-पावनी जल की गंगा नहीं हैं बल्कि परमपिता परमात्मा शिव और उससे निकली ज्ञान गंगा हैं।' बाबा ने लिखा - 'बच्चे, यह फोल्डर होना तो लाखों की संख्या में चाहिए, परंतु हाल-फिलहाल ५०,००० - ६०,००० छपवा ही लो।' दो दिन के अंदर फोल्डर छप कर तैयार हो गया और तुरंत ही कई जगह भेज दिया गया। इधर बाबा ने अनेक सेवाकेन्द्रों पर कागजी घोडे दौडाये तो यह संदेश लेकर पहुँचे कि इसमें खूब ईश्वरीय सेवा की जाये और उस द्वारा होने वाली सर्विस के बारे में बाबा ने ऐसी प्रेरणा भरी कि सभी सोचते हम भी निमित्त बनकर किसी-न-किसी कुम्भकरण को जगायें। बाबा के शब्द ही ऐसे होते कि बुढ़े भी उसे सुनकर ईश्वरीय सेवा के लिए जवान हो जाते और म्याऊँ-म्याऊँ करने वाले मिचनू भी हाथ में शिवबाबा का झंडा मजबूती से थाम लेते।

उन दिनों अभी-अभी टेप मशीन का प्रयोग होना शुरु हुआ था तो बाबा साक्षी होकर हरेक को यह राय देते कि 'आपस में मिलकर एक टेप मशीन ले लो, टेप पर ही मुरली सुनने में बहुत मजा आएगा।' बाबा की बातों से ही ऐसा लगता कि 'बाबा अपने मुख से निकली आवाज को अपनी आवाज नहीं समझते थे बल्कि वे उन्हें शिवबाबा के ही महावाक्य मानते थे।' इसलिए बाबा के सामने जो आता, बाबा उससे पूछते - 'बच्ची, आज बाबा की मुरली सुनी? जाओ, पहले टेप सुनो, फिर बाबा से मिलना। बच्ची, आज बाबा ने बहुत नई-नई प्वाइन्टस सुनाई हैं, बहुत खजाना दिया हैं।'

कई बार ऐसा होता कि बाबा कहते - 'बच्चे, सुना आज बाबा ने क्या कहा? कितनी गुह्य बातें बताई। यह बाप और बच्चों का सेमीनार सुना? यह बातें तो और कोई बताता नहीं है। हम और तुम पहले इन बातों को जानते थोडे ही थे। हम और तुम तो सभी भूट्टू(बुद्धु) थे, वह बाप ही आकर यह बुद्धि दे रहा है।' इस प्रकार वह कैसा अनोखा समा होता कि अभी एक क्षण पहले हम शिवबाबा के महावचन सुन रहे होते और दूसरे ही क्षण उसी मुख से ब्रह्माबाबा द्वारा एक वत्स अथवा विद्यार्थी के रूप में शिवबाबा के महावाक्यों की महिमा सुन रहे होते।

7. खेलते समय भी ज्ञान के बोल

ज्ञान सागर शिवबाबा के संग में ब्रह्मा बाबा भी ज्ञान स्वरूप ही हो गये थे। ज्ञान अब उनसे कोई अलग नहीं था बल्कि वह उनका स्वभाव, स्वरूप अथवा नेचर बन गया था। ज्ञान रहित कोई शब्द बाबा के मुख से निकलता ही नहीं था। एक दिन बाबा मेरे साथ बैडमिन्टन खेल रहे थे। आस-पास खडे कुछ बहन-भाई देख रहे थे। जब बाबा जीत जाते तो कहते - 'इस तन में डबल सोल (दो आत्माएँ -ब्रह्माबाबा और शिवबाबा) है न, इसलिये यह जीत जाता है। शिवबाबा जिसके साथ है, विजय तो उसकी होगी ही।' (इससे मुझे चेतावनी मिलती कि मुझे भी शिवबाबा को याद करते हुए और उसे अपना साथी बनाते हुए खेल खेलना चाहिए।) जब वे हार जाते तो कहते - 'बाबा तो बच्चों को सदा आगे ही रखता है। कहते हैं न लव और कुश ने राम पर विजय पाई। बच्चें कोशिश करें तो ज्ञान में भी बाबा से तीखे जा सकते हैं।'

मेरी एक आदत बन गई थी कि जब शटल कॉक (बैडमिन्टन की 'चिडिया') पर मेरा रैकेट न लगता तो वह 'चिडिया' पृथ्वी पर गिरकर गुल खाती और उसके गुल होने (उछलने) पर मैं उसे रैकेट मारकर बाबा की ओर भेज देता ताकि हार न पाऊँ। खड़े हुए लोग हँसकर कहते - 'बाबा, देखो यह क्या करता है?' इस पर बाबा उत्तर देते - 'बच्ची गिरते हुए को उठाना ही तो हमारी सेवा है। बच्चे ने उठा दिया तो क्या बुरा किया?' इन सभी बातों से प्रतीत होता कि जैसे किसी कवि ने कहा है - 'घट में जल है, जल में घट है, बाहर-भीतर पानी' ऐसे ही बाबा और ज्ञान ओत-प्रोत अथवा अभिन्न थे।

8. धारणा स्वरूप

जैसे मिश्री मिठास स्वरूप होती है, बाबा भी वैसे ही ज्ञान स्वरूप तो थे ही, साथ-साथ वह धारणा का भी स्वरूप थे। वे धारणा की जो बातें हमें समझाते थे, उनका अपना जीवन उसकी चेतन झाँकी था। इसलिए यद्यपि कभी-कभी बाबा मॉडल बनवाने के लिये कहते भी तथा कई बार वे यह भी बाबा कहते - 'बच्चे, मॉडल को क्या करोगे? स्वयं ही दर्शनीय मूर्त, चेतन मॉडल बनो।' कभी-कभी ऐसी

उग्र परिस्थिति होती, जनता का ऐसा कडा विरोध होता, उपद्रवी लोग ऐसा उपद्रव करते कि किसी-किसी के मन में यह प्रश्न उठ जाता कि - 'अब क्या होगा ?' जिनके साथ ऐसी घटनायें बीतती, उनके चेहरे पर कभी ईश्वरीय आनंद की रेखायें फीकी भी पड जाती और उसकी बजाय सोच-विचार के चिह्न नेत्रों की आकृति से प्रदर्शित होते। परंतु वे जब बाबा को उसका लम्बा-चौडा वृत्तांत लिख भेजते ताकि स्थिति का पूरा चित्रण बाबा के सन्मुख हो आये तो बाबा लिखते - 'बच्चे, नथिंग न्यू', यह कोई नई बात नहीं हैं। यह तो असंख्य बार पुनरावृत्त हो चुकी है। इस प्रकार परिस्थिति की उग्रता उन्हें चिन्तित अथवा व्यथित नहीं करती बल्कि वे सदा फिक्र से फारीग रहते।

9. याद रूपी यात्रा की रफ्तार

इतना व्यस्त रहने पर भी बाबा के मन की तार शिवबाबा से जुटी रहती। बाबा कहते - 'बच्चे, मैं भी तो पुरुषार्थी हूँ। शिवबाबा हर समय थोडे ही मेरे तन में रहते हैं ? हर समय थोडे ही शिव बैल पर सवारी करते होंगे ? बच्चे, बाबा भी तो अपना पुरुषार्थ करता है, वरना इसका पद कैसे उच्च बनेगा ? हाँ, शिवबाबा इसका तन किराये पर लेता है, गोया वह 'सेठ' इसका 'लेंड लॉर्ड' (मकान मालिक) है, इसलिए उसका भी अजूरा-इवजाना इसे मिल जाताहै, परंतु हरेक को अपना पुरुषार्थ तो करना ही है। यह ठीक है कि यह भी बाबा है, वह भी बाबा है और यह (ब्रह्मा) सारा दिन 'बाबा...बाबा...' करता रहता हैं, इसलिये इसके लिये थोडा सहज है और उस बाबा का हो जाने से यह 'फिक्र से फारिग' है तो बुद्धि और कहीं जाती नहीं है, बाबा ही में जाती है। आप बच्चों की बुद्धि कई लफरों में लटकी रहती है तो आपको कुछ मुश्किल हो सकता है, परंतु वास्तव में तो आप बच्चों को अधिक सहज होना चाहिये क्योंकि आप तो फिक्र से फारिग है, अपनी जिम्मेदारी तो अब आपने बाबा को दे दी है न ? हाँ, बाबा को सभी बच्चों का 'ओना' (ख्याल) रहता है, बाबा का सोच (विचार) चलता है कि बच्चों की आगे-आगे उन्नति कैसे हो और नयों-नयों को यह ईश्वरीय संदेश कैसे मिले। इसलिए मुश्किल तो बाबा को होनी चाहिए।'

परंतु हम प्रैक्टिकल में देखते कि बाबा से जो भी बच्चे मिलते, उन्हें आगे बढ़ाने के लिये बाबा निराकार बाबा का माध्यम बन जाते और स्वयं भी योगरुढ, स्थित-प्रज्ञ, आत्मनिष्ठ, उच्च भूमिका में रहते, तभी तो उनके पास बैठकर सभी शान्ति, आत्मा का शरीर से न्यारा-पन, प्रेम, कल्याण कामना इत्यादि का अनुभव कर जाते। ऐसे थे हमारे और विश्व के बाबा !

कैसी अद्भूत थी वह सुहावनी घडियाँ

- वी.के. जगदीश चन्द्र, दिल्ली

साकार बाबा के साथ जीवन की जो घडियाँ बीती, वे सभी नि:संदेह अत्यंत अनमोल घडियाँ थी। उसके संग और सम्पर्क की वे घडियाँ इस आत्मा पर अमिट छाप छोड गई हैं। इस ईश्वरीय ज्ञान-मय जीवन के प्रारम्भ ही से बाबा की हरेक कृति को मैं अपने लिए एक कृपा मानता हूँ। मुझ प्रभु-प्यासी आत्मा को योग-युक्त करने के लिए बाबा ने क्या नहीं किया होगा ? मुझ पर उनका अकारण प्यार एक ऐसा प्यार था जो अनिर्वचनीय है। दिन हो या रात, सोने का समय हो या जागने का, उनकी कृपा-दृष्टि एक चुम्बक की तरह मुझ लोहे को अपनी ओर खींचें चली जाती थी। इसके उदाहरण स्वरूप जीवन में अनंत घटनायें हैं जिनका उल्लेख किया जा सकता है। उनमें से एक-दो जो तुरंत मेरे मन पर उभर आये हैं, उन्हें यहाँ लिपि-बद्ध कर देता हूँ :-

1. याद की तार कैसे जोडी जाती हैं?

ये वृत्तांत सन १९५३ का है। तब ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का मुख्यालय भरतपुर के महाराजा की 'बृज कोठी' में स्थित था। यह कोठी आज भी माऊण्ट आबू में, वर्तमान बस अड्डे से कई डेड फलाँग आबूरोड की ओर है। उस कोठी का एक हिस्सा था जिसका नाम था - 'सरदारी क्वाटर्स'। उसके ऊपर की मंजिल में बडे-बडे कमरों में बहुत बडी-बडी चारपाइयाँ ही पडी थी। एक दिन की बात है कि रात्रि को बाबा उस कमरे में लेटे हुए थे और वे ईश्वरीय जीवन, ईश्वरीय ज्ञान इत्यादि की मीठी-मीठी बातें हम पाँच-सात उपस्थित जनों से काफी देर तक बडी सहृदयता और बडे वात्सल्य से कर रहे थे।

उन बातों से आत्मा को बडा सुख अनुभव हुआ और उनको सुनते-सुनते योग में ऐसी स्थिति हुई कि मन करता था कि श्री-मुख से यह चर्चा होती रहे ताकि ये आत्मा आज पुर्णत: धुलकर याग की उच्चतम पराकाष्ठा का पारावार पा ले। इतने में ही जो वरिष्ठ बहनें मेरे साथ बैठी थी, उन्होंने कहा - 'जगदीश भाई, अब चलो, बाबा को आराम करने दो। काफी देर हो गई है।' मैं मन मसोस कर रह गया। अपने प्रियतम के आराम में खलेल कैसे डाल सकता था ? बाबा ने मुस्कुराते हुए चितवन से कमल नयनों को विशेष आभा देते हुए मेरी ओर निहारा और मैं उस चित्र को मन के फ्रेम में जडकर वहाँ से प्रस्थान करने लगा। एक विचित्र दशा थी। मन नहीं जाना चाहता था, बुद्धि जाने का निर्णय देती थी और टाँगे इस असमंजस में थी कि वे मन की बात मानें या बुद्धि की। लाचार चल रहा था परंतु

चलते समय भी ऐसा अनुभव होता था कि आज पाँव पृथ्वी पर नहीं हैं (छत पर भी नहीं हैं), बल्कि मैं स्वयं को प्रकाश के एक समुद्र में विदेह अव्यक्त में स्वयं को अनुभव करता था। एक अजब सफर को लिए हुए धीरे-धीरे नीचे उतर गया। नीचे कुछ कमरे थे जिन्हें 'धोबी क्वार्टर' कहते थे क्योंकि वहाँ दो कमरों में कपडे प्रैस होते थे। उसके निकट ही कई खाली कमरे थे। मैं उसी ओर बढ़ रहा था क्योंकि उस रात्रि को मेरे शयन की वहाँ व्यवस्था थी। जब मैं बाहर आकर चल रहा था तो चाँदनी की सफेद छटा छिटक रही थी। उसने मेरी उस प्रकाशमय स्थिति को और बल दे दिया। इतने में मैं अपने कमरे तक आ पहुँचा। वहाँ आकर कुछ देर अपनी चारपाई पर इसी मस्ती में बैठा रहा क्योंकि उस स्थिति नींद का तो नाम ही नहीं था। आखिर कब तक बैठा रहता ? उसी कमरे में वहीं लेट गया।

परंतु बाबा की वही तस्वीर भूलाये नहीं भूलती थी। उस मौन चित्र से मेरे मन में ऐसे आवाज आती थी कि - 'बच्चे, ये तुम्हें विदा कर रहे हैं। तुम इन्हें जाने दो और अभी तुम भी चले जाओ, फिर मैं तुम्हारे पास आऊँगा!' बस, यही अव्यक्त आवाज भीतर के कानों में गूँजती रही। वही मुस्कान भीतर की आँखों के सामने आती रही और वही बन्द होठ कुछ बोलते हुए सुनाई देते रहे और वही नयन कुछ आँखों से इशारा करते हुए महसूस होते रहे। इस अजब हालत में समय गुजारते पता भी नहीं चला परंतु आज सोचने से ऐसा लगता है कि तब रात्रि के १२.३० या १.०० का समय हो गया होगा क्योंकि लगभग ११ बजे तो मैंने बाबा के यहाँ से प्रस्थान ही किया था। इतने में देखता क्या हूँ कि अकेले बाबा उस कमरे में मेरे सामने आ खडे हैं और प्यार से पुचकार कर रहे हैं - 'क्यों बच्चे, नींद नहीं आ रही ?' बाबा को देखकर मुझे बेहद खुशी भी हुई और साथ-साथ मुझे अपनी आँखों और अपने कानों पर एतबार भी नहीं होता था। मैंने थोडा उठने की कोशिश की कि बाबा की ओर बढूँ परंतु बाबा ही मेरे सिरहाने की ओर बढ़े और मस्तक पर हाथ रखते हुए बोले - 'बच्चे, अब सो जाओ। फिर सुबह मिलेंगे।' काश, मुझे वह शिष्टाचार भी नहीं आया कि उठकर बाबा के कमरे तक साथ चला जाता, परंतु यह बाबा का ही प्रभाव था कि बस, यादों में खोए हुए मुझ पर धीरे-धीरे नींद ने अपनी चादर डाल दी। बस, इसके बाद जब प्रात: मैं उठा तो रात का वही दृश्य फिर याद हो आया और मैंने सोचा कि हमारे बाबा शिवबाबा के माध्यम होने से दोनों किस प्रकार हमारी याद से अपनी याद का तार जोडे हुए हैं और किस प्रकार वह करुणाकर एक नाचीज बच्चे के याद करने पर उसके प्यार की (बिना तार की) डोरी से खिंचे चले आते हैं और अपने वरद हस्तों से उसे दुलार देकर सुलाते हैं। यह सब तो अनुभव की बात हैं, परंतु इससे यह भी तो स्पष्ट हुआ कि ज्ञान और प्रेम की डोरी द्वारा बाबा से याद की तार कैसे जोडी जा सकती हैं।

इस प्रकार के अनुभव कई बार हुआ करते। मैं पाण्डव भवन में पहले जब कभी जाया करता तो नये भवन का कुछ हिस्सा बन जाने पर मेरे रहने की व्यवस्था प्राय: उसी कमरे में होती जिस कमरे में अभी निर्वैर भाई रहते हैं। सामने ही बाबा का कमरा था। रात को क्लास इत्यादि समाप्त होने के घण्टा-दो घण्टे बाद तक भी बाबा की लाईट जग रही होती। तब मैं भी प्राय:अपनी लाईट का स्विच ऑफ नहीं करता। बहुत बार ऐसा होता कि बाबा लच्छू बहन , संदेशी बहन, संतरी बहन या जवाहर बहन, जो उन दिनों वहाँ बाबा के साथ होती थी, को कहते - 'देखो, जगदीश के कमरे की लाईट जग रही हैं?' बहुधा तो जग ही रही होती थी तो बाबा उन्हें कहते - 'अच्छा, उसे बुला लाओ।' इसीलिए ही तो मैं जाग रहा होता था।

जब मैं बाबा के कमरे में पहुँचता तब कई बार खडे-खडे ही दूसरे दिन के लिए कुछ आवश्यक निर्देश देते और कभी-कभी अपने चारपाई पर बिठा देते और जिस बात के लिए बुलाया होता, वह बात भी करते रहते और कई बार साथ में लिटा कर ही ईश्वरीय बातें करते रहते।

ऐसा भी होता कि प्रात: को कभी मेरी यदि ढाई बजे या तीन बजे नींद खुल जाती तो खिडकी में से झाँक लेता कि क्या बाबा के कमरे की लाईट हो रही है और मैं पाता कि प्राय: लाईट जग रही होती थी। तो मैं भी अपनी लाईट का स्वीच ऑन कर देता। शीघ्र ही बाबा के कमरे से बुलावा आ जाता। इस प्रकार कभी ३ बजे, कभी ३-३० बजे, कभी ४ बजे एकान्त और शान्ति के समय में साकार रूप में भी बाबा से रुह-रुहान करने का सौभाग्य प्राप्त होता था।

एक बार की बात है कि मैं प्रात: जल्दी उठ गया। उस दिन स्नान भी जल्दी कर दिया। आकर अपने कमरे में बैठा सोच रहा था कि क्या ही अच्छा होता यदि मैं भी ध्यानावस्था में जाता और साक्षात्कार करता होता तो मैं देख आता कि 'परमधाम कैसा है, कितना विशाल है और परमधाम जाते समय मार्ग में जो सूर्च-चाँद-तारागण है, वे वहाँ से गुजरते हुए कैसे दिखाई देते हैं ? चलो यदि ये भी न देखता, कम-से-कम सन्देश ले जाता और ले आता और ईश्वरीय सेवा में सहयोगी तो रहता। यज्ञ के सामने कई प्रकार की समस्यायें आती है। बाबा मुझे इस ईश्वरीय सेवा पर भेज देते है। अगर मुझे दिव्य दृष्टि प्राप्त हो जाय तो मैं कठिनाई के समय बाबा से मदद तो ले सकूँगा।' उसी समय ही संकल्प आया कि मैं बुद्धि ज्यादा चलाता हूँ और ज्ञान में काफी घुस जाता हूँ, शायद इसलिए बाबा के बुलाने पर भी नहीं जा सकता हूँ, परंतु तुरंत यह विचार आया कि वह भी सेवा तो यज्ञ ही की है। इतने में बाबा के कमरे से बुलावा भी आ

गया। बुलाने वाली बहन ने पूछा - 'आपने स्नान कर लिया हैं?' मैंने कहा - 'जी हाँ'। उन्होंने कहा - 'तब चलो, बाबा ने याद किया है।'

मैं बाबा के पास गया। बाबा ने अपनी चारपाई पर अपने दाहिने पलंग में मुझे लिटा दिया और संदेशी बहन को उस कमरे में जो गद्दी रखी रहती है उस पर लेट जाने को कहा। तब बाबा ने संदेशी को निर्देश दिया - 'बच्ची, (शिव) बाबा के पास जाओ।' बाबा को कहना - 'यह मेरा लाडला बच्चा है, सर्विस में अच्छा मददगार है। यदि इसे दिव्य दृष्टि प्राप्त हो जाये तो और भी अच्छा मदद कर सकता है। इसलिए बाबा को कहना कि यह बाबा खुद रेकमेन्ड करता है कि अगर बाबा इस बच्चे की ध्यान की डोरी आज खेंच लेंगे तो अच्छा ही होगा। अच्छा बच्ची जाओ।' उसको ऐसा कहने के बाद बाबा ने मेरी ओर करवट ली और मुझे कहने लगे - 'अच्छा बच्चे, अब बाबा को याद करो। तुम थोडा-थोडा तो जाते ही हो, क्या पता आज बाबा तुम्हें अपने पास बुला लें। अर्जी हमारी, मर्जी बाबा की।' ऐसा कहकर बाबा मुझे मदद करने लगे और मैं भी कोशिश करने लगा कि 'इस शरीर से किसी तरह निकलूँ ओर बाबा के पास पहुँचूँ।' बाबा की याद मन में लाने का पूर्ण प्रयत्न कर रहा था। वहाँ से तो गुम हो ही गया था, ऐसा अनुभव हुआ कि 'सूक्ष्म लोक में जा पहुँचा हूँ परंतु वहाँ बाबा दिखाई नहीं दिये।' कुछ समय के बाद मैं अव्यक्त से व्यक्त में लौट आया। इतने में संदेशी बहन भी लौट आई।

बाबा ने पहले उससे पूछा - 'बच्ची, यह बच्चा वहाँ पहुँचा था? बाबा ने इस बच्चे के लिए क्या कहा?' संदेशी खिलखिला उठी। मैं भी यह सुनते हुए वहाँ बडा मुस्करा रहा था। संदेशी ने कहा - 'बाबा, यह पहुँचा तो था परंतु बाबा किधर है?' - इसे यह नीचे मालूम पडा। फिर बाबा को मैंने आपकी बात कही तो बाबा ने कहा कि - 'बच्चा आ तो सकता है थोडा संदेशी से सुनता रहे और हल्का हो तो ये (अव्यक्त में) आ तो सकता है।'

तब बाबा ने मेरी ओर मुडकर मुझे कहा - 'अच्छा बच्चे, देखो, कोशिश करना अपना फर्ज था। बाबा ने तुम्हारी अर्जी तो भेज ही दी थी। भाई, अब मर्जी तो उस बाबा की है। दिव्य दृष्टि की चाबी तो उसके पास है। यह चाबी उसने मुझे भी नहीं दी।'

ये सब मीठी बातें सुनकर मेरे मन में बाबा के लिये बहुत प्यार उमड आया। मैंने सोचा कि - 'देखो, बाबा तक हमारे मन के भाव कैसे पहुँच जाते है और बाबा हमारे लिये क्या कुछ नहीं करते।' (उसी दिन ही बाबा ने दादी कुमारिका जी को भी ध्यान में भेजने का प्रयत्न किया था) मैंने यह भी सोचा कि शायद यह मेरे ज्ञान की कमजोरी की ओर इशारा था क्योंकि (व्यक्त में) मैं बाबा के पास ही तो था। उन्हें यहाँ छोडकर वहाँ पाने की मैंने कोशिश की थी, इसलिए वहाँ बाबा से मिले बिना यहाँ लौटना पडा। परंतु बाबा कितना मीठे हैं, बच्चों पर कितनी मेहनत करते हैं।

पिताश्री के जीवन से सीखी कई अनुभव की बातें

- बी.के. रमेश भाई, मुम्बई

एक छोटी सी बात है। सन् १९६५ में देहली में पहली बार प्रदर्शनी हो रही थी। उसी निमित्त पिताश्री जी देहली जा रहे थे मैंने भी उन्हों साथ देहली जाने का प्रोग्राम बना लिया और इस तरह मैं साकार बाबा के साथ आबू से देहली पहुँचा। देहली पहुँचते ही पिताश्री जी क्लास में गए और मुरली चलाने लगे। इतने में ही मुझे वहाँ पर एक भाई मिला और उसने बताया कि वह आज ही बेंगलोर जा रहा है। उन दिनों में मातेश्वरी का निवास बेंगलोर में था। मैंने तुरंत ही बाबा की उस दिन की मुरली के कुछ नोट्स तथा एक पत्र मातेश्वरी के नाम से लिखकर उस भाई को सुप्रत किया।

थोडे समय के पश्चात वह भाई पिताश्री जी से मिलने के लिए आया और उसने कहा कि 'मैं आज बंगलोर जा रहा हूँ, कुछ काम हो तो बताईये।' तब पिताश्री जी ने कहा मातेश्वरी तो वहाँ ही हैं और उनके लिए पत्र लिखना चाहिए था लेकिन अब तो समय नहीं है। ऐसा सुनते ही मैंने कहा 'बाबा मैंने आज की मुरली के नोट्स तथा एक पत्र मातेश्वरी को लिखकर उनके साथ दिया है।' तब बाबा ने मुस्कराते हुए कहा कि देखा बाबा और बच्चा दोनों इकट्ठे ही देहली में आए परंतु बच्चे ने पहले ममा को याद करके पत्र लिख दिया। इस तरह बच्चा पत्र लिखने में बाबा से भी आगे चला गया। इस पर मैंने हँसते-हँसते कहा कि बाबा, मुझे इस भाई के जाने का प्रोग्राम पहले ही मालुम हो गया था। इसलिए मैं पत्र लिख सका आपको भी यदि यही बात पहले मालूम होती तो आप भी पत्र लिखते। बाबा ने कहा - 'नहीं, वह बात तो ओर है लेकिन अभी तो बच्चे ने पत्र लिख दिया था इसलिए बच्चा तीखा चला गया।'

मीठे बाबा के इन महावाक्यों से मुझे एक बात की अनुभूति हुई कि मैंने एक छोटा-सा काम पत्र लिखने का किया परंतु बाबा ने मेरी इस छोटी बात को उठाकर इतनी प्रसंशा की कि जिससे मुझे वह कला अपने जीवन में अधिक बढ़ाने की प्रेरणा मिली। इस तरह

से पिताश्री जी के पास औरों के गुण या विशेषताओं को परखने की विशेष शक्ति थी। सिर्फ परखने की शक्ति नहीं, परंतु परखने के बाद उस शक्ति को प्रोत्साहन देने याग्य शब्द कहने की भी शक्ति थी। इस प्रकार का व्यवहार करके बाबा ने मेरे उस गुण की वृद्धि करने का उत्साह बढ़ाया। दूसरों के गुणों को पहचानना और उन गुणों की उसमें वृद्धि हो इसलिए विशेष शब्द उच्चारण करना यह कोई खुशामत नहीं हैं। परंतु यह एक आवश्यक व्यवहारिक कर्म है जो करना बहुत जरूरी है और उसी प्रसंशा के समय पर किसी की ग्लानि करना जरूरी नहीं है। अन्य की ग्लानी न करते हुए प्रसंशा व उत्साह-वर्धक शब्दों का उच्चारण करना अति आवश्यक है। इसका मतलब यह नहीं है कि हमें अन्य के अहम् को प्रोत्साहन देना है। शिवबाबा और शास्त्रों के ज्ञान में यही अन्तर है कि शास्त्रकार सभी प्रकार के अहम् को दोषारोपण करता है परंतु शिवबाबा कहते हैं कि 'मैं आत्मा हूँ' यह भी एक अहम् है। 'मुझे श्री लक्ष्मी या श्री नारायण बनना है' - यह भी एक अहम् है। परंतु यह अहम् एक लक्ष्य और लक्षण के रूप में है। सतोप्रधान अहम् है या तो कहें उन्नति के पथ पर प्रेरणा प्रधान अहम् है, जबकि रजोप्रधान और तमोप्रधान अहम् भी हो सकते हैं। तमोप्रधान अहम् दु:ख-दायक है परंतु सतोप्रधान अहम् दु:ख दायी नहीं है। इसलिए बाबा ने योग में हम बच्चों को कहा कि 'आत्मा अभिमानी और परमात्म अभिमानी बनो और देह का अभिमान छोडो।'

इस तरह से बाबा ने हम बच्चों के गुणों को परख करके गुणों की वृद्धि के अर्थ अनेक प्रकार के प्रोत्साहन युक्त शब्द उच्चारण किये जिससे हम आत्मायें उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकी। यही शिक्षा हमें पिताश्री जी के जीवन से सीखनी है।

एक और बात मैंने पिताश्री जी से सीखी। शिवबाबा ने योग के द्वारा जो आठ शक्तियाँ प्रदान की हैं उसमें 'समेटने की शक्ति' एक शक्ति है। समेटने की शक्ति दुनिया के हर एक व्यक्ति को अपने व्यवहारिक और आध्यात्मिक जीवन में अपनानी पडती हैं। लौकिक दुनिया में हर एक व्यक्ति को शरीर तो छोडना ही है परंतु उसके पहले अपने कारोबार को समेटना जरूरी है। कानूनी दृष्टि-कोण से समेटने की बात कैसे-कैसे प्रश्न उत्पन्न कर सकती है उसके मैंने कई उदाहरण अपने व्यवसायिक जीवन में देखें हैं। चाहते हुए भी एक व्यक्ति, देह छोडने के पूर्व, अपना कारोबार संपूर्ण रूप से समेट नहीं सकता। चाहे वह व्यक्ति एक छोटे से परिवार का कर्ता-धर्ता हो या कोई छोटे-बडे व्यापार का मालिक हो या कोई छोटे-बडे मंदिर अथवा आश्रम का मुखिया हो। परंतु सभी जगह पर समेटने की शक्ति का यथार्थ उपयोग न होने के कारण व्यक्ति अपने पीछे अनेक प्रकार की समस्याएँ औरों के लिए छोड जाता है। और इसी लिए देखा गया है कि कई बडे-बडे घरों में इसी के कारण कई समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं।

परंतु ब्रह्माबाबा के व्यक्तिगत जीवन में मैंने देखा कि 'बाबा ने अपने व्यक्तिगत जीवन की हर एक बात इतनी सुंदर रीति से समेटी हुई थी कि उनके पश्चात किसी को, कोई भी प्रकार की समस्या उत्पन्न नहीं हुई।' इसी तरह से इतने बडे ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का भविष्य में संचालन कैसे हो, उसके बारे में हर प्रकार का स्थूल एवम् सूक्ष्म मार्गदर्शन बाबा ने दिया था। जिस कारण बाद में उस रास्ते पर चलने वाले अनुयायियों को कोई समस्या नहीं आई, इतना ही नहीं बल्कि कोई कानूनी, आर्थिक व्यवहारिक व आध्यात्मिक प्रश्न उत्पन्न न हुए। यह एक समेटने की शक्ति का सर्व श्रेष्ठ उदाहरण साकार बाबा के जीवन से हमें मिलता है।

हमें भी यह देह, देह के सम्बन्ध, व्यवहार तथा कारोबार छोडना ही है। अत: क्यों नहीं हम ऐसा अपना कारोबार समेट लें कि पीछे हम अन्य किसी के लिए समस्या न बनें तथा और कोई हिसाब न रह जाए जिसको चुक्तु करने के लिए नया जन्म लेना पडे या धर्मराज पुरी में जाकर सजा खानी पडे। जिस तरह से ब्रह्माबाबा ने अपना सारा ही कारोबार समेटा, ऐसे ही हमें भी अपना सभी प्रकार का कारोबार समेटने में पूर्ण रूप से सफलता मिले - यही शिक्षा लेकर सबसे बडी श्रधांजलि हम ब्रह्माबाबा को दे सकेंगे।

उसी तरह बाबा के जीवन में मैनें एक बात देखी कि 'वह कर्मकांड या झूठी भावनाओं की बात को नहीं मानते थे। वे वास्तव-वादी ज्यादा थे। वास्तविक और व्यावहारिक यथार्थता के आधार पर वह अपना जीवन व्यवहार तथा सेवा का व्यवहार करते थे।' जिससे क्या होता था कि सामने वाले व्यक्ति को आत्म-संतोष मिलता था। भक्तिमार्ग के कर्मकांड तथा अंधश्रद्धा की बातों से वह हमेशा दूर रहते थे। उसी बारे में दो बातें या प्रसंग मेरे अनुभव में आए। एक दिन था १९६५ के जून मास का। मातेश्वरी जी ने अपना पार्थिव शरीर छोड दिया था। कई बहन-भाई उसी समय मधुबन में आ पहुँचे। मेरी अपनी इच्छा थी कि हमारी टीचर्स बहिनों की ट्रेनिंग अर्थ भट्ठी के कार्यक्रम का आयोजन हो। दो बार मुरली में उसी के लिए सूचना छप चुकी थी। परंतु कई कारणों से वह नहीं हो पाई। अब उस समय फिर यह ट्रेनिंग की बात निकली। करीब १३ टीचर्स बहनें थी मधुबन में। मैंने यह ट्रेनिंग की बात सबसे कही। सब ने कहा कि अब तो सारा पाण्डव भवन आए हुए भाई-बहनों से भर गया है। तो फिर हम सब पिताश्री के पास गए। तो पिताश्री जी ने फौरन हमारी बात मान ली और लच्छू बहन को कहा कि 'भट्ठी के लिए हवाई महल मकान खाली कर दो।' बाकी सबके लिए रहने का अलग प्रबंध हो गया, किन्तु मैं रह गया। तो जब पिताश्री जी के साथ बात निकली, तो बाबा ने कहा - 'अरे बच्चे, तुम तो मालिक हो, बाबा के कमरे

में सो सकते हो। अरे, बाबा की खटिया पर भी सो सकते हो, क्योंकि बाबा तो बहुत समय नींद नहीं करते।'

मैंने आभार के साथ उस बात को अस्वीकार किया। आखिर में ४ रोज दोपहर में - मैं बाबा की झोंपडी में सोया और रात को मिलने के लिए आने-जाने वालों के लिए जो कमरा है वहाँ पर सोने का प्रबंध किया। अर्थात् ''इस तरह से दोनों 'बाबा का कमरा है' या 'बाबा की झोंपडी है' उसी में कोई कैसे सो सकता है, ऐसी भावना-प्रधान बात को बाबा नहीं मानते थे। क्योंकि वे हमें अपने बच्चों की दृष्टि से देखते थे, न कि कोई भक्त या शिष्य आदि की दृष्टि से।''

उसी तरह बम्बई में जब पिताश्रीजी आए थे तो एक समस्या बहनों के सामने आई। गुरुवार के दिन भोग करीब प्रात: ८ बजे लगता था। कई भाइयों को दफ्तर(ऑफिस) आदि जाना था। उसी कारण तब तक बैठ नहीं पाते थे। तो समस्या थी कि 'उन्हें कैसे भोग पहले दिया जाए?' अर्थात् पहले शिवबाबा को भोग स्वीकार कराये बिना कैसे बच्चों को भोग बाँटा जाए? तो बहनों ने पूर्ण श्रद्धा के साथ निर्णय किया कि शिवबाबा को भोग लगाए बिना भोग कैसे क्लास के भाई-बहनों को दिया जा सकता है। परंतु परिणाम यह हुआ कि ऐसे जल्दी जाने वाले भाई-बहनों को भोग (प्रसाद) नहीं मिलता था। बात फिर बाबा के पास आई। बहनों ने अपने विचार सुनाए। तब बाबा ने कहा - ''बच्चे, तुम्हारी बात बिल्कुल सही है कि पहले बाबा को भोग स्वीकार कराया जाए। परंतु उसी कारण देखो बच्चों को भोग न मिले, यह कैसे कोई बाप सहन कर सकता है? लौकिक में ऐसा नहीं होता कि बाप ने भोजन नहीं किया तब तक बच्चों को भोजन न मिलें? लौकिक बाप भी सोचेगा कि 'पहले बच्चे भोजन करें फिर मैं भोजन करुँगा।' तो ये तो सबका रुहानी बाप है, अपने कारण बच्चों को भोजन (भोग) न मिले, वो यह कैसे सोच सकता है? तुम बच्ची ऐसा करो - बाबा के भोग के लिए सब सामग्री अलग कर दो, बाद में बच्चों को भले भोग बाँटों।'' इस तरह से पिताश्री जी ने एक वास्तव-वादी पिता की दृष्टि से समस्या का मीठा समाधान दिया। बाबा की दृष्टि हमारी ओर बाप बच्चों की थी, और है। आज भी जब हमारे सामने ऐसी कोई समस्या आवे तो अगर हम भक्ति-भाव की दृष्टि से उसका मूल्यांकन न करें परंतु बाबा कि दृष्टि से अर्थात् दूसरों के प्रति बच्चे या भाई-भाई की दृष्टि से सोचें तो ये जो समाधान हम नक्की करेंगे यह 'सोने पर सुहागे' जैसा मीठा और प्रिय होगा।

इस प्रकार विशेष दृष्टि-कोण से हरेक व्यवहार दैवी-परिवार में हो, तो यह परिवार की खुश्बू या मिठाश हमारे हरेक कार्य में आएगी तथा इससे सबको परिवार का स्नेह और एकता का सच्चा दर्शन होगा। यह विशेष दृष्टि-कोण तब आएगा जब हम अंधश्रद्धा या पुराने संस्कारों के मापदण्ड के आधार से नहीं, परंतु पिताश्री जी का जो कार्य व्यवहार का मापदण्ड था उसी के आधार पर हर बात का समाधान करेंगे। रचना का रचना के प्रति जो दृष्टि-कोण होगा, वह हमेशा रचयिता का रचना के प्रति जो दृष्टि-कोण होगा उसी से न्यारा होगा। पिताश्री जी ने हमें मास्टर रचयिता का टाइटिल दिया है तो हम भी मास्टर रचयिता बन विश्व के प्रति उसी दृष्टि से देखें तो यह विश्व हमें कुछ नयी दिखाई पडेगी। अब चाहिए यह नया दृष्टि-कोण, नया पुरुषार्थ और नया मोड। १८ जनवरी को हम यह नया तरीका अपनाने का प्रयोग करें तो ...।

ब्रह्मा बाबा के जीवन सम्पर्क के कुछ अनुभव मोती

- वी.के. रमेश भाई, मुम्बई

परमपिता परमात्मा शिव के साकार माध्यम ब्रह्मा बाबा के साथ करीब १९५६ साल में मिलना हुआ। उनका प्रथम दर्शन मुम्बई के हरिकिशनदास हॉस्पिटल में हुआ था। शान्ति, क्रान्ति तथा ओजस युक्त उनका दैदिप्यमान मुखरविंद था। हॉस्पिटल के पलंग पर सोये हुए ब्रह्माबाबा के उस गौरव पूर्ण शरीर को देखकर मुझे अजंता-इलोरा की गुफाओं में शिला पर लेटे हुए गौतम बुद्ध की प्रतिमा याद आ गई। धर्मस्थापक जितनी उन्हों की तेजस्वी प्रतिमा थी। उन्हें देखने से ही उन्ही के गुण, शक्ति तथा बुद्धिबल की भव्यता समझ में आ गई। प्रथम दिन से ही मिलने वालों पर अपना भव्य प्रभाव डाल सके। ऐसी उनकी शारीरिक प्रतिमा थी। लँबा कद, गौर वर्ण का चमकीला रंग तथा सुलक्षण और सुरेख अंग यह उनके शरीर की विशेषता थी।

उनके व्यहवहार में मिठास, स्नेह तथा प्रेम भरा हुआ था। वे सबके अलौकिक पिता थे। इसी कारण सबके प्रति अपने बच्चों की प्रेम भरी दृष्टि से व्यवहार कर सकते थे। यह बात में सदा मीठे ब्रह्माबाबा से सीखने का पुरुषार्थ करता रहा कि जैसे ब्रह्माबाबा स्वयं सबके अलौकिक पिता हैं और उसी दृष्टि और सम्बन्ध से व्यवहार कर सकते हैं तो मैं सबको आत्मिक दृष्टि से भाई-भाई या बहन समझूँ और उसी दृष्टि से उन्हों के साथ सदा व्यवहार करुँ। सामने वाला तो अज्ञानी है, इसलिए वह ब्रह्माबाबा को अपना अलौकिक पिता न भी समझे परंतु जैसे लौकिक व्यवहार में भी गाया है कि - 'बच्चे कपूत बन सकते हैं परंतु माँ-बाप तो कभी भी अपने बच्चों के साथ दुष्ट व्यवहार नहीं करेंगे।' उसी तरह अज्ञानी या पराए व्यक्ति के साथ भी ब्रह्माबाबा अलौकिक पुत्र के नाते से व्यवहार करते थे। तो

क्यों नहीं हम बच्चे भी सबके साथ अलौकिक संबंध के आधार से या आत्मिक संबंध के आधार पर 'भाई-भाई' की दृष्टि रख व्यवहार करें, शास्त्रों में भी 'वसुद्यैव कुटुँबकम' का गायन है परंतु उसी गायन योग्य व्यवहार आज की कलियुगी सृष्टि में कोई नहीं करता। सतयुग में एक दैवी परिवार होगा। उसी का सबूत मीठे ब्रह्माबाबा ने एक आदर्श बन व्यवहार में करके दिखाया, ऐसे व्यवहार के आधार पर ही वे सदा सबके प्रति रहमदिल रहते थे।

पिताश्रीजी अपने पूर्वकाल में भी रहम दिल होने के कारण जब तर्पण करते थे तब अंत में विश्व की सर्व आत्माओं प्रति तर्पण की अंचली देते थे। अर्थात् विश्व की सभी आत्माओं का कल्याण हो - ऐसा शुभ संकल्प सदा करते थे। इतनी विशाल बेहद की भावना अगर सबकी हो जाए तो इस विश्व में व्याप्त कलह-कलेश की दुषित मनोभावना कब से खत्म हो गई होती।

ब्रह्माबाबा का त्याग अपूर्व है। अथाह संपत्ति के वे मालिक थे। जब उन्होंने अपना जीवन समर्पित किया तब सब-कुछ स्वाहा अर्थात समर्पित कर दिया कुछ भी अपनी आयवेला के लिए या अपने परिवार के लिए अलग नहीं रखा। उसी समय तो इस ईश्वरीय ज्ञान और योग का प्रारंभ था। अनेक प्रकार की अनिश्चितता थी। संजोग विपरीत होंगे, या अनुकूल होंगे उसका कोई पक्का भरोसा न था। फिर भी उस समय अपने लौकिक धन का सम्पूर्ण त्याग तथा लौकिक व्यवहार का अर्थात् देह के संबंधों का त्याग अर्थात् उन्हों के प्रति दृष्टि परिवर्तन कर ब्रह्माबाबा ने एक बहुत बडा कर्तव्य किया। कल तक जो पत्नी, पुत्र, पुत्री, बहू, पोते आदि थे वे सब आज से मेरे देह के संबंधी नहीं परंतु आत्मा के संबंधी हैं। ऐसा भावनायुक्त व्यवहार करना कोई सामान्य कार्य नहीं है। हम सब ने इसी शरीर में ८३ वें जन्म के आधार पर जो देह के संबंधी हैं उन्हों को अपने ८४ वें जन्म के आधार पर परिवर्तित किए हैं। संबंध अनित्य है, परिवर्तनीय है, संसार यही है और जीवन भी यही है। संबंध जीवन बँध का आधार है तो जीवन मुक्ति का भी आधार है। ब्रह्माबाबा ने अनित्य संबंधों का संन्यासियों की तरह त्याग नहीं किया परंतु साथ में रहते हुए उन्हों के प्रति दृष्टि बिंदु था वह परिवर्तन किया। संन्यासियों द्वारा किए गए इस संबंधों के त्याग में संबंध और व्यक्ति दोनों के त्याग की बात आती है। और ब्रह्माबाबा ने त्याग का नया रूप बताया अर्थात् संबंधों का त्याग, परंतु व्यक्तियों का त्याग नहीं क्योंकि यही व्यक्ति अर्थात् आत्माओं के साथ सारे कल्प में हमें अपने लौकिक संबंध बाँधना ही है।

जब १९६१ साल में ब्रह्माबाबा मुम्बई में आए तब प्रति दिन प्रात: वहाँ एक बगीचे (हैंगिंग गार्डन) में थोडा समय पैदल करने के लिए जाते थे, उसी समय पर अपने कल्प-वृक्ष तथा त्रिमूर्ति के चित्रों का छोटा ४ पन्नें का फोल्डर छपा था। 'रोज प्रात: ब्रह्माबाबा हमें झाड, त्रिमूर्ति को देख सबको कैसे समझाया जाए वह बताते थे। अलग-अलग व्यक्ति को नए ढंग से कैसे समझाना जरूरी है, वह बाबा हमें सिखाते थे गीता में तो है कि श्री कृष्ण ने अर्जुन को कुरुक्षेत्र के मैदान में ज्ञान दिया। परंतु हमें तो ऐसा लगता था कि हमें ब्रह्मा बाबा ने इस बगीचा रूपी मैदान में सेवा अर्थ ईश्वरीय ज्ञान दिया।' हम उसी ज्ञान के आधार पर उस व्यक्ति को समझा कर आते थे तो फिर ब्रह्माबाबा पूछते थे कि - 'उस व्यक्ति ने कौन-कौन से प्रश्न किए और हमने क्या-क्या जवाब दिए।' उसमें फिर ब्रह्माबाबा करेक्शन देते थे। उन्हीं दिनों में एक बार दोपहर में अमेरिका (लॉस एंजिलिस) की एक योगिनी बहन आई थी। उसको मिलने का समय दोपहर के १.३० बजे था। हमको ब्रह्माबाबा ने अपने पास बुलाया और अंत तक इन्स्ट्रक्शन देते गए। लिफ्ट उपर आ रही थी, तब तक और लिफ्ट से हम अंदर गए तब तक बाबा, ज्ञान कैसे समझाना - यह बताते गए। मैंने उसी समय पर बाबा को कहा - 'बाबा आप नंगे पाँव क्यों यहाँ तक आए हो?' तब बाबा ने कहा - 'बच्चों को मैं संपूर्ण सज-धज करके सेवा अर्थ भेजूँ, तो बच्चे कमाल करके दिखावें।' अर्थात ब्रह्माबाबा संपूर्ण बने क्योंकि वे हरेक कर्म को सम्पूर्ण रूप से करते थे। हर कर्म में जब पूर्णतया परफेक्शन आएगी तब हमारी अवस्था सम्पूर्ण बनेगी। सम्पूर्णता को हम सम्पूर्ण कर्म द्वारा ही पा सकेंगे। और यही आशा सदा ब्रह्माबाबा को रहती थी कि मेरे बच्चे जल्दी-जल्दी सम्पूर्ण बने। सम्पूर्ण बनने में समय का इन्तजार न करें। तो आने वाली १८ जनवरी पर हम सब बच्चे हमारे अति प्रिय ब्रह्माबाबा की शुभ कामना और भावना जरूर पूर्ण करें कि हम सब अपने कर्मों के आधार पर जल्दी सम्पूर्ण बन जाएँ।

कानून की ईश्वरीय परीभाषा

- वी.के. रमेश भाई, मुम्बई

साकार ब्रह्माबाबा की सारे विश्व को यह देन है कि उनके शरीर रुपी रथ में अव्यक्त मूर्त 'शिव' का अवतरण इस सृष्टि पर हुआ और कई सांसारिक सिद्धांतों के बारे में भी जो भ्रांतियाँ या जो मत-मतांतर प्रचलित थे वह सब भ्रांतियाँ उनके माध्यम द्वारा दूर हुई। जैसे अन्तरिक्ष में चन्द्रमा पृथ्वी के चारो ओर घूमता है परंतु उसकी दिशा और गति ऐसी है कि सदैव उसकी एक ही साईड पृथ्वी से

दिखाई पडती है। उसकी पिछली साईड पृथ्वी से नजर नहीं आती अर्थात् चन्द्रमा के पीछे क्या है इस रहस्य से अब तक सभी अनजाने थे। उसी तरह सृष्टि के रचयिता तथा इसके आदि-मध्य-अंत के बारे में भिन्न-भिन्न मान्यताएँ थी। जब भी कोई 'रचना' यह विचार करे कि कब उसको और कैसे रचा गया तथा 'रचयिता' कौन है, तब इन बातों के बारे में उसका केवल अनुमान ही हो सकता है - लेकिन प्रमाण नहीं हो सकता। इन सब अनुमानों की भ्रांति दूर हो अर्थात् रचयिता स्वयं आकर रचना के बारे में क्यूँ?, कब?, किसलिए?, कैसे?, आदि-आदि प्रश्नों के जवाब दे और सत्य ज्ञान-प्रकाश सबको मिले, इस ऐतिहासिक तथ्य का साक्षात्कार साकार ब्रह्माबाबा के माध्यम द्वारा सारे मानव समाज को हुआ और परमात्मा कौन है उसके नाम, रूप, कर्तव्य, दिव्य अवतरण आदि के सम्बन्धों में जो भी भिन्न-भिन्न धर्मो में तथा विभिन्न धर्माचार्यो में मत-मतांतर हैं वे सब दूर हुए। सृष्टि की रचना कैसे हुई उसके बारे में जो भी मान्यताएँ धर्मो की तथा विज्ञान की थी उन सभी मान्यताओं को सत्य ज्ञान का प्रकाश मिला। सारा मानव समाज साकार बाबा की इस देन का ऋण चुकाने के रूप में उनकी पूजा तथा भक्ति द्वापर से करते आये हैं। साकार बाबा की यह बहुत बडी सिद्धि है।

साकार बाबा ने बुद्धि और व्यवहार दोनों को इतना तो तेज और शुद्ध किया कि समाज के हरेक व्यवहार तथा व्यवसाय को उन्होंने नया रूप दिया। मेरा लौकिक व्यवसाय वकालत का है अर्थात न्यायतंत्र के साथ मेरा सम्बन्ध है। न्यायतंत्र आज के लोक तंत्र का अविभाज्य अंग है। श्रेष्ठ से श्रेष्ठ न्याय व्यवहार क्या हो सकता है इसकी सही पहचान साकार स्वरूप परमात्मा ने साकार ब्रह्माबाबा के द्वारा मानव समाज को कराई।

परमपिता परमात्मा कोई सामान्य आत्मा नहीं है जो थोडी महिमा सुनी, खुशामद सुनी और मोमबत्ती की तरह पिघल गये। परमात्मा की न्याय प्रियता का कारण क्या है? भक्ति मार्ग में तो अनेक कारण गाये गये हैं। परंतु सच्चा जवाब किसी के पास भी नहीं है, सबका अनुमान ही है। मैं भी सोचा करता था कि परमात्मा न्याय प्रिय कैसे हैं?

1. बाबा से एक प्रश्न

उसी बात पर मैंने एक बार साकार बाबा से पूछा - 'मीठे बाबा भक्ति मार्ग में रिद्धि-सिद्धि बहुत चलती है जिसके प्रभाव से लोग झटपट उधर आकर्षित हो जाते हैं। इसलिए धर्म गुरुओं को इतनी मेहनत नहीं करनी पडती। हमारे पास तो सर्व शक्तिमान परमात्मा स्वयं उपस्थित हैं। परमात्मा तो जो चाहे सो कर सकते हैं। फिर वह 'विश्व ड्रामा' (नियति) के बन्धन में क्यों अपने आपको बाँध देते हैं? कयों नहीं परमात्मा कुछ रिद्धि-सिद्धि प्रयोग करके अपना यह स्थापना का कार्य सरल और सहज कर लेते?' बाबा ने बहुत ही हँसते-हँसेते जवाब दिया कि - 'बच्चे को मेहनत करना पसंद नहीं और जादू से एक सेकण्ड में कार्य हो जाये ऐसा चाहता है इसलिए ऐसा प्रश्न पूछता है।' मैंने कहा - 'नहीं बाबा, परमात्मा त्रिकालदर्शी है परंतु कई बार अपने गुप्त राजों को जल्दी-जल्दी नहीं खोलते। मेरा यह अनुभव है कि प्रश्नों के जवाब मैं आप कई गुप्त गुह्य राजों को समझाते हो। ज्ञान मुरली में भी बाप कई बातों को समझाते है परंतु उसी समय प्रश्नोत्तर द्वारा उन बातों को विशेष स्पष्ट नहीं करवाया जा सकता। इसी कारण इस बात को अच्छी तरह समझने के लिए ही मैंने आप से यह प्रश्न पूछा है।'

2. बाबा द्वारा कानून के एक अद्‌भूत रहस्य का स्पष्टीकरण

तब बाबा ने एक गुह्य रहस्य कानून के बारे में बताया जो मैंने कानून का वकील होते हुए भी अब तक नहीं समझा था। बाबा ने कहा कि - 'अन्य गुरु लोग भी चमत्कार दिखाते हैं, वह भी ड्रामा नूँध है, इसीलिए होता है अर्थात् चमत्कार या रिद्धि-सिद्धि का प्रयोग भी ड्रामा में है इसी कारण ही होते हैं। परंतु उससे कुछ भी कल्याण नहीं होता। मैं तो देखो कितना बडा चमत्कार करता हूँ। सबको गति-सद्‌गति दे देता हूँ। इससे बडा चमत्कार कोई करके तो दिखाये। पुरानी सृष्टि से जो नई सृष्टि इस छोटे से संगमयुग में बन जाती है, क्या यह कार्य अन्य कोई जीवात्मा कर सकेगी?'

'बाबा हर बात की मर्यादा को ध्यान में रखकर कार्य करते हैं। मैं चाहूँ तो वैसी ही सृष्टि का नव-निर्माण हो सकता है परंतु उसमें तुम बच्चों का क्या भविष्य बनेगा? बाबा धर्म स्थापक हैं। अर्थात् धर्म से कर्तव्य के आधार पर नई दुनिया की स्थापना कराते हैं। इसलिए जिन्हों का सतयुग, त्रेतायुग में जिस प्रकार का पार्ट है उसी प्रकार से उन बच्चों का पुरुषार्थ चलता है। परमात्मा तो सभी बच्चों का बाप है इसलिए यह बाप किसी भी आत्मा के प्रति पक्षपात नहीं कर सकता है। बाबा कानून की मर्यादाओं में रहकर बिना किसी पक्षपात के नई सृष्टि की स्थापना का कार्य करते हैं। जिसका जो पार्ट है उसी प्रकार से वह आत्मा इन ज्ञास को धारण करेंगी। कईयों का पार्ट नहीं है उसी कारण उनको संदेश मिलता है परंतु वह पुरुषार्थ करने के लिए तैयार नहीं होते हैं। अत: बाबा स्थापना के अपने कर्तव्य के साथ-साथ तुम बच्चों का भविष्य भी पुरुषार्थ के आधार पर बनवाते हैं। उस रिद्धि-सिद्धि के प्रयोग में प्रारब्ध(पुण्य) का खर्च भी होता है और जमा भी कुछ नहीं होता है परंतु यहाँ तो तुम बच्चों का जमा भी होता है। वह गुरु लोग तो खुद भी जन्म-मरण के चक्कर

में आते हैं और यहाँ इतना भारी चमत्कार करने वाला परमात्मा खुद जन्म-मरण के चक्कर में नहीं आता अर्थात् अपना खुद का कोई हिसाब-किताब नहीं बनाता और फिर भी ज्ञान द्वारा औरों की प्रालब्ध बनवाता है इसी कारण बाबा सर्व शक्तिवान है। बाबा खुद ही कानून को बनाने वाले हैं तो वह खुद ही अपना कानून तोड कर किसी को भी आशीर्वाद से फायदा नहीं करा सकते। दुनिया में तो कानून बनाने वाले स्वयं ही उसको तोड देते हैं इसीलिए आज कानून में बल (दम) नहीं रहा है जबकि बाबा (परमात्मा) के कानून के आधार पर सारी सृष्टि चलती है।'

3. स्वयं भी कानून का पूरा पालन करना

साकार बाबा के जीवन में देखा कि उन्होंने कानून का कदम-कदम पर पूरा पालन किया। बाकी सभी धर्म स्थापकों ने अपने बाल-बच्चों को आगे रखा। यहाँ साकार बाबा का सारा परिवार था। पत्नी, बहू, बेटी, बच्चे आदि सभी थे। परंतु फिर भी आगे का पद पुरुषार्थ से पाने वाली श्री मातेश्वरीजी को दिया तथा अब दीदी-दादी को आगे रखा है। बेटी-बहू आदि ने जितना पुरुषार्थ किया उतना ही उत्तराधिकार पाया।

धर्म कानून की मर्यादाओं को भी बाबा जानते थे। कानून जड है परंतु कानून को बनाने वाले अथवा प्रयोग में लाने वाले चैतन्य वे अगर जड बन जायें तो बहुत भारी नुकसान दुनिया को हो सकता है।

4. कानून में जडता नहीं

सृष्टि में इस जडता के कारण बहुत नुकसान हुआ है। राजस्थान में मुसलमानों के साथ युद्ध करते समय राजपूतों के लिए यह समस्या उतपन्न हो जाती थी कि मुसलमान फौज के आगे गायों को रखते थे, तो गायों की हत्या कैसे करें ? कश्मीर में शादी के समय हजारों कश्मीरी ब्राह्मण भोजन कर रहे थे। पहले से ही एक मुसलमान ने गाय का माँस बरात के उस भोजन में डाल दिया। उसी भोजन के कारण हजारों पंडित एक रात में मुसलमान अनजाने से ही हो गये। उन्होंने बनारस के पंडितों से मदद माँगी परंतु उन्होंने धर्म की चेतावनी को समझा नहीं और कहा कि - 'हाँ, आप सब मुसलमान हो गये हो।' उसी कारण वह सभी पंडित 'शेख' बन गये।

धर्म की ऐसी जडता को बाबा कभी नहीं चलाते थे। उन्होंने धर्म की दीवारों को दूर किया और सतयुगी सृष्टि में एक धर्म कैसे हो वह सिखाया। त्रिकालदर्शी बाप का साथ था इसलिये साकार बाबा हर एक को उसकी तकदीर प्रालब्ध के अनुसार राय-सलाह देते थे। मिलिट्री में नौकरी करने वाले कैसे जीवन व्यवहार करें ?, गोली कैसे चलायें ?, खाने की समस्या का हल कैसे करें ? - इन सब बातों में बाबा ने कोई जड मापदण्ड नहीं रखा। दुनिया में तो 'टके सेर भाजी, टके सेर खाजा' होता है। परंतु बाबा तो संस्कार-स्वभाव तथा प्रालब्ध को भी देखते थे। एक बार ऐसा हुआ कि - 'बाबा जो हमेशा को पसंद करते थे और लून-पानी वाली बातें उन्हें पसंद नहीं थी, फिर भी एक व्यक्ति की बातों पर बाबा ने उसके स्वभाव और संस्कारों को देखकर उसकी एक लून-पानी वाली बात को मान लिया।'

मैंने तुरंत ही बाबा से प्रश्न पूछा कि - 'आज आपने क्यों इस तरह की राय दी ?' बाबा ने कहा कि - 'बच्चे, उसकी तकदीर तथा स्वभाव ही ऐसा है। बच्चे जैसा चल सकेंगे बाबा वैसी ही राय देगा। अगर राय दे परंतु वह चल न सकेगा तो वह बच्चा और ज्यादा दण्ड का भागी बनेगा क्योंकि वह 'ना फरमान-वरदार' बन जायेगा। बाप के फरमान पर नहीं चलने का दण्ड बहुत भारी है। इसी कारण उस व्यक्ति का कल्याण ध्यान में रखकर ही बाबा राय देते हैं।' तब मैंने पूछा कि - 'इससे तो स्थापना के कार्य में देरी हो जायेगी। आप स्पष्ट राय देंगे तो अच्छा है ना ? अब तो वह यह समझेगा कि मुझे श्रीमत ही ऐसी मिली है, तो मैं इसी प्रकार से चलूँगा।'

5. यथा योग्य सम्मति

तब बाबा ने फिर से अलौकिक कानून के बारे में सिद्धांत बताया कि - 'बच्चे, स्थापना तो जैसे कल्प पहले हुई थी, उसी रफ्तार से होगी, उसमें कुछ भी फर्क नहीं होने वाला है। इसलिये, इस राय से ड्रामा में विघ्न पडेगा या देरी होगी ऐसा मत समझना, बल्कि समझो कि यह भी ड्रामा की भावी है, इसलिये बाबा ने ऐसी राय दी। बाकी हाँ, वह तो जरूर ऐसा समझेगा कि बाबा ने राय ऐसी दी इसलिये मैं जो करता हूँ वह ठीक ही है। परंतु यह तो जितनी विशाल बुद्धि होती जायेगी, उतना-उतना आगे कदम बच्चे बढ़ाते जायेंगे। जिसकी बुद्धि ही विशाल नहीं बनी है उसके प्रति विशाल बुद्धि की राय देने से भी नुकसान हो जाता है और उससे बेहद के कार्य की अपेक्षा रखना वह ख्याल भी अवस्था बिगाडेगा। बाकी तो बाबा बेहद का है और वह अपना स्पष्ट राय तो ज्ञान मुरली में सबके सामने रखता है, फिर जिसकी जितनी तकदीर है उसी प्रकार सब उसको उठाते हैं। तुम्हारी ममा (मातेश्वरी जी) ने बाप की राय को ज्यादा समझा और उसी प्रकार का पुरुषार्थ किया तो वह आगे चली गई। इसलिये बच्चे, यह ध्यान में रखना कि सबके संस्कार तथा प्रालब्ध एक सामान नहीं

हो सकती, इसलिये सबके लिए एक समान कानून भी नहीं होना चाहिए।' कानून जड है, परिस्थिति या समय के मुताबिक हर चीज के असल में परिवर्तन करना पडेगा। परमात्मा 'शिव' की 'श्रीमत' के साथ-साथ 'ब्रह्मा की मत' भी प्रसिद्ध है। साकार बाबा मत देते समय बहुत ही सोच-समझकर 'श्रीमत' देते थे। 'श्रीमत' के पीछे बहुत ही गुह्य रहस्य होता था। एक बार मैं तथा एक अन्य भ्राता साकार बाबा के सामने बैठे थे। उन्होंने बाबा से पूछा कि - 'बाबा मैं नौकरी करता हूँ और वहाँ कभी बडे आफीसरों की विदाई समारोह होते हैं तब बाकी कुछ नहीं थोडी सी चाय पी लूँ ऐसा सब समझाते हैं। तो बाबा ऐसे संजोगों में मैं तो चाय पीता नहीं - तो वह लोग नाराज होते हैं । तो ऐसे समय मैं क्या करुँ ?' बाबा ने कहा कि - 'तुम चाय पी सकते हो। बाबा की तुमको ऐसे समय चाय पीने की छुट्टी है।' तब मैंने फौरन बाबा से प्रश्न पूछा - 'बाबा, मुझे भी मेरे कई कोका-कोला पीने को कहते हैं तब क्या मैं भी यह पी सकता हूँ ?' बाबा ने तुरंत कहा कि - 'यह बच्चा बाबा की परीक्षा लेता है तथा यह भी कहा कि तुम नहीं पी सकते हो।' तब मैंने पूछा कि - 'हम दोनों ही चार्टेड एकाउण्टेन्ट है तो फिर हम दोनों के प्रति जो आपकी राय है उसमें आपने फर्क क्यों किया ?' बाबा ने कहा कि - 'यह बच्चा नौकरी करता है वहाँ इसके बडे आफिसरों को मालूम पडा कि इसने ब्रह्मा कुमारियों के ज्ञान के कारण चाय नहीं पी तो उसका बडा आफिसर निरादर महसूस करेगा और याद रखेगा। और फिर समझो कि देहरादून में म्यूजियम की ओपनिंग है और बाबा इस बच्चे को तार भेजता है कि देहरादून आ जाओ तब समझो कि यह छुट्टी के लिए एप्लीकेशन देता है और वह आफीसर ना कह देता है अर्थात् इसके चाय न पीने के कारण यज्ञ की सर्विस में विघ्न पडेगा इसलिये उसको बाबा ने छुट्टी दी है। तुम तो अपना धंधा करते हो। तुम्हें कोई मजबूरी नहीं है। तुम्हारे लिये तो वह लोग कहेंगे कि हमारे वकील साहब इतने ईमानदार है कि हमारी चाय तो क्या पानी भी नहीं पीते। इससे उनकी निगाहों में तुम्हारी शान बढ़ जायेगी। इसलिये भला तुम दोनों चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट हो परंतु यह नौकरी करता है, तुम अपना धंधा करते हो। इसलिये दोनों की परिस्थिति अलग-अलग है और उसी अनुसार 'श्रीमत' भी अलग है।

तब फिर मैंने प्रश्न पूछा कि - 'इसका मतलब तो यह हुआ कि जो नौकरी करने वाले हैं यह अपने सेठ या बडे आफिसर को राजी करने के लिये आज से चाय पी सकते हैं, ऐसी 'श्रीमत' सबके लिये हैं, ऐसा समझें ?' बाबा बोले, - 'नहीं यह तो पाण्डव गवर्नमेन्ट ने इसको खास छूट्टी दी है। सब ऐसी छुट्टी ले या दे नहीं सकते। बाबा हर एक को व्यक्तिगत 'श्रीमत' देते हैं। सब कानून को अपने हाथ में ले नहीं सकते। बाबा अब तुम बच्चों के सन्मुख उपस्थित है। भक्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग में यही तो फर्क है कि तुम बच्चों को परमात्मा बाप डायरेक्ट मिला है तो कदम-कदम में पदम हैं अथात् तभी तुम बच्चे पदमा-पदम सौ-भाग्यशाली बनते हो।'

इस तरह से साकार बाबा ने नीति-नियम-कानून आदि की व्यवहारिक व्यवस्था करके ईश्वरीय कानून क्या है ? वह समझाया - जिस कानून के बल से सतयुग तथा त्रेता युग की दुनिया चलेगी। इसी दिन से - 'मैं यह मानता हूँ कि ज्ञान मार्ग में चेतनता है, भक्तिमार्ग में जडता है। जडता विष के समान है और चेतनता जीवन्त जीवन है। इस तरह साकार बाबा का जीवन सदैव जीवन्त जीवन था।'

तुम्हारी याद आती है

- वी.के. व्रीजमोहन भाई, दिल्ली

मनुष्यों को आश्चर्य होता है कि - 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी संस्था में कोई चन्दा या फीस भी नहीं ली जाती फिर भी इसका खर्च कुशलता से कैसे चलता रहता है ?' वे बेचारे क्या जानें प्रजापिता ब्रह्मा को और उनके इतने सारे मुखवंशावली ब्राह्मण बच्चों के इस अलौकिक परिवार को पिताश्रीजी सदैव कहते थे कि - 'बच्चों को भी ईश्वरीय सेवा में अपना तन, मन, धन लगाकर जीवन सफल बनाने की रोशनी तो मिली ही हुई है परंतु बच्चे अपना धन स्वयं अपने ही हाथों से इस कार्य में लगाये अर्थात स्वयं ही कोई ईश्वरीय सेवाकेन्द्र इत्यादि खोल करके स्वयं ही काम में लगावें। न तो निराकार शिव परमात्मा को धन की आवश्यकता है और न ब्रह्मा को ही धन चाहिए। ब्रह्मा ने तो अपना भी सब-कुछ ईश्वरीय सेवा में ही लगा दिया।' इस पर मुझे एक घटना याद आती है। मेरे कुछ हजार रुपये बैंक में सूद (ब्याज) पर जमा थे। अवधि पूरी हुई तो मैंने उस धन राशि का ड्राफ्ट बनवा कर मधुबन भेज दिया। आप हैरान होंगे कि 'पिताश्रीजी ने वह ड्राफ्ट वापिस कर दिया और साथ में यह भी लिखा कि आगे को कभी भी बिना पूछे धन नहीं भेजना है।'

पिताश्रीजी की सूझ-बूझ और परख का क्या कहना ? कमाल थी। बिना देखे और थोडा संकेत मिलने से ही वह हर बात को गहराई तक जान लेते थे। कुछ ही समय पहले की बात है कि मुझे अपनी लौकिक नौकरी नाँगल के किसी बडे शहर में बदली करवाने का विचार आया। उन्हीं दिनों मेरा मधुबन जाना हुआ और मैंने पिताश्रीजी से इस विषय में राय माँगी। दीदी मनमोहिनी जी भी वहाँ पर बैठी हुई थी। पिताश्री ने कहा - 'देखो, बच्चे, क्या बाबा मधुबन से बाहर में जाते हैं ? तुम्हारे लिए नंगल ठीक है, खुली जगह है, दूर-दूर मकान है, वातावरण साफ है, शान्ति है... ।' पिताश्रीजी ने नंगल देखा भी न था परंतु उनका इतना ठीक वर्णन कर रहे थे कि मैं

चकित रह गया। दीदी मनमोहिनी जी ने बाबा से पूछ ही लिया - 'बाबा, आप तो ऐसे बता रहे हैं जैसे आप वहाँ कभी हो आये हो। क्या आपने नंगल देखा है?' बाबा मुस्करा दिए थे।

कुछ वर्ष पहले मेरे लौकिक पिता का देहान्त हुआ तो उनके दफ्तर से मुझे कुछ रुपिये मिले थे। मैंने उस धन को एक बडी कम्पनी में कुछ मुदत के लिए ब्याज पर जमा करवा दिया था। जब मैं मधुबन गया तो इस बात का जिक्र पिताश्रीजी से भी हुआ। कुछ समय के बाद ही उस कम्पनी की हालत डाँवा-डोल होने लगी जिसकी खबरें समाचार पत्रों में छपती रहीं। कई महीने के बाद मेरा मधुबन जाना हुआ तो वहाँ पिताश्रीजी ने स्वत: ही कहा - 'जिस कम्पनी में तुमने रुपये जमा कराए थे, उसके बारे में अखबार में पढा था, मुझे संकल्प चला कि बच्चों के रुपयों का क्या हुआ?' मैंने कहा - 'बाबा, मैंने तो अपना रुपया अवधि पूरी होते ही निकाल दिया था।' इस एक ही दृष्टांत से आप सोच सकते हैं कि पिताश्रीजी को बच्चों के स्थूल-सूक्ष्म हित का कितना ख्याल रहता था। बच्चों के लिए हम लौकिक बाप से भी कहीं अधिक दर्द समाया हुआ था उनके हृदय में।

पिताश्रीजी रुहानी बच्चों के साथ लौकिक पिता से भी कहीं अधिक प्यार करते थे। जब-जब भी हमारा मधुबन जाना होता था तो हमें पिता श्री के साथ बैठकर भोजन प्राप्त करने का एक सुनहरी मौका भी मिला करता था। ऐसे ही एक शुभ अवसर पर आमों का मोसम था। हमने अभी भोजन शुरु किया था कि भोजन परोसने वाली बहन कुछ आम काट कर ले आयी। मेरी लौकिक माता जी ने कहीं पिताश्रीजी को बता दिया कि बृजमोहन आम बहुत शौक से खाता है। फिर क्या था, पिताश्रीजी ने जितनी किस्मों के आम उस समय यज्ञ में आए हुए थे ढेर सारे मंगवा लिए और मुझे खिलाने लगे। मैं आम खाता था और पिताश्रीजी देख-देख कर खुश होते जाते थे उन्होंने कह दिया कि - मुझे अब और रोटी न दी जाय और आम ही खिलाते गए। ज्यूँही मैं हाथ रोकता, पिताश्रीजी और खाने को कहते और आम कटवा देते। आखिर जब मेरा पेट बिल्कुल भर गया तब कहीं जाकर पिताश्रीजी ने बस की। ऐसे स्नेही बाप को हम कैसे भूल सकेंगे। कोई ऐसा प्यार करके दिखाये?

पिताश्रीजी कितने सहनशील थे। कोई दस वर्ष पहले से भी अधिक समय की बात है कि बम्बई में पिताश्रीजी का बडा ऑप्रेशन हुआ था। हम भी बम्बई गये हुए थे। आप्रेशन के बाद कई दिन तक पिताश्रीजी को बहुत कष्ट रहा होगा। परंतु हम देखते थे कि जब भी डॉक्टर पूछने आता था तो बाबा मुस्कराते हुए कहते थे - 'डॉक्टर, मैं बिल्कुल ओ.के. हूँ।' वह बेचारा हैरान रह जाता था।

गहरे पानी पैठ

- बी.के. बृजमोहन भाई, दिल्ली

बच्चों के मधुबन से लौटते समय पिताश्रीजी उन्हें कोई उपयोगी वस्तु सौगात के रूप में दिया करते थे। ऐसे ही एक अवसर पर उन्होंने मुझे अपना मन-पसन्द, पहनने का कोई वस्त्र सौगात के लिए बताने को कहा। उन्हीं दिनों मेरे लौकिक पिता का (वह भी इस ज्ञान मार्ग में चलते थे) देहांत हुआ था और मैंने उनके सभी वस्त्र अपने पहनने के लिए यह सोचकर रख लिए थे कि इससे मुझे जो आर्थिक बचत होगी, उसे में ईश्वरीय सेवा के कार्य में लगा लूँगा। मैंने पिताश्रीजी को यह सब बताते हुए कहा कि इस समय मेरे पास वस्त्र तो काफी हैं। इस पर उन्होंने समझाया था कि - 'लौकिक पिता के वस्त्र पहनोगे तो वही याद आयेगा जबकि बापदादा से सौगात मिले हुए वस्त्र पहनोगे तो परमात्मा शिव के साथ स्नेह बढ़ेगा और बुद्धियोग जुटाने में मदद मिलेगी।'

पिताश्रीजी बच्चों के कल्याण का कितना ध्यान रखते थे। उन्हें यहाँ तक खयाल रहता था कि - 'अनजाने में भी अथवा किसी मजबूरी के कारण भी शिवबाबा, जो धर्मराज भी है, की किसी आज्ञा का उल्लंघन न हो।' यह जानते हुए कि मैं एक गवर्नमेन्ट कम्पनी में सर्विस करता हूँ और मेरी नौकरी भी काफी जिम्मेदारी की है, वह मेरा क्ल्याण चाहते हुए मुझे प्रदर्शनियों तथा अन्य कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए लिखते भी अवश्य थे, परंतु दफ्तर से समय पर छुट्टी न मिल सकने की मजबूरी के कारण मेरे से ईश्वरीय आज्ञा का पालन न हो सके और कहीं मेरा अकल्याण न हो जाय, इसलिये उनके हरेक पत्र में यह शब्द भी रहते थे कि 'यदि सहज छूट्टी मिल सके तो जाकर ईश्वरीय सेवा में मददगार बनो। अपने बच्चों के कल्याण का कितना ध्यान रहता था पिताश्रीजी को।

कोई ३-४ वर्ष पहले की बात होगी कि हम रिफ्रेश होने के लिए जिस दिन मधुबन पहुँचे, उसी दिन सायंकाल पटना में आध्यात्मिक प्रदर्शनी कार्यक्रम निश्चित होने का समाचार वहाँ प्राप्त हुआ। पिताश्रीजी ने तुरंत कहा - 'बच्चे, तुम्हें तो पटना पहुँचना है, चाहे विमान द्वारा चले जाओ।' मैंने कहा - 'बाबा, हम अभी कुछ घण्टे पहले ही मधुबन पहुँचे हैं अभी तो हम जी भर के आप से मिले भी नहीं हैं और आप कह रहे हैं कि तुम पटना प्रदर्शनी पर चले जाओ?' बाबा बोले - 'सर्विस करने वाले बच्चों को तो मौका मिलते

ही फोरन भागना चाहिये, जैसे एक व्यापारी अपने धन को ऐसा ही न रखकर उसको उपयोग में लाकर अधिक से अधिक कमाई करके खुश होता है।'

पिछले वर्ष भारते के उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को जब कारोलबाग, देहली के आध्यात्मिक संग्रहालय का उद्घाटन करते समय फूलों का एक गुलदस्ता दिया गया था तो उन्होंने कहा था कि - 'आप लोग (ब्रह्माकुमार, ब्रह्माकुमारीयाँ) कयों इस प्रकार की दुनियावी रस्मों में पडते हो ?' पिताश्रीजी को जब इस बात का समाचार मिला तो वह बोले - 'देखो, मैं तो आप बच्चों को सदैव कहता रहता हूँ कि आप ब्राह्मणों के सभी रीति-रिवाज इस पतित कलियुगी दुनिया के मनुष्यों से अलग होने चाहिए। जो दुनियावी मनुष्य करते हैं, वह आप ब्राह्मणों को कॉपी (नकल) नहीं करना है। मोरारजी आपको अच्छी शिक्षा देकर गए हैं। मोरारजी ने यह तो पहचाना कि आप ईश्वरीय ज्ञान युक्त बच्चे हो, तभी तो उन्होंने आप से सांसारिक रिवाजों से अलग रहने की बात कही।'

1. कितने गुणग्राही थे पिताश्रीजी

पिताश्रीजी सदा बच्चों के गुणों को उभारते थे जिससे हमें बहुत ही उत्साह मिलता था। अभी कुछ ही समय पहले उन्होंने मुझे किसी कार्य से मधुबन आने के लिए लिखा था। (यही हमारी पिताश्रीजी से अन्तिम मुलाकात थी) दफ्तर से छुट्टी मिल गयी और मैं शीघ्र ही मधुबन पहुँच गया। प्रसन्न होकर पिताश्रीजी ने मुझे 'उडनखटोला' का नाम दिया। तब से लेकर जब कभी कहीं से ईश्वरीय सेवा का बुलावा आता है तो मुझे झट पिताश्रीजी के मुखार्विन्द से मिला हुआ 'उडनखटोला' नाम याद आता है और मैं वैसी ही तेजी से पहुँचने का पुरुषार्थ करता हूँ। अभी अव्यक्त होने के बाद एक दिन जब पिताश्रीजी संदेशपुत्री के तन द्वारा मिले तो पूछा - 'याद है आपका क्या नाम रखा था ?' मैंने कहा - 'हाँ, बाबा।' तब बाबा बोले - 'अब उडनखटोले की तेज रफ्तार से अव्यक्त बनने का पुरुषार्थ करना है।'

मेरा अनुभव है कि बाबा को पूरा पहचानने वाले बच्चों को पिताश्रीजी अधिक शिक्षा से और पूरा न पहचानने वाले बच्चों को अधिक प्यार से चलाते थे। उनका शिक्षा देने का ढ़ंग भी बस उनका ही था। मैंने नोट किया कि - 'हर बार जितने भी दिनों के लिए हम मधुबन जाते थे तो पिताश्रीजी पहले हमें ज्ञान-विज्ञान से भरपूर और स्थूल-सूक्ष्म रिफ्रेश करते रहते थे। जिससे आत्मा की बैटरी फूल चार्ज हो जाती थी। जो कुछ भी निजी शिक्षा या सावधानी की बात होती थी वह पिताश्रीजी प्राय: मधुबन से वापसी के दिन यानी लौटते समय ही, बहुत मीठे रूप से, साथ-साथ बच्चे के गुणों का भी वर्णन करते हुए, ध्यान में दे देते थे।'

इसी प्रकार, तुम्हीं से खाऊँ, तुम्हीं से खेलूँ की उक्ति की क्रियात्मक रीति पूर्ति करते हुए पिताश्रीजी मधुबन में दोपहर के भोजन के बाद हमें अपने साथ खेलने के लिए लिया करते थे। खेल के बीच-बीच में वह पूछते थे - 'क्यों बच्चे, नशा चढता है, किसके साथ खेल रहे हो ?' और हमारे अतिन्द्रिय सुख का तो भला क्या कहना। एक दिन पिताश्री की तबियत ठीक न थी। मुझे इस बात का पता न था। पता लगता भी कैसे ? वह प्राय: पता लगने ही नहीं देते थे। मैं नित्य की तरह अपना सुख लूटने के लिए दोपहर के पश्चात बाबा के कमरे में चला गया। वह लेटे हुए थे। मैंने कहा - 'बाबा, खेल का टाईम हो गया है।' बाबा बोले - 'आओ, शुरु करें।' दूसरे साथी भी आ गये और खेल शुरु हो गया। परंतु हम हैरान थे कि बाबा तो प्राय:जीता ही करते थे परंतु आज वह जीत नहीं रहे हैं। आखिर काफी समय बाद उनके मुस्कराते मुख से अनायास ही निकल गया। - 'क्यों, आज बाबा की तबियत ठीक नहीं है तो तुम बाबा को हराते जा रहे हो।' तब मैं समझा कि - 'हमारी खुशी के लिए चुपचाप ही बाबा कितना सहन कर रहे थे। तबियत अच्छी न होने पर भी वह हमारे कारण खेल रहे थे।'

मैं और मेरे बाबा

- बी.के. मोहिनी बहन, मधुबन

नन्हा-सा तन, भोला-सा मन लेकर मैंने जब होश संभाला और इस संसार को देखा तो यह मुझे बडा सुन्दर, सुहावना और सुखद सा प्रतीत हुआ। परंतु जैसे-जैसे मैं इस संसार के लोगों के सम्पर्क में आती गई तो मुझे महसूस हुआ कि मेरी यह धारणा कितनी गलत थी। स्वार्थ, प्रपंच, छल, कपट, वासना, कलह-कलेश, दु:ख और अशान्ति से भरे संसार को देखकर मेरे अन्दर विद्रोही और क्रान्तिकारी संस्कारों ने जन्म लिया। मैं सोचती थी कि 'काश! मेरे पास ऐसी कोई शक्ति होती जो मैं इस गन्दी दुनिया के लोगों को सबक सीखा सकती।' लेकिन मैं विवश थी। कभी-कभी तो मैं परमात्मा की अदृश्य सत्ता को इस प्रकार सम्बोधित कर बैठती थी कि 'या तो मैं इस संसार के योग्य नहीं हूँ या फिर संसार ही मेरे योग्य नहीं है।' इसी उधेड-बून में मेरी जीवन नैया संसार सागर में थपेडे खा रही थी। मुझे हर व्यक्ति के दो रूप दिखाई देते थे। मनुष्यों के अन्दर कुछ होता था और बाहर कुछ और। उन्हीं दिनों मुझे अपने एक लौकिक सम्बन्धी के द्वारा पहले-पहले ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का परिचय मिला। परंतु मेरे भीतर हर एक के प्रति घृणा और दोष

दृष्टि का बीज जो अंकुरित हो गया था, उसके फल स्वरूप मैं जब ब्रह्माकुमारी बहनों से मिली तो शुरु में मैंने उनकी बातों को संशयात्मक बुद्धि से ही सुना। लेकिन, शनैः शनैः उन बहनों के जीवन को देखकर मेरी धारणा बदलती गई। तब मुझे ईश्वरीय ज्ञान कुछ-कुछ अच्छा लगने लगा था। जब मुझे बताया गया कि स्वयं परमपिता परमात्मा शिव ही प्रजापिता ब्रह्मा के साकार माध्यम से वर्तमान समय उस सुखद सृष्टि की पुनःस्थापना कर रहे हैं जिनकी मैं कल्पना किया करती थी तब से मेरे हृदय में आशा की एक किरण चमकी और मुझ में उस दिव्य विभूति से सन्मुख जाकर मिलने की प्रबल आकांक्षा उत्पन्न हुई। समय पंख लगाकर उडता जा रहा था और मेरी बेसब्री बढती जा रही थी। किन्तु लौकिक सम्बन्धियों और दुनिया की ऊँची-ऊँची दीवारें मेरे सामने थी। आखिर उनको लाँघते-फाँदते मैं एक नदी के समान उस सागर से मिलने को बढ़ चली। वह दिन भी आया जब मेरा स्वप्न साकार हुआ। आबू पर्वत की गोद में बसा हुआ शान्त, मीठा, तपोवन, 'मधुबन स्वर्गाश्रम' मेरे सामने था। मैंने अन्दर कदम रखा तो मुझे ऐसा लगा कि 'मैं यहाँ की हर चीज और हर व्यक्ति से पहले से ही परिचित हूँ।' श्वेत वस्त्रधारी बहनों एवं भाइयों के तपस्वी चेहरों ने मधुर मुस्कान से मेरा स्वागत किया।

परंतु मेरी नजरें तो इस मधुबन रूपी सुन्दर डिबिया के अन्दर रहने वाले उस 'कोहिनूर हीरे' को ढूँढ रही थी जिससे मिलने को मैं व्याकुल थी। वह घडी भी आ पहुँची जब मुझे ब्रह्माबाबा से मिलाने के लिए उनके कक्ष में ले जाया गया। मैंने सामने बाबा को देखा और अपलक देखती ही रह गई। स्फटिक श्वेत वस्त्रधारी, लम्बा-ऊँचा, उन्नत ललाट, असाधारण एवं आकर्षणमय व्यक्तित्व, जिसके चेहरे से ज्योति की आभा फूट रही थी। जिसकी झील समान गहरी आँखों से वात्सल्य, प्रेम, शक्ति, दया सब-कुछ एक साथ ही छलक रहा था, जिसके होठों पर एक मधुर मुस्कान थी - वे मेरे सामने थे। उस क्षण मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे उन्होंने मेरी समस्त शक्तियों को अपने वश में कर लिया हो और मेरी मन-बुद्धि बिल्कुल शान्त होकर रह गई हो। मैं आनन्द, स्नेह, पवित्रता, शक्ति, शान्ति के सागर में लहराने लगी। तभी बाबा ने बडे प्यार से मेरे सिर पर हाथ रखा और बोले - 'देव कन्या' तुम आ गई। ईश्वरीय दुनिया का फूल आसुरी दुनिया में रह नहीं सकता। मेरे रोम-रोम में एक विचित्र से आनन्द की लहरें दौड गई। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे कोई पक्षी दुनिया के शिकारीयों से बचकर अपने बसेरे में पहुँच गया हो, जहाँ उसे किसी किस्म का डर न हो। बाबा ने मुझे कहा - 'बच्ची, तुम देव कन्या हो, शिव शक्ति हो। तुम्हें तो बिल्कुल निर्भय बनकर भूली भटकी मनुष्यात्माओं को बाप की पहचान देने का कार्य करना है।' इस प्रथम मिलन में ही बाबा ने मुझे वरदान दिया कि यह बच्ची निर्बन्धन होकर ईश्वरीय सेवा में लग जायेगी।

मैं दो मास तक मधुबन में रही। इस अवधि में मुझे न सिर्फ बाबा की ज्ञान मुरली को नित्य प्रति सन्मुख सुनने का अवसर प्राप्त हुआ बल्कि सारा समय बाबा के अंग-संग रहकर स्नेह, स्थूल-सूक्ष्म पालना, शिक्षाएँ पाने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। मधुबन की नियमित दिनचर्या, सादा रहन-सहन, सात्विक खान-पान, ज्ञान-योग के पवित्र और तपस्वी वातावरण ने मुझ पर गहरा प्रभाव डाला और मेरे विचारों तथा संस्कारों में बहुत परिवर्तन आया। मुझे पुरानी दुनिया और मित्र-सम्बन्धी एकदम भूल गए और मैंने मन में यह दृढ़ संकल्प ले लिया कि 'मैं अपने जीवन को पावन बनने और बनाने के ईश्वरीय कार्य में लगा दूँगी।' जिन मनुष्यों के लिए मेरे मन में घृणा भाव था उन्हीं के कल्याण करने की प्रेरणा मुझे पिताश्री जी से मिली। बाबा बोले - 'बच्ची, अपकारियों पर भी उपकार करना है।' बाबा के साथ मधुबन में रहकर मैंने बहुत कुछ सीखा। वह अतीत की स्मृतियाँ आज भी मेरे मानस पटल पर उसी तरह अंकित हैं।

1. बाबा ने मुझे जीना सिखाया

मेरा लौकिक जीवन अलबेला-सा था। बाबा ने मुझे दुनिया में कैसे चलना चाहिए, इस बारे में बहुत-सी उपयोगी शिक्षाएँ दी। मैं भोली-भाली थी। बाबा ने मुझे इस तमोप्रधान दुनिया के मनुष्यों की मनोवृत्तियों का पूरा बोध कराया ताकि मैं किसी से धोखा न खाऊँ। तथा मैं उनका कल्याण कर सकूँ। बाबा ने पुनः मुझे शिक्षा दी कि 'ईश्वरीय नियमों को न कभी तोडना, न छोडना। धरत पडिये पर धर्म न छोडिये। किसी का अवगुण अथवा दोष मत देखना। यदि किसी का कोई संस्कार ठीक न लगता हो तो बाबा को बताओ। बाबा स्वयं उसे सावधानी देंगे। तुम अपनी अवस्था को ऊपर-नीचे मत करना।' बाबा ने मुझे दैवी मर्यादा में रहने तथा आसुरी मर्यादा को छोडने की शिक्षा दी। तुम कभी किसी से कोई चीज मत माँगना। माँगने से मरना भला है। तुम 'ईश्वरीय सन्तान' हो। 'ईश्वर' तो दाता है। तुम्हें जो कुछ चाहिए 'बाबा' से लो। कभी किसी काम के लिए 'ना' मत करो। ऐसा कहना नास्तिक-पन है। 'मैं नहीं कर सकती, मेरे से नहीं होता' कहकर शक्ति-हीन मत बनो। तुम 'सर्व शक्तिमान' बाबा के बच्चे हो। तुम अपनी 'हिम्मत' और बाप की 'मदद' से हर कार्य कर लोगी। 'हिम्मते मर्दा, मददे खुदा' यह सदा याद रखना। तुम सत्य बाबा के साथ सदा सच्ची होकर चलना। 'सांच' को आंच नहीं। सच तो बीठो नच। सच्चे दिल पर साहब राजी रहेगा। यदि 'नियत' साफ होगी तो 'मुराद' अवश्य हासिल होगी इसलिए अन्दर बाहर एक होना चाहिए। जो तुम्हारी मनसा में हो वही वाचा और कर्मणा में हो। इससे कोई भी माया की बीमारी नहीं लगेगी।

अवस्था सदा ऊँची और हर्षितमुख रहेगी। बाबा का राइट हैंड धर्मराज भी है। यदि भूल करके छिपायेंगे तो भूलें बढ़ती जायगी और धर्मराजपुरी में सौ-गुणा दण्ड भोगना पडेगा। धर्मराज बाबा के बच्चे बनकर अधर्म का कोई भी काम मत करना वरना सजा भी मिलेगी और मुफ्त में पद भ्रष्ट हो जायेगा।

2. यज्ञ की सेवा

बाबा ने मुझे संगठन में रहकर चलना सिखाया। मैंने देखा कि 'बाबा सभी प्रकार की यज्ञ सेवा में हाथ डालते थे।' पहले खाना, पहनना और सोना यही मेरे जीवन का स्वधर्म था। जब मैं बाबा सहित सबको कार्य करते देखती थी तो मुझे अपने ऊपर ही बडी ग्लानि होती थी। बाबा ने मेरी आंतरिक स्थिति जान ली और बडे प्यार से मुझे अपने पास बैठाकर सब्जी काटना, अनाज साफ करना आदि सिखाया। एक दिन मैंने बाबा से पूछा कि - 'इतने बच्चों के होते हुए भी आप स्थूल काम क्यों करते हैं?' तो बाबा ने बडे प्यार से कहा - 'बच्ची, यह शिवबाबा का यज्ञ है, यज्ञ सेवा सारे कल्प में एक ही बार मिलती है। तो इस यज्ञ की सेवा कितने न प्यार से करनी चाहिए। मैं भी शिवबाबा का बच्चा हूँ ना। यज्ञ सेवा करना अपना सौ-भाग्य है। इसमें तो दधिचि ऋषि की तरह हड्डी-हड्डी स्वाहा करनी है।' इन शब्दों को सुनकर मैंने प्रण कर लिया कि 'इस जीवन को यज्ञ सेवा में ही समर्पित करना है।'

3. निद्राजीत बनाया

उल्टी दुनिया के कायदे भी उल्टे हैं। मुझे रात को देर तक जागने और सुबह देर से उठने की उल्टी आदत थी। परंतु यज्ञ में तो रात्रि को जल्दी सोने और सबेरे जल्दी उठने का नियम था। यज्ञ में आने पर रात्रि को मुझे इसी उधेड-बून में बडी रात तक नींद न आई कि सुबह मुझे कौन उठायेगा। सबेरे जागने का रेकार्ड बज गया परंतु मेरी नींद नहीं खुली। प्रात: क्लास में जाते हुए बाबा ने देखा कि मैं सो रही हूँ। बाबाने मेरे सिर पर शीतल हाथ फेरते हुए बडे प्यार से पुकारा - 'बच्ची, उठो, बाबा आया है।' मुझे करन्ट सा लगा और मैं उठ बैठी। बाबा को सामने खड़ा देखकर मुझे बहुत आत्मग्लानि महसूस हुई। बाबा बोले - 'बच्ची, रात में तुम शिवबाबा को याद करके सोया करो, तो वह स्वयं ही सवेरे उठा दिया करेंगे।' दूसरे दिन मैंने वैसा ही किया और सचमुच मेरी नींद सवेरे अपने आप समय पर खुल गई । उस दिन से सवेरे जल्दी उठने का अभ्यास पड़ गया।

4. दुनिया के मायावी आकर्षणों से छुडाया

एक दिन बाबा ने हँसी-हँसी में मुझे कहा - 'बच्ची, जो कोट-पातलून वाले से दिल लगाते हैं, उन्हें सतयुग में पिताम्बरधारी श्रीकृष्ण का साथ नहीं मिलेगा। तुम बच्चों को तो श्री कृष्ण को वरना है।' बच्चों को इस पुरानी मायावी गन्दी दुनिया के आकर्षणों से बचाने के लिए बाबा हमेशा कहते थे कि 'यह दुनिया कब्रस्तान है। मुर्दो से दिल मत लगाओ। कब्रस्तान में जाने वाले मुर्दे को कितना भी सुन्दर वस्त्र पहनाओ परंतु वहाँ पर मनुष्यों की बुद्धि कपडों आदि की ओर नहीं जाती क्योंकि मन में वैराग्य होता है। तुमको भी अब इस पुरानी छी-छी दुनिया से बेहद का वैराग्य लेना है क्योंकि यह दुनिया कब्रदाखिल है। और अब वापस घर जाने का समय हुआ है।' इस पुरानी दुनिया में अब कहीं पर भी रहते और विचरते हुए मीठे बाबा के यह महावाक्य कानों में गूँजते रहते हैं और इस दुनिया के मायावी आकर्षण नहीं खींचते।

5. जानीजाननहार बाबा

बाबा मनुष्य को देखते ही उसकी जन्म-पत्री को जान लेते थे। मुझे याद है कि एक पार्टी जब मधुबन से बाबा का लाड-प्यार-दुलार और ज्ञान रत्नों से सज-सजा कर वापस जाने के लिए विदाई ले रही थी तो सबके नयन गीले थे और वे सभी एक अद्भूत चुम्बकीय शक्ति से खींचे हुए खडे थे। दिल की याद नयन से नीर बनकर बह रही थी। बाबा बच्चों को सांत्वना दे रहे थे कि - 'बच्चे, तुम तो सर्विस पर जा रहे हो। पण्डा बनकर वापस आना।' इस पार्टी में एक विदेशी मि. डेन भी था। बाबा ने उसे दो बार कहा कि - 'मुझे याद रखना, मैं तुम्हें अब धर्मराजपुरी में मिलूँगा।' मैंने बाबा से पूछ लिया कि 'बाबा आप इस बेचारे को ऐसा क्यों कहते हैं। इसको भी कह दिजिये ना कि तुम्हें जल्दी यहाँ बुलाऊँगा।' परंतु बाबा को तो उसकी जन्मपत्री का पता था। कुछ समय बाद पता चला कि 'मि.डेन का देहान्त हो गया है। तब वे वचन मुझे याद आने लगे।' उस दिन से यह बात मेरी बुद्धि में अच्छी तरह से बैठ गई कि बाबा के महावाक्य पत्थर पर लकीर हैं जो कभी निष्फल नहीं जाते।

पतित-पुरानी मनुष्यात्माओं को पावन नया बनाने की सर्वोत्तम सेवा करने वाले पिता श्री एक कुशल धोबी की तरह ध्यान रखते थे कि कपडे पुराने हैं, अत: युक्ति से इनकी मैल इस प्रकार निकाली जावें कि यह फटें भी न और साफ भी हो जावें।

परमात्मा शिव की श्रीमत के साथ-साथ ब्रह्मा की मत भी मशहूर है। कहावत प्रसिद्ध है कि 'यदि ब्रह्मा भी उतर कर राय दे तो भी...।' पिताश्रीजी इतनी दूरांदेशी से बच्चों की अवस्था और परिस्थितियों को देखकर मत देते थे कि शायद ही कोई राय ऐसी हो

जिसको मानना हम बच्चों के लिए कठिन रहा हो। एक बार मुझे मोटर-कार खरीदने का विचार आया। मैंने बाबा से राय ली। उत्तर मिला कि - 'हाँ बच्ची, खुशी से कार खरीद लो। कोई हर्ज नहीं।' मैंने कार खरीद ली। कुछ समय के बाद मैंने अनुभव किया कि मेरे जैसे स्वभाव वाले के लिए कार यदि खरीद ने से पहले दिन दर्द था, तो खरीद ने के बाद वह सिर का दर्द है। मैंने पुन: पिताश्रीजी को पत्र लिखा और कार बेचने के बारे में उनकी राय ली। बाबा ने जवाब दिया, 'हाँ बच्ची, खुशी से कार बेच दो।' यह तो मैं ही जानती हूँ कि दोनों बार बाबा की राय मेरी अवस्था के अनुसार, मेरे लिए कल्याणकारी और हर्ष वर्धक थी। दूसरा कोई सुने तो चकित रह जाये और कहे कि यह क्या, दोनों बार बाबा ने 'हाँ' में 'हाँ' मिला दी।

हीरे जैसा जीवन, हीरे में चुम्बक जैसा आकर्षण और फूलों जैसी सुगन्ध

- वी.के. रोजी बहन, मद्रास

पिताश्रीजी प्रजापिता ब्रह्मा से मेरी पहली भेंट सन् १९५४ में कोटा हाऊस, माउण्ट आबू में हुई थी परंतु उस पहली भेंट से ही हमने कल्प पहली बिगडी तारें जोड ली।

1. बाबा के व्यक्तित्व में एक निराला आकर्षण

बाबा के व्यक्तित्व में न जाने क्यों इतनी कशिश थी जो कि हमें एक चुम्बक की तरह बार-बार उनके सम्मुख, मधुबन में खींच ले जाती थी। यह जो गायन है कि - 'तुम्ही संग खाऊँ, तुम्ही संग बैठू...।' - यह अनुभव व्यक्तिगत में हर मिलन पर मुझे ही नहीं हरेक को होता था और ब्रह्माबाबा के चरित्रों से यह अनुभव होता रहा कि परमपिता परमात्मा पिता, शिक्षक और सतगुरु के रूप में उन्हों के साकार तन द्वारा सतयुगी, पावन सृष्टि की स्थापना का काम कर रहे हैं।

बाबा सबकी सुविधा का कितना ध्यान रखते थे जब कभी भी हम मधुबन में बापदादा के सम्मुख जाते तो बाबा हमेशा यह ध्यान रखते थे कि 'बच्चों को किसी भी वस्तु की आवश्यकता तो नहीं हैं, खान-पान भी सभी को अपने ढंग का मिलता है कि नहीं?' एक बार जब बेंगलोर पार्टी मधुबन गयी तो क्लास में मुस्कराते हुए बाबा ने उनको कहा - 'बच्चे, आप अपने बाप के घर आये हैं। दिन-रात चावल चाहो तो बनवा सकते हो। चाय की बजाय काफी की आदत हो तो वह भी मिल सकती है।' भाव यह है कि हमने देखा कि प्राय: लौकिक माता-पिता भी इतना प्यार नहीं देते हैं जितना बाबा ध्यान देते हैं। बाबा रात को सबके कमरे में जाकर व्यक्तिगत रूप में निरीक्षण करते कि - 'सब आराम से सोयं हुए हैं।'

2. शिक्षक के रूप में बाबा सदा उच्च लक्ष्य हमारे सामने रखते

इसी तरह शिक्षक के रूप में हम बच्चों को बडे अच्छे ढंग से सर्विस (ज्ञान द्वारा सेवा) की। प्रत्येक मुरली में सर्व भ्रान्तियों के बारे में समाधान करते तथा आगे किस तरह अपने पुरुषार्थ को बढाएँ उसके लिए कई युक्तियाँ सिखलाते तथा सबको हुल्लास में लाते बाबा बार-बार यही कहते कि - 'मैं भी एक पुरुषार्थी हूँ, परंतु मुझे इस श्री लक्ष्मी - श्री नारायण के चित्र को देखकर बडा हर्ष होता है कि बस, कल हम यह बनेंगे। अहो, शिवबाबा कितना ऊँचा पद हमें देते हैं। तुम बच्चें को भी यही लक्ष्य बुद्धि में रखना चाहिए।'

3. बाबा स्नेह से, साक्षी होकर, कल्याण भावना से ज्ञान देते

मधुबन में कई बार ऐसे भी सुअवसर हमें मिले जब बाबा स्वयं नये आगन्तुकों से मिलते तथा उनको बापदादा (परमपिता परमात्मा शिव तथा प्रजापिता ब्रह्मा) का परिचय देते। जब पंजाब के मुख्य मंत्री आये तब बाबा ने हमें फर्मान किया - इनको ८४ जनमें की सीढी पर पूरा समझाओ। उसके बाद जब बाबा आये तो सबके साथ नीचे बैठकर और सबको मधुर दृष्टि से निहारते हुए बोले - ''आप बाप (परमपिता परमात्मा) को जानते हैं? जिसकी इतनी महिमा गाते भी हैं और जिसका शास्त्र 'गीता' है - ऐसा बतलाते हैं, क्या उसे जानते हो? जिनको नानक ने भी 'एक ओंकार' कहा, जो तुम सर्व आत्माओं का परमपिता है, क्या उसे पहचानते हो? फिर बाबा ने कल्पवृक्ष के चित्र को लेकर ज्ञान समझाया और साक्षी होकर ब्रह्मा के चित्र पर भी इशारा करते-करते शिवबाबा का परिचय दिया और कहा कि इस द्वारा वह कर्तव्य कर रहे हैं।'' उसी समय हम तथा और सब एकाग्र होकर सुन रहे, कोई भी टस से मस न हुआ। 'ब्रह्मा के बारे में भी उन्होंने साक्षी होकर जब परिचय दिया तो वह देखने जैसा अवसर था। एक अच्छा टीचर कैसा होता है, यह सीखने का मौका मिलता था।'

4. बाबा सदा कार्य की सम्पूर्णता पर ध्यान देते थे।

बाबा हमेशा हर एक कार्य अत्यन्त सम्पूर्णता और उत्तमता से सिखलाते। मुझे याद है कि एक बार जब नये जिज्ञासुओं के लिए फार्म बुक छपवानी थी तो बाबा ने हमें अंग्रेजी में टाइप करने को कहा। बाबा ने उसमें कई बार संशोधन और परिवर्तन किया और दुबारा

कई बार हमें टाइप करने के लिए कहा। उसी दिन हमने न जाने कितनी बार फार्म टाइप करके बाबा के सम्मुख रखा परंतु जब बाबा को वह पूर्णत: ठीक लगा तब ही उन्होंने उसे छपवाने की स्वीकृति दी। इस प्रकार, हर कार्य में बाबा हमें विचार करने, योजना को उत्तम बनाने तथा उसमें सम्पूर्णता लाने की प्रैक्टिकल शिक्षा देते। उत्तम हीरे जैसा था उनका जीवन, और वह सदा हमें भी हीरा बनाने का प्रयत्न करते और कहा करते कि 'बच्चे, आप ऐसा हीरा बनो कि आप में फ्लो (दाग) न हो।'

5. बाबा ज्ञान मुरलियों पर कितना ध्यान खिचवाते

माया बडी दुस्तर है - यह भली भांति जानते है क्योंकि यह कई बार ईश्वरीय पढ़ाई से तथा पढ़ाने वाले (शिवबाबा) से बेमुख कर देती है। बाबा यह जानते हुए प्रत्येक मुरली में हमें अवस्था या दिनचर्या का चार्ट लिखने के लिए जरूर कहते तथा मुरली मिस करने या न पढने का अर्थ है रजिस्टर में अनुपस्थिति लगाना - ऐसा कह कर बाबा हमें तीव्र पुरुषार्थ सिखलाते। इतना ही नहीं जब कभी हम बाबा के सम्मुख जाते तो बाबा हमेशा पूछते - 'रास्ते में होने के कारण जो मुरली नहीं पढी है वो टैप में सुनी है?' अभी भी जब हम अन्तिम बार १५ जनवरी को साकार पिताश्रीजी से मिलने मधुबन पहुँचे तो दो-तीन बार बाबा ने पूछा, 'बच्ची, मुरली कहाँ तक पढी हैं? यह पिछली तारीखों की मुरलीयाँ बहुत अच्छी हैं, मिस न करना। कितना ध्यान रहता था बाबा को हमारी पढ़ाई और आत्मिक उन्नति का। कदम-कदम पर सावधान करते थे बाबा हम बच्चों को।

6. बच्चों को कितना सम्भालते थे पिताश्रीजी।

बाबा को हम बच्चों की काफी फिक्र रहती। इसलिए वह बार-बार मुरली में सावधान करते कि 'बच्चे सप्ताह में एक बार अवश्य ही पत्र लिखो। और कुछ नहीं तो कम से कम दो शब्द (बाब, मैं ठीक हूँ।) ही लिखा करो, वरना तो बाबा समझेंगे कि इसे माया खा गई।' मार्ग को और भी सहज करने के लिए बाबा हमेशा कहते - 'बच्चे, अपनी जीवन कहानी लिख कर दो ताकि सिर से कुसंस्कारों का बोझ थोडा कम हो जाये और आगे के लिए मन में पिछले विकर्मो के संकल्प न आयें। बच्चे, सच्चे दिल पर साहिब (शिव परमात्मा) राजी होंगे।

7. रहमदिल कितने थे बाबा और दानी स्वभाव के भी।

परमात्मा को श्रेष्ठ गुणों का सागर कहते हैं। हम ब्राह्मणकुल भूषणों का यह परम सौ-भाग्य रहा कि इनका प्रत्यक्ष प्रमाण हम ब्रह्माबाबा के द्वारा देख सके। उदाहरण के तौर पर, साधारण तौर पर हम परमात्मा को रहमदिल, प्यार का सागर, निरहंकारी, सम-दृष्टि रखने वाला और दाता कहते हैं। ऐसे ही गुण हमने साकार प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा देखे। बाबा के फर्मान के अनुसार कोई भी विकारी व्यक्ति बाबा की सभा में नहीं आ सकता था किन्तु यदि कोई आ भी जाता तो बाबा उसे सावधान करते हुए भी उस पर प्यार की दृष्टि रखते।

अन्तिम मिलन में (०७/०१/१९६९) जब हम बाबा के साथ पूरे मधुबन का सैर कर रहे थे तो बीच में रुकते हुए बाबा ने मजदूरों की ओर हमारा ध्यान खिंचवाते हुए कहा - 'देखो, बाबा ने इनको और इनके बच्चों को भी चीनी की चाय पिलाने को कहा है, (उस समय बाबा के नैन प्रेम से भर आये थे।) बाबा यह सहन नहीं कर सकता कि मेरे एक बच्चे तो चीनी की चाय पीयें और दूसरे बच्चे गुड की चाय पीयें।' इसी प्रकार, बाबा प्रैक्टिकल में भाई-भाई की सम दृष्टि रखना सिखलाते। सब श्रेष्ठ गुणों की सुगन्ध कोमलता और रूप लावण्य हमने देखा पिताश्रीजी के जीवन में और देखी एक चेतन कोहिनूर में चुम्बकीय आकर्षण और सभी फूलों की सुगन्धि और कोमलता।

कभी बाबा अपने बचपन की कहानियाँ सुनाते जिससे यह महसूस होता कि श्री कृष्ण, जिसको गाँवरे का छोरा कहते हैं, वह चरित्र भी अभी के हैं।

8. बाबा समय-पालन भी सिखाते और सेवा के लिए सदा तत्पर रहना भी

बाबा के साथ रहते हुए हमें मिलिट्री जीवन का भी अनुभव तथा अभ्यास होता रहता। जिस प्रकार बाबा हर एक कार्य में उत्तम चाहते उसी प्रकार उसे करने में समय पालन भी सिखलाते। वे स्वयं समय पर पत्र लिखने को बैठते और फिर नित्य की तरह भंण्डारे तथा मकान का भी चक्कर भी लगाते और प्रत्येक व्यक्ति से निजी तोर पर भी बैठते। साथ-साथ वे हम बच्चों को भी सदा तैयार हो रहना सिखलाते। एक बार सन् १९६५ में हम कलकत्ते से मधुबन आये। तो दूसरे दिन बाबा ने जोरदार मुरली चलाई कि रक्षाबंधन पर जोर-शोर से जनता को परिचय देना है, राँची में जो भी जा सके वह बच्ची तैयार हो जावें। दिन भर बाबा को राँची के बारे में ख्याल चलता रहा और आखिर हमने स्वयं को इसके लिए पेश किया। बाबा बोले - 'आज ही जाओ।' किसी ने बाबा से कहा कि इसने तो अभी सारे कपडे धोये हैं और अभी तो आयी ही है। पर बाबा कहाँ ठहरने देते थे? उसी शाम को ज्यों के त्यों तैयार होकर हम राँची

के लिए रवाना हुए और दो दिन बाद वहाँ पहुँचे, परंतु इसी से हमारी खुशी का पारा चढा रहा तथा हमें सर्विस में काफी मदद मिली क्योंकि बाबा की शुभ-कामनाएँ हमारे साथ थी। इसी तरह के फर्मान कई बार पालन करने पडे परंतु उसी कारण सदा तैयार रहने का अच्छा ही अनुभव होता रहा।

9. कितनी सम्भाल करते थे पिताश्रीजी यज्ञ की।

इतना बडा यज्ञ चलाते हुए बाबा हमें स्वयं प्रैक्टिकल जीवन द्वारा सिखलाते कि हमें सब आवश्यक कार्य सीख ऑलराउण्ड कैसे होना चाहिए। वे छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देते ताकि यज्ञ की एक पाई का भी नुकसान न हो। एक बार हम बाबा के साथ पाण्डव भवन में चक्कर पर निकले हम भण्डारे में पहुँचे तो बाबा ने देखा कि 'वहाँ चूल्हे तो जल रहे थे पर उन पर जो सब्जी पकाई जानी थी वह काट कर अभी तक तैयार नहीं की गई थी। तब बाबा ने फर्मान किया कि जो चीज यज्ञ में आती है उसका पूरा कदर (सदुपयोग) करना चाहिए। जब तक माल तैयार नहीं तब तक आग जला कर रखने का क्या फायदा?' मैंने बाहर जाकर बाबा से पूछा - 'बाबा, आप ऐसी छोटी-छोटी बातों के लिए चक्कर लगाकर देख-रेख करते हैं - कयों?' तब बाबा बोले - ''बच्ची, है तो बडा यज्ञ परंतु मैं शिव बाबा का ट्रस्टी हूँ, मुझे पाई-पाई का ध्यान रखना है तथा 'जैसा मैं करुँगा, मुझे देखकर और भी करेंगे' - ऐसा मुझे ख्याल रहता है।''

10. त्याग मूर्ति और पूर्णतः अनासक्त पिताश्रीजी

बाबा अपने लिए अति साधारण तथा पुरानी वस्तु रखते। वह सदेव यही ध्यान देते कि - 'जो भी अच्छी चीज आये, वह बच्चों के लिए रखूँ।' एक बार बरसात के मौसम के बाद, सन् १९६६ में जब बाबा पहले अपनी कुटिया में गये तो लच्छू बहन ने स्नेह से वहाँ एक नया गलीचा तथा नई चादर बिछाई। आते ही बाबा का ध्यान उस पर गया परंतु बच्चों को 'टोली' (प्रसाद) खिलाकर विदा किया और चन्द ही मिनटों में सब नये गलीचे और चादर निकाल कर फिर अपनी पुरानी चादर मंगवा ली। मैंने पूछा - 'ऐसा क्यों बाबा?' बाबा बोले - 'बच्ची, बाप तो गरीब निवाज है। ये सब नई चीजें बच्चों के लिए हैं। कितने उपराम चित्त थे बाबा और बच्चों के लिए कितना ख्याल तथा स्नेह था बाबा के मन में।

हम जब कभी बाबा के पास जाते तो मुलाकात में ऐसे लगता कि बाबा हम बच्चों से बहुत दूर-दूर आगे बढते जा रहे हैं, वह अति सूक्ष्म अथवा अव्यक्त अवस्था वाले होते जा रहे हैं।

उठते-बैठते बाबा हर कदम पर हमारा ध्यान इस बात की ओर खिचवाते कि अब यहाँ विनाश में बहुत थोडा समय बाकी है। अमेरिका आदि देशों के लोग सोचते हैं कि वे बहुत वैज्ञानिक उन्नति कर रहे हैं परंतु होना कुछ और है। जब हमारे लौकिक पिता (नारायण कुमार जी) सन् १९६७ में मधुबन गये तो बाबा ने हमारे लौकिक भाई (चन्दरुजी) को जमैका में टेप भेजकर तथा पत्र में भी सावधान किया कि - 'बच्चे, विनाश में समय बहुत कम रह गया है। १९७० में दुनिया पर आफतें आना शुरु होंगी। आप गोरख-धन्धे को समेट कर अब भारत में आने का ख्याल करो। कुछ काल में रास्ते आदि बन्द हो जावेंगे।'

11. बाबा द्वारा मिली सावधानी

इस बार जब हम अपनी लौकिक माँ 'लक्ष्मी जी' के साथ मधुबन में ०७/०१/१९६९ को गये तो उन्होंने बाबा से पूछा कि - 'आप जो कहते हैं कि ७ वर्षो में विनाश होने वाला है, वह कैसे?' बाबा ने उन से कहा - 'बच्ची, यह ब्रह्मा तो ५ वर्षो में, दो वर्षो में या अभी भी जा सकता है (शरीर छोड सकता है) परंतु तुम बच्चों को ईश्वरीय याद की यात्रा में रहने की मेहनत करनी है।

बाबा को ईश्वरीय पढाई की तथा समय की कितनी कदर थी। अब तक हम इन बातों को इतना महत्व नहीं दे पाये थे। आँधी हो या तूफान, चाहे खाँसी हो या बुखार पर अन्तिम घडी तक भी बाबा हम बच्चों की सर्विस करते रहे तथा अपने आराम को न देखकर, हम बच्चों को पुरुषार्थ कराने के लिए सुबह-सवेरे हमें योग अभ्यास कराते थे। सच तो यह है कि उनके हर कदम में हमें शिक्षा प्राप्त होती। संक्षेप में, मैं फिर कहूँगी कि - 'बाबा का व्यक्तित्व, चुम्बकीय मुस्कान, उनकी अलौकिक शिक्षाएँ, जिन्हें कि वे व्यवहारिक जीवन में लाकर दिखाते थे, हम बच्चों के पुरुषार्थ को तीव्रतर करने के लिए उनका सतत चिन्तन, हमारे लिए सदा प्रेरणादायक रहे, ये मेरे जीवन में तीव्र गति से परिवर्तन लाने के लिए निमित्त बने और ये आज भी सभी के लिए मार्गदर्शक बने हुए हैं।'

हर कल्प में एक ही बार,
शिव लेते ब्रह्मा तन में अवतार,
इस कल्प में हमने भी उसे देखा, उसे पाया।

एक बार की बात है

- वी.के. चक्रधारी वहन, दिल्ली

एक बार की बात है कि जब मैं मधुबन में बापदादा के पास गई तो वापस आती बार बाबा ने पूछा - 'बच्ची, किसी चीज की जरूरत हो तो बताओ।' मैंने कहा - 'बाबा, मैं तो यज्ञ की ही हूँ, शिवबाबा के ही भण्डारे से सब-कुछ लेती और खाती-पहनती हूँ। इस समय मुझे किसी चीज की आवश्यकता तो नहीं है।' बाबा ने कहा - 'बच्ची, बेटी बाप के घर से खाली हाथ नहीं जाती। कोई-न-कोई चीज तुम्हें लेनी ही होगी। वह केवल सौगात नहीं होगी बल्कि उसमें 'बाप' की याद समाई हुई होगी।' ऐसा कहकर बाबा ने मुझे एक बैड-कवर चुनकर बहुत स्नेह से दिया और कहा - 'यह आपको याद दिलायेगी कि सोते समय भी शिवबाबा (निराकार शिव) को याद करना है और उठोगी तो भी इसे देखकर कि शिवबाबा याद आयेंगे, रात को स्वप्न भी ईश्वरीय आयेंगे और तुम ऐसा महसूस करोगी कि शिवबाबा की याद में उडती जा रही हूँ।' यह था बापदादा का सच्चा, हार्दिक और कल्याणकारी स्नेह।

एक बार की बात है कि किसी ने पिताश्रीजी के लिए बहुत ही स्नेह से एक स्वेटर भेजा। पिताश्रीजी ने उस व्यक्ति के स्नेह का उत्तर स्नेह में देने के लिए उस स्वेटर पहन कर दिखाया और खुश तो कर दिया परंतु साथ ही कहा - 'अगर मैं रोजाना यह स्वेटर पहनूँगा तो तुम्हारी याद आयेगी, यह तो ठीक नहीं होगा क्योंकि याद तो हम सभी को एक शिवबाबा को ही करना हैं। जिस कर्म से शिवबाबा की याद भूले, वह कर्म करना ठीक नहीं है।' पिताश्रीजी ने सभी सेवाकेन्द्रों पर भी यही निर्देश दिया था कि - 'कोई किसी से व्यक्तिगत रीति से कोई भी वस्तु न ले। यदि कोई व्यक्ति कुछ देना चाहता है तो वह शिवबाबा को सामने लाकर यज्ञ अर्थ दे। बाद में जिस किसी को आवश्यकता अनुसार वह चीज देनी होगी दी जायेगी वरना देने वाले का उच्च कल्याण नहीं है और लेने वाले के भी योग के पुरुषार्थ में बाधा पडेगी।' कितना स्नेह होने पर भी सदा कल्याणकारी ही कर्तव्य करते तथा नियम भी बताते थे पिताश्राजी।

एक बार की बात है कि हमारा सारा लौकिक परिवार मधुबन में बापदादा के पास गया। हम सबसे पहले, इस ईश्वरीय ज्ञान को मेरी लौकिक माता ही ने लिया था, बाकी हम सभी का सम्पर्क बाद में हुआ था। रास्ते में माताजी ने कहा - 'मैं तो अपने बाप के घर में जा रही हूँ।' हमारे लौकिक पिता जी ने कहा - 'अच्छा, तो बाबा आपके हैं, हमारे नहीं है?' खैर, जब हम पाण्डव भवन में पहुँचे तो जाते ही एक कमरे में अपना सामान सेट किया और चारपाइयों पर बिछोने बिछाये और हम बैठे ही थे कि इतने में क्या देखा कि पिताश्रीजी आये हैं। उन्होंने हमारे लौकिक पिता की ओर देखते हुए कहा - 'बच्चे, रास्ते में किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं हुआ। बच्चे को यहाँ चाय लाकर दो, यह थक कर आया है।' पिताश्रीजी को वहाँ बैठे कुछ मिनट हुए थे कि एक बहन ने आकर धीरे से कहा - 'बाबा, आपका दूध इन्तजार कर रहा है।' परंतु पिताश्रीजी बैठे इस प्रकार बातचीत करते रहे मानो कोई विशेष अतिथि आया हो। इतने में लौकिक पिताजी के लिए चाय आ गई। बाबा भी चले गए। बाबा के जाते ही हमारे लौकिक पिता हमारी माताजी से बोले - 'देखो, आप तो कहती थी कि मेरे बाप का घर है। वह तो हमारे भी पिता है।' इस प्रकार, हम हमेशा देखते कि जो भी मधुबन में जाता था उसे ऐसा अनुभव होता था कि बाबा उसी के हैं।

ऐसी थी बाबा की मीठी युक्तियाँ

- कुंज दादी, पटना

एक दिन प्रात: क्लास के बाद बाबा ने मुझे कहा - 'बच्ची, आप भी ईश्वरीय सेवार्थ जाओगी न? कल जाओगी न देहली?' मुझे भी ईश्वरीय सेवा के लिये तो बहुत रुचि और लगन थी परंतु इतने वर्ष यज्ञ-पिता के निकट पवित्र वातावरण में जीवन बिताने के बाद अब बाहर मायावी वातावरण में जाने के लिये मन तुरंत नहीं उत्तर दे रहा था।

फिर जब हम यज्ञ वत्स बाबा के साथ पहाडी पर घुमने गये तो वहाँ जब यज्ञ-वत्स बैठे थे तब बाबा ने कहा - 'बाबा तो कुँज को वर्थ पाउण्ड अर्थात मूल्यवान रत्न समझते थे परंतु यह वर्थ पैनी निकली है अर्थात वैसी योग्य सिद्ध नहीं हुई।' बाबा के ये शब्द सुनकर मैं लगभग दो सप्ताह बाबा से छिपती रही। फिर एक दिन मैं मातेश्वरी के साथ बाबा के पास गयी और मैंने कहा - 'बाबा, अब मैं जाने के लिये तैयार हूँ।' तब मैंने यह भी कहा - 'प्यारे बाबा मैंने आपसे केवल इतना ही तो कहा था कि मैं अगली पार्टी के साथ जाऊँगी। इस पर आपने मुझे 'वर्थ पैनी' कहा।' यह कहते हुए मैं भी हँस रही थी और बाबा भी मुस्करा रहे थे।

बाबा ने कहा - 'बच्ची, बाबा जानता है कि किस बच्ची को कौन-सी बात अथवा कौन-सा शब्द तीर की तरह लगेगा। अगर मैं यह शब्द न कहता तो तुम कभी भी यज्ञ की चार दीवारी से बाहर न जाती क्योंकि तुम्हारा बाबा से अटूट स्नेह है।'

मैंने कहा - 'बाबा, एक तो बात स्नेह की है और, दूसरी मुझे बाबा के सन्मुख मुरली सुनना अच्छा लगता है...।' इस प्रकार हमने अनुभव किया कि बाबा प्रेम स्वरूप होने के साथ-साथ अनेक युक्तियाँ से बच्चों को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करते थे।

मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मुझे त्रिलोकी मिल गयी है

- वी.के. हरदेवी बहन

एक बार मैं शिमले में ठहरी हुई थी। वहाँ ओम मण्डली वाली एक माता ने मुझे बाबा का एक पत्र सुनाया। पत्र में लिखा था कि 'तुम आत्मा हो।' उस पत्र को सुनते-सुनते मुझे दिव्य साक्षात्कार होने लगा कि (सिन्ध में) ऐसा बाबा है, ऐसी उनकी सभा है। जब मैं लौट कर हैदराबाद आई तो मैंने एक पत्र लिखा था कि 'मैं बाबा से मिलना चाहती हूँ।'

उत्तर आने पर बाबा के सामने गयी तो साक्षात्कार वाला बाबा देखा, बाबा ने पूछा - 'बच्ची, क्या चाहती हो ?'

मैंने कहा - 'बाबा, परमात्मा से मिलना चाहती हूँ।'

बाबा ने कहा - 'यह तो बहुत सहज है। यह पाँच तत्त्वों का बना शरीर है, तुम आत्मा हो, तुम्हें आत्मा के स्वाभाविक गुणों में स्थित होना है। तुम परमात्मा के बच्चे हो, बस इस नशे में रहना है...।'

बाबा के समझाने का तरीका और बाबा की स्थिति ऐसी थी कि सुनत-सुनते मैं देह से न्यारी हो गयी और चार धण्टे आत्मिक सुख में एक-टिक बैठ गयी। ऐसा अनुभव हुआ कि ज्योति स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार हो रहा है। उस स्थिति में ऐसी खुशी थी कि जैसे त्रिलोकी का राज्य मिल गया है।

स्मृतियों के मोती

- वी.के. गुरबख्श भाई, दिल्ली

मधुबन में प्राय: गर्मियों की छुट्टियों में एक मेला-सा लग जाता था। ऐसे समय में बहुत भाई-बहनों को चारपाई के बिना ही फर्श पर सोना पडता था। एक रात्रि को जब पिताश्रीजी निरीक्षण करने निकले तो कई बच्चों को फर्श पर सोया देख कर बोले - ''बच्चे, दुनिया वाले जब 'स्वर्ग वासी' होते हैं तो उनको फर्श पर उतारा जाता है परंतु आप बच्चे तो जीते जी स्वर्गवासी बने हो, इसलिए आपको फर्श पर सुलाया गया है।'' यह बात सुनकर सब स्वर्ग के नशे में झूमने लगे और नीचे फर्श पर सोने की असुविधा भी मधुर लगने लगी तथा फर्श की कठोरता बाबा के शब्दों की मधुरता से हट गयी और हम फर्श की बजाय स्वयं को अर्श पर महसूस करने लगे।

1. बचपन की मधुर स्मृतियाँ लौटाने वाले बाबा।

पिताश्रीजी जब भी किसी से मिलते तो सबको 'बच्चे' शब्द से ही संबोधन कर पुकारते थे। 'बच्चे' शब्द का प्रयोग वे अपनी हर बातचीत और प्रवचनों में सदैव करते थे। एक बार एक बहुत ही वृद्ध व्यक्ति उनसे मिलने आया। बाबा ने उसे बडे ही प्यार से जब 'बच्चे' कह कर पुकारा तो उसका मन बचपन की मधुर स्मृतियों से भर आया और बाबा का प्रेम पाकर उसके नयन प्यार में छलक पडे और कहने लगा - 'बाबा ने मुझे अपना बच्चा बना कर मुझे चिन्ताओं से मुक्त कर दिया।' वह बोला कि लोग कहते हैं कि बचपन लौट कर नहीं आता परंतु मैं इतना बूढा हूँ, फिर भी जब बाबा ने मुझे 'बच्चे' कह कर पुकारा तो मुझे बडी खुशी हुई कि कोई तो मुझे भी 'बच्चे' - ऐसा कह पुकारता है। सचमुच मेरा बचपन लौट आया है और मुझे बाप मिल गया है।

2. समय का पावन्द बाबा

बाबा स्वयं भी समय के बहुत पाबन्द थे और बच्चों को भी समय का पाबन्द रहने का पाठ पढ़ाते थे। जिसको वे मिलने का समय देते थे, उस समय वे उसका इन्तजार करते। एक बार बाबा ने मुझे प्रात: मिलने का समय दिया। किसी कारण-वश मुझे देर हो गई। जब मैं बाबा से मिलने गया तो बाबा ने देखते ही कहा 'बच्चे, टू लेट' और मैं बाबा की दृष्टि लेकर लौट आया। परंतु मैंने आगे के लिए समय की पाबन्दी सीख ली।

3. पिताश्रीजी बेहद हितैषी

एक माता थी। उसका ८ सदस्यों का परिवार था। उसे ईश्वरीय सेवा करने का अत्यंत शोक था। एक बार जब वह मधुबन स्वर्ग आश्रम में पिताश्रीजी से मिलने गई तो उसने पिताश्रीजी से आग्रह किया कि मुझे छोटे परिवार की सेवा से मुक्त कराओ अथवा कुछ समय दिला कर बेहद के परिवार की ज्ञान सेवा करने का अवसर दें। पिताश्रीजी ने उसको कुछ दिन मधुबन स्वर्गाश्रम में रहने के पश्चात

घर वापस भेजा और उसके परिवार के सदस्यों के लिए एक पत्र भी दिया। जिसमें परिवार के सदस्यों की कठिनाईयों से सहानुभूति प्रगट की और साथ में राय भी दी कि परिवार के सदस्यों की कठिनाई घर में एक कुशल नौकरानी रखने से दूर हो सकती है। और उसका जो भी खर्ज होगा उसका भुगतान यज्ञ करेगा और इस माता को कुछ अवकाश दिया जाय ताकि वह मनुष्यात्माओं को ईश्वरीय ज्ञान और योग की सेवा द्वारा लाभान्वित कर सके। ऐसे थे साकार पिताश्रीजी जो सभी जाने और अनजाने बच्चों की तकलीफ को ध्यान में रख कल्याणकारी राय देते थे।

4. बाबा एक कुशल खिलाडी

पिछले साल की बात है। देहली के हमारे एक अलौकिक भाई थे जो कि बैडमिन्टन के बहुत अच्छे और चुने हुए खिलाडियों में से थे। जब वह बाबा से मिले तो उन्हें अपना समाचार सुनाया और परिचय देते हुए यह भी बताया कि मैं बैडमिन्टन का बहुत अच्छा खिलाडी हूँ। बाबा ने समाचार सुनने के पश्चात उसे बैडमिन्टन खेलने का निमंत्रण दिया। सायंकाल ग्राउण्ड तैयार की गई। सभी उपस्थित बहन-भाई इस मनोहर दृश्य को देखने के लिए आतुर थे। दोनों खिलाडी मैदान में उतरे और बाबा ने थोडी ही देर में उसे पराजित कर दिया। खेल में बाबा की स्फूर्ति अति मनोहर और हृदय को आकर्षित करने वाली थी। कहाँ बाबा ६० वर्ष के और कहाँ वह युवक २० वर्ष का।

5. सोते समय भी दूसरों को सुख देने का ख्याल

गर्मियों की छुट्टीयों में प्राय: सभी परिवार बाबा से मिलने मधुबन स्वर्गाश्रम में जाते एक दिन, रात को निरवता में किसी छोटे बालक के रुदन की आवाज आई। बाबा ने बच्चे के रोने का कारण पूछने भेजा तो बच्चे की माँ ने कहा - 'इस बच्चे को रात्रि के समय दूध पीने की आदत है।' यह सुनकर बाबा ने दूध की अपनी थर्मोस मंगवाई और उस माता को दे दी।

6. बेसहारों के सहारा

एक माता थी। पाकिस्तान में उसका सब-कुछ लुट गया था। भारत आने पर उसीके पति की भी मृत्यु हो गयी। वह अपना पेट मजदूरी कर पालती थी। गुजरान बडी कठिनाई से होती थी। एक बार वह पिताश्रीजी से मिलने मधुबन स्वर्गाश्रम में गई कुछ समय रहने के पश्चात उसने अपने घर लौटने की इच्छा प्रगट की। पिताश्रीजी ने कहा 'बेटी, यह तुम्हारा अपना घर है और तुम भी इस ईश्वरीय सेवा में लग जाओ।' माता ने कहा 'मैं तो अनपढ हूँ। मैं यह ईश्वरीय सेवा कैसे कर सकती हूँ।' बाबा ने उसके लिए यथा योग्य एक शिक्षिका का प्रबन्ध कर दिया। इस प्रकार बेसहारों को सहारा देकर उन्हें समाज में सम्मानित स्थान दिलाया।

बाबा में रुहानियत का आकर्षण

- बी.के. ओम प्रकाश भाई, इन्दोर

बात उन दिनों की है जब सन् १९५६ में मैं प्रथम बार बाबा से मिलन मनाने आबू आया था। उस समय मुख्यालय कोटा हाऊस, आबू में था और जबसे मुझे ज्ञान प्राप्त हुआ था उसी समय से मेरे दिल में बाबा से सन्मुख मिलने की बडी तीव्र अभिलाषा थी और मिलन की उस घडी का मैं बैचेनी से इन्तजार कर रहा था। आखिर वह घडी आयी और हम पार्टी सहित आबू पहुँच ही गये और संध्या समय हम सब बाबा से मधुर मिलन हेतु कोटा हाऊस में एकत्रित हुए, मेरा दिल खुशी में ऐसा नाच रहा था मानो मृग-छौना हरे-हरे घास के मैदान के कुचाले भर रहा हो। मन में एक जोश था, एक उमंग था, उत्साह था कि अब तो बाबा से मेरा मिलाप होगा। मैं भी बाबा से रूबरू मिलूँगा बार-बार घडी देख रहा था। आखिर, अपने निश्चित समय पर बाबा हम सबके सन्मुख उपस्थित हुए। मुझे ऐसा लगा मानो एक शीतल और मधुर हवा की लहर मुझे छूती हुई निकल गयी और मेरी यात्रा की थकान जैसे कहीं लुप्त हो गयी हो तथा उसका स्थान एक नई उमंग ने ले लिया हो। थोडी देर के लिए मैं सब-कुछ भूल-सा गया, ठगा-सा रह गया और अपने चिर-परिचित बाप को देखते रहा। बस देखता ही रहा। मुझे ये भी नहीं मालूम कि मैं कहाँ हूँ? मुझे क्या करना चाहिए? मुझे बाबा से कैसे अभिवादन करना चाहिए, कैसे उनसे मिलना है यह सब कुछ भी मुझे पता नहीं था और पता क्या नहीं था वास्तव में मुझे बताया नहीं गया था कि मुझे कैसे बाबा का अभिवादन करना। खैर.... मैं वेसे ही बाबा की ओर एकटक देखता रहा और अपने आप ही मैं जैसे बाबा के नजदीक और

नजदीक होता चला गया और फिर मैं अपने मीठे-मीठे बाबा की प्यार भरी, दुलार भरी गोद में पहुँच गया। और एक छोटे-से गोद के बच्चे की तरह शान्ति और सुख का शीतल अनुभव करता मैं बाबा की गोद में लेट सा गया। उस समय का सुख उस समय की शान्ति और उस समय मुझे मिलने वाला बाबा का अपार स्नेह मैं शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं कर सकता हूँ। बस, मैं और मेरा बाबा....।

1. भावना का आदर

एक बार मैं जबलपुर के कुछ भाई-बहनों की पार्टी लेकर मधुबन गया हुआ था। हमारे साथ इस पार्टी में एक वृद्ध माता अपने साथ एक पोटली में कुछ चावल लेकर आयी थी। और उसकी हार्दिक तमन्ना थी कि - 'ये चावल मधुबन में पकाये जाय।' उसने मेरे पास आकर अपने मन की बात कही। मैं बहुत सोच में पड गया कि भाई - 'इतने से चावल में आखिर क्या होगा?' खैर, मैं बाबा के पास पहुँचा और उस माता की इच्छा से बाबा को अवगत कराया। फिर क्या था, बाबा ने उसी समय भोली बहन (जो कि यहाँ के रसोई घर की मुख्य बहन हैं) को बुलवाया और कहा कि - 'जितना भी दूध आया है ना उसका दही मत जमाना, कल उस दूध की खीर बनेगी, एक माता चावल लेकर आयी हैं, उन्हीं से तुम खीर बना देना।' फिर तो दूसरे दिन उन चावलों की खीर बनायी गयी और सभी ब्राह्मणों को खीर भोजन के साथ खिलाई गयी। जिससे उस माता की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं रही और वह खुशी से झूम उठी, तो ऐसे गरीब निवाज थे बाबा। बाबा के पास ऊँची-ऊँची कीमती वस्तुओं का मान नहीं अपितु भावना का मान था। वे हरेक की भावना को समझते थे और उसका आदर करते थे।

2. सेवा की अति लगन

बाबा को अन्य आत्माओं की सेवा करने की बडी तीव्र लगन रहती थी। वे सभी बच्चों में सेवा के प्रति रुचि जागृत करने हेतु सदैव प्रयत्न शील रहते थे और स्वयं भी सेवार्थ सदैव तत्पर रहते थे, कभी भी बाबा ने सेवा के प्रति उदासीनता नहीं दिखायी बल्कि हर समय सेवा में लीन रहते और अन्य बच्चों को भी सेवा के प्रति प्रेरणा देते रहते थे।

एक बार जब जबलपुर में कॉग्रेस अधिवेशन हुआ था, वहाँ पर हमारी प्रदर्शनी का भी आयोजन रखा गया था जिसका उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री बहन इन्दिरा गाँधी करने वाली थी। हमने बाबा को टेलिफोन द्वारा सारी सूचना दी तथा प्रदर्शनी में ज्ञान सेवार्थ कुछ गाईडस की माँग भी बाबा से की। उस समय मधुबन में बाबा के पास गाईडस बहने नहीं थी, अब क्या हो? उस समय दादी प्रकाशमणी मुम्बई सेवा केन्द्रों की इन्चार्ज थी और आबू में रिफ्रेश होने पहुँची थी तथा उस समय दादी के दाँतों में भी दर्द की शिकायत थी परंतु बाबा ने सेवा को प्रमुखता देते हुए उन्हें फौरन ही जबलपूर सर्विस पर जाने को कहा और शीघ्र ही नीचे आबू रोड भेज दिया। साथ ही अहमदाबाद फोन करवाया कि - 'कोई प्लेन हो तो दादी प्रकाशमणी को भेज दो।' परंतु ड्रामा की भावी। उस समय कोई प्लेन आदि उपलब्ध न होने के कारण दादी जबलपुर नहीं पहुँच सकी। खैर... तो ऐसे कई उदाहरण हैं जो हमें बताते हैं कि बाबा का सेवा के प्रति कितना लगाव व प्रेम था और सेवा ही प्रमुख रूप से सामने रखकर बाबा ने जीवन बिताया और सभी बच्चों को भी सेवा के लिए प्रेरित किया, तो ऐसे सेवा भावी थे बाबा!

सिकीलधे बाप और सिकीलधे बच्चों से न्यारी बातें और बातों की गहरी परतें

जिन ब्रह्माकुमारियों और ब्रह्माकुमारों को बाबा के साथ रहने का सौ-भाग्य प्राप्त हुआ, वे इस बात के अनुभवी हैं कि बाबा का हरेक वाक्य अथवा हरेक कार्य किस प्रकार ज्ञान के गहन रहस्यों से युक्त होता था। बहुत बार तो उन्हें समझाना भी कठिन हो जाता था क्योंकि एक अवसर पर बाबा ने जो बात कही होती, वह दूसरे अवसर पर कही बात से कई बार नहीं मिलती मालूम होती थी परंतु यदि ज्ञान के तीसरे नेत्र से देखा जाये तो वे दोनों बातें अपने-अपने स्थान पर और अपने-अपने अवसर के अनुसार ठीक होती थी। उदाहरण के तौर पर जब कभी बाबा ने देहली में या अन्य किसी नगर के सेवा केन्द्र पर जाना होता तो मधुबन से प्रस्थान करने से कई दिन पहले ही बाबा पत्र द्वारा यह निर्देश भेज देते कि 'बाबा का स्वागत करने के लिए कोई भीड-भडक्का नहीं होना चाहिए।'

1. बच्चों को तकलीफ मत देना

बाबा लिखते - 'सिकीलधे बच्चों प्रति, देखो बाबा अति साधारण है। बाबा का ज्ञान गुप्त है, बाबा का आना भी गुप्त है और बाबा का सारा पार्ट भी गुप्त है तो बच्चों का सारा पार्ट भी गुप्त है। इसलिए बाबा कहते कि देहली में बाबा का आना भी गुप्त ही होगा। स्टेशन पर कोई भीड-भडक्का न होना चाहिए क्योंकि बेहद सुख देने वाले बाप के कारण किसी बच्चे को कष्ट न हो। देखो, यह बाप तो सबके कष्ट मिटाने आया है। यह बाप निराला है तो इसका बच्चों से मिलन भी निराला होना है। इसलिए बाबा कहते हैं कि फालतू खर्चा करने की जरूरत नहीं। बच्चे आराम से सेवाकेन्द्र पर बैठे रहें, बाबा वहाँ ही सबको आकर मिलेंगे। बच्चों को कोई भी तकलीफ देनी नहीं है।

यह कोई साधु-सन्त या गुरु-गोसाई थोडे ही है, यह तो आत्माओं का बाप है और बाप तो बच्चों का सेवाधारी होता है। अत: बाबा तो स्वयं ही सब से आ मिलेंगे....।'

अब देख लीजिये कि बाबा का ऐसा लिखना ज्ञान-युक्त और युक्ति-युक्त ही तो है ना। इसमें कितनी नम्रता और कितना सेवा-भाव समाया हुआ है। इसमें उस प्रियवर बाप का कितना प्यार भरा हुआ है जो कि बच्चों को जरा भी तकलीफ देना नहीं चाहता। इस में कितनी नम्रता और सादगी छिपी हुई है। लेकिन जब स्टेशन पर गाडी पहुँचती और विभिन्न सेवा केन्द्रों से ब्रह्मा-वत्स स्टेशन पर आये हुए होते तब बाबा हरेक बच्चे को देखकर खुश भी बहुत होते। वे एक-एक को प्रेम भरी रुहानी दृष्टि देते और एक-एक से ऐसी भाव-भीनी मुलाकात करते कि सबके दिल की कली खिल जाती। तब वे जरा भी न कहते कि चिठ्ठी लिखने के बाद भी आप लोग यहाँ किस लिये आये, कयोंकि उस पिता को ये बच्चे इतने प्यारे लगते कि उनको देखकर उसके मन में प्रेम की मौजें उठने लगती और प्रेम ही तो उन सबको खींच कर ले आता कि न तो आने वाले रह पाते, न बाबा ही उनको रोक पाते।

'बाबा गुप्त है, बाबा का ज्ञान भी गुप्त है, बाबा से प्राप्त होने वाला खुशी का खजाना भी गुप्त है।' - बाबा के ये शब्द भी कितनी सेवा करते। बच्चों को खुशी होती कि हम कितने सौ-भाग्यशाली है कि हमने उस बाबा को पहचाना है। परंतु उस गुप्त बाबा की रंगत प्लेटफार्म पर देखने जैसी होती, जैसे हँसों के झुण्ड में परमहँस खड़ा हो। उतरने वाले यात्री उस दिन तेज रफ्तार से अपना सामान को नहीं उठा रहे होते क्योंकि सबका ध्यान बरबस स्वत: ही बाबा की ओर खिचा जाता। यात्रियों को जाना तो पुल की ओर होता परंतु वे मुड-मुड कर बाबा की ओर देख रहे होते मानो उनके मन में यह इच्छा हो कि उन्हें भी बाबा अपने पास बुला लें। ऐस ही जब बाबा उस नगर से प्रस्थान करने के लिए स्टेशन पर आते तो ब्रह्मा-वत्सों के झुण्ड में अन्य अनेक यात्री भी अपनी सीट छोडकर वहीं आ खड़े होते और कान लगाकर सुनने की कोशिश करते कि बाबा उन्हें क्या कह रहे हैं। बुलन्द कद, नूरानी पेशानी, मुस्कुराता हुआ चेहरा, एक फरिश्ता-सीरत बुजुर्ग गाडी के कम्पार्टमेन्ट के दरवाजे में खडे हुए दर्शनीयमूर्त दिखाई देते। गाडी में अपनी सीट ढूँढना भूलकर बहुत व्यक्ति कुछ टाईम वही रुक जाते। कभी-कभी तो ऐसा भी होता कि गार्ड झंडी दिखाता हुआ इंजिन की तरफ देखने के बजाय बाबा की ओर ही देख रहा होता और जब बाबा अपने वरद हस्तों से प्रसाद, जिसे 'टोली' कहा जाता हैं, बाँटने लगते तो कितने ही अपरिचित लोग भी 'टोली' लेने के लिए आगे बढ़ आते। अवश्य ही एक दिन ऐसा आयेगा जब उस समय का चित्र साक्षात्कार के रूप में फिर से आएगा और वे लोग पहचानेंगे कि उन्होंने किससे वह प्यार भरी 'टोली' ली थी।

2. शौक फूलों का - परंतु कौन-से फूल?

इसी प्रकार एक ओर तो बाबा कहते कि - 'देखो, बाबा के लिये कोई फूल मालाएँ इत्यादी मत लाना। बाबा को तो चेतन, मनुष्य रूपी फूल चाहिए। जो बच्चे अपवित्र हैं, वे ही मानो कांटें हैं, और जो ईश्वरीय ज्ञान को धारण करते हैं और पवित्र बनते हैं, वे ही खुशबूदार फूल हैं। बाबा तो ऐसे ही बच्चों की 'विजय माला' बनाने आया है। बाबा मुरझाने वाले फूलों को पसंद नहीं करता। ज्ञान और योग सीखने वाली आत्मा ही सदा बहार फूल है। इनमें ही कोई चमेली है, कोई गुलाब, कोई मोतिया है, कोई रतनज्योत, कोई नरगिस है और कोई रात की रानी। बस , बाबा को तो यही फूलवाडी अच्छी लगती है, इसी फूलवाडी का बाबा माली है, क्योंकि इन्हीं को तैयार करके बाबा शिवबाबा के सामने पेश करता हैं....।'

परंतु दूसरी ओर बाबा को वैसे भी फूलों और फूलवाडी का शौक था। मधुबन में प्रतिदिन कोई वत्स अथवा माली बाबा के पास कुछ फूल ले आया करता था। बाबा इन्हें बहुत पसंद करते थे और उनमें से अनेक बच्चों को फूल भेंट किया करते। हर वत्स को फूल देते हुए वे कहते - 'देखो बच्चे, यह फूल कितना खुशबूदार है और कितना सुन्दर है। तुम भी बाबा को इतने ही अच्छे लगते हो। बाबा तुम्हारे जैसे फूलों को ही सृष्टि रूपी वाटिका में उगाने आया है। यह दुनिया जो कांटों का जंगल बन चुकी थी, अब इसे फूलों का बगीचा बनाना है...।' इस प्रकार बाबा फूल पर खर्च करके उसे व्यर्थ गँवाने के लिए मना करते परंतु उसका प्रतीकार्थ लेकर उसे सेवा करने का साधन भी बनाते। हैं न बाबा की दोनों बाते कमाल की - इन में उच्च अर्थ भी है और संतुलन भी। इनमें सेवा भी है, सादगी भी, प्रेम भी, और नेम भी।

मम्मा-बाबा के साथ के अलौकिक अनुभव

-कैलास दीदी (गांधीनगर, गुजरात)

1. मातेश्वरी जगदम्बा माँ का मीठी-मीठी शिक्षाओं भरा पत्र

जब मैं छोटी थी और मैं घर में ही रहती थी, मैं पढी-लिखी भी नहीं थी और थोडा-थोडा बंधन भी था तब मेरे को बाबा से, ज्ञान से खूब स्नेह-प्यार था। मैं यही सोचती थी कि मैं जल्दी से जल्दी ब्रह्माकुमारी बनकर बाबा के घर बेहद सेवा में लग जाऊँ। लेकिन मुझे बहोत सारे भाई-बहनें ऐसे कहते थे आप पढी-लिखी तो हो ही नहीं आप सेन्टर पर क्या करेगी इसलिए आप शादी कर लो। जब मैं यह बात सुनती थी तो मुझे बहोत दु:ख होता था। एक दिन तो मुझे बहोत ही संकल्प चले और मैं एक लडकी को बुलाकर उससे बाबा-मम्मा को पत्र लिखा पत्र मैं मम्मा को खूब विस्तार से अपने दिल का हाल लिख दिया। मैंने पत्र में साफ लिखा कि मम्मा मैं हिमाचल प्रदेश की रहनेवाली हूँ, मेरी पहाडी भाषा है, मैं बिल्कुल पढी हुई नहीं हूँ लेकिन मुझे हमेशा सेन्टर पर ही रहना है तो मुझे हमेशा सेन्टर पर रहने के लिए कौन-कौन सी बातें ध्यान पर रखनी है ? मैं सदा सेन्टर पर ही रहूँ उसके लिए मुझे क्या करना होगा ? तो मम्मा ने बहोत ही अच्छा पत्र लिखा। मैं बाजु में से कोई बहन को बुलाकर के आई और उसको कहा मुझे यह पत्र पढकर सुनाओ। उस बहन ने मम्मा का पूरा पत्र पढकर सुनाया। मैं इतनी खुश हो गई कि बात मत पूछो। मम्मा ने बहोत अच्छी शिक्षाओं भरी बातें लिखी कि - **'बच्ची, आप कोई भी बात से गभराओ नहीं। अच्छी तरह से बाबा को याद करो। सफलता तेरी परछाई बनकर के तेरे साथ साथ दौड रही है। बाकी जब अपने घर को छोडकर बाबा के घर में आओ तब यह सोचकर आना कि बाबा का घर ही मेरा सदाकाल के लिए घर है। बाबा के घर के सिवाए और मेरा कोई घर नहीं। बाबा मम्मा के सिवाए और मेरा कोई संबंधी नहीं। दूसरी बात मम्मा ने बतायी कि - बच्ची, जब आप बाबा के घर पर पैर रखेंगी तो बच्ची आपको कभी कहाँ, कभी कहाँ जाना पडेगा तो बाबा जहाँ भी भेंजे, जिस भी स्थान पर भेजे, जिन भी साथियों के साथ रहना पडे वहाँ सबके साथ तेरे को सेट होकर के चलना है। आप सबका विचार करके चलना। ऐसे नहीं, आपको चलाने के लिए और लोग आपकी चिंता करे। फिर तीसरी बात मम्मा ने बोली - बच्ची, आपको कोई कहाँ भी भेजे, कितने भी स्थान पर जाना पडे पर एक घर की बात (एक सेन्टर की बात) दूसरे घर में नहीं बताने की। और सदा यह पक्का निश्चय रखने का कि मैं जीते जी बाबा के घर पर आई हूँ, मरने के बाद मेरी अस्थि भी बाबा के घर से ही निकलेगी।'** ऐसी मीठी शिक्षायें मनहरनी माँ ने मुझे देकर अच्छी तरह मजबूत बनाया।

2. साकार वावा के संग पहली यादगार मुलाकात

मैं जब जलंधर सेन्टर से मधुबन बाबा से मिलने के लिए गई तो जलंधर से काफी सारी पार्टी बाबा से मिलने आई हुई थी। हम सभी मधुबन बाबा के बेहद घर में पहुँचे तो हमारी क्रिष्नादीदीजी (अभी अंबाला सेवाकेन्द्र पर है) ने सभी को कहा कि आप सभी जल्दी-जल्दी तैयार होकर आ जाओ फिर हम सभी बाबा से मिलने जायेंगे। क्रिष्नादीदीजी ने कहा वैसे सभी तैयार होकर बाबा के कमरे के बाहर खडे हो गए। दीदीजी हम सबको बाबा के कमरे में ले गए। बाबा ने बहोत प्यार से दृष्टि दी। हमारी दीदीजी ने सभी भाई-बहनों का, कुमार-कुमारीयों का परिचय दिया। बाबा सभी से बहोत प्यार से मिले। सभी से बातचीत कर रहे थे। बाबाने मेरे को भी बडे प्यार से पूछा - बच्ची, आप हिमाचल प्रदेश के पहाडो में रहती हो ? मैंने बाबा को कहा - 'हाँ जी'। बाबा ने कहा - देखो बच्ची, बाबा भी पहाडों के अंदर ही रहते हैं। हमारी दीदीजी ने कहा - बाबा यह बहन पढी-लिखी नहीं है लेकिन खूब प्यार से बाबा के घर की सेवा करती है और ध्यान में भी जाती है। इनका ट्रान्स का भी पार्ट है। बाबा ने कहा - बहोत अच्छा बच्ची। जब सभी बाबा को मिलकर बाहर निकल रहे थे तो बाबा ने मेरे को कहा - 'बच्ची, आप कल साडे दस बजे बाबा की झोंपडी में बाबा को मिलने के लिए आप अकेली आना।' दूसरे दिन हम सभी बहनें चाय-नास्ता करके बैठे हुए थे। बडी बहनें अपने काम में बिजी थी। मैं बहनों के सामने बैठी हुई थी। हमारी दीदी ने कहा - कैलास बहन, हम हमारे काम में बिजी है तब तक आप सभी बहनों के कपडे धुलाई करके आओ। बहनों ने मुझे दस बजे के बाद कपडें धुलाई के लिए कहा। मैंने सभी बहनों के कपडें इकट्ठे करके बाथरूम में जाकर धुलाई करने लगी। लेकिन मेरी बुद्धि में था साडे दस बजे बाबा की झोंपडी में बाबा को मिलने के लिए जाना है। परंतु उस समय मुझे घडी देखने नहीं आती थी कि कितना टाइम हुआ होगा। मैंने जब बाथरूम से बहार आकर कपडे देखें तो बाथरूम में अंधियारा होने से अच्छी तरह कपडे धुलाई नहीं हुए थे। फिर शान्ति स्तंभ के बाजू के एक कोने में जहाँ नल था वहाँ कपडों को साबून लगाकर धुलाई करने लगी उसी समय बाबा, बडी दीदी, संतरी दीदी और लच्छू दीदी सभी मेरी ओर आ रहे थे लेकिन पानी की आवाज की वजह से और बाबा को मिलने जाने की धून के कारण मुझे मालूम ही न रहा कि बाबा मेरी ओर आ रहे हैं। बाबा ने आकर बडे हल्के हाथों से मेरी आँखों को बंद किया फिर मैं एक के बाद एक सभी बहनों का नाम लेने लगी। पर बाबा ने मेरी आँखें

न खोली। मैं अंदर ही अंदर सोचने लगी और बोली - 'आखिर भी बाबा कौन है?' तो बाबा बहोत मुस्कराते हुए बोले कि - **'बच्ची, सभी देहधारियों को याद करने के बाद लास्ट में बाबा याद आये।'** बाबा ने बडे प्यार से अपने ही हाथों से मेरे हाथ धुलाई किये। अपने रूमाल से पोंछ कर बाबा मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर अपनी झोंपडी की ओर ले चले। बाबा ने कहा - 'बच्ची, कपडे धोते-धोते क्या सोचती थी।' मैंने बाबा को कहा - 'साडे दस बजे बाबा की झोंपडी में बाबा को मिलने जाना है।' बाबा और सभी दादियाँ हँसने लगे और आपस में एक-दो को देखने लगे। बाबा ने कहा - 'बच्ची, बाबा ने साडे दस बजे कहा था लेकिन अभी साडे ग्याराह हो गए हैं।' हम सभी बाबा की झोंपडी में गए। बाबा ने कहा कि - 'तुम्हारी टीचर्स ने कहा था कि तुम ट्रान्स में जाती हो, तो अब **बच्ची, आप बाबा के पास जाकर आओ और मेरी बाबा को बहोत-बहोत याद देना। उपर देखकर आना कि मेरे में और तुम ध्यान में देखती हो उस बाबा में क्या फर्क है?**' मैंने कहा - भले बाबा। बाबा ने कहा - 'बच्ची चलो बाबा से पूछकर आओ। बाबा ने मुझे दृष्टि देते-देते वतन में भेज दिया।' जब मैं वतन से वापस आई तब बाबा ने कहा - 'बच्ची बाबा को मेरी याद दी थी?' मैंने कहा - 'जी बाबा'। बाबा को मिली? मैंने कहा - 'जी बाबा'। फिर बाबा ने पूछा - 'बाबा को देखा?' मैंने कहा - 'जी बाबा'। फिर बाबा ने कहा - 'बच्ची उपर बाबा कैसे थे?' मैंने कहा - 'बाबा उपर वाला बाबा बहोत अच्छा था।' बाबा ने बोला - 'बच्ची, मैं?' मैंने कहा - 'बाबा उपर वाले बाबा तो आपसे भी अच्छे थे।' तो बडी दीदी ने कहा - 'अरे मुठ्ठी, बाबा के लिए ऐसा क्युँ बोलती हो।' बाबा ने कहा - 'इस बच्ची ने जो देखा है, जैसे देखा है, वैसे बोलने दो।' बाबा ने बोला - 'बच्ची, बाबा उपर में बहोत अच्छे थे तो बाबा ने पेन्ट-शर्ट पहने थे?' मैंने कहा - 'नहीं बाबा, उपर वाले बाबा ने भी आप जैसे ही कपडे पहने थें।' तो **बाबा ने पूछा - 'अच्छे कैसे थे?' फिर मैंने बाबा को कहा - 'उपरवाले बाबा से चारों ओर लाईट निकल रही थी, आप में से नहीं निकल रही है।' बाबा ने कहा - 'बच्ची, यह बाबा अभी पुरुषार्थी है, पुरुषार्थ करते-करते उपरवाले बाबा जैसे बन जायेंगे। देखो, बच्ची उपर में बाबा की सम्पूर्ण स्टेज है इसीलिए बाबा कई संदेशियों द्वारा अपने पुरुषार्थ को, अपनी स्टेज को वैरीफाई कराते रहते है।'** ऐसा बाबा ने कहकर मुझे कहा कि - 'बच्ची, तेरा इतना अच्छा ध्यान का पार्ट है तो बच्ची तेरे को बाबा अब जहाँ सेवा पर भेजेगा वहाँ जायेगी?' मैंने कहा - 'हाँ जी बाबा'।

3. मुझे स्वयं भगवान ने पढाया

साकार बाबा ने मुझे जयपुर सेवा पर भेजा था। ५-६ मास के बाद बाबा ने मुझे मधुबन बुलाया और पूछा - 'बच्ची तुम्हें जयपुर में अच्छा लगता है?' मैंने कहा 'हाँ जी, अच्छा लगता है।' बाबा ने कहा - 'बच्ची, लौकिक घर में तो तुम्हें प्यार से रखते थे फिर तुम ब्रह्माकुमारी क्यों बनी?' मैंने कहा - 'बाबा, बहनें अच्छी लगती है।' बाबा ने पूछा - 'और क्या अच्छा लगता है?' मैंने कहा - 'आपकी मुरली।' बाबा ने कहा - 'रोज मुरली पढती हो?' मैंने कहा - नहीं। बाबा ने कहा - 'मुरली अच्छी लगती है फिर पढती क्यों नहीं हो?' मैं बहोत दु:ख के साथ बोली - 'बाबा मुझे पढना नहीं आता। मैं पढी हुई ही नहीं हूँ। और स्कूल में गई भी नहीं हूँ।' बाबा मेरी ओर देखते रहे। बाबा ने कहा - 'बच्ची, आपका हाथ दो।' बाबा ने मेरा हाथ देख कहा - 'बच्ची, पढना तो तुझे बहोत था फिर पढी क्यों नहीं? पढी होती तो विदेश सेवा करती।' मैंने कहा - 'बाबा, ड्रामा में नूँध नहीं होगी।' बाबा हँसने लगे और बोले - 'अरे बच्ची, बाबा का दिया हुआ ज्ञान बाबा को सुना रही हो।' फिर बाबा ने मेरा हाथ देखते-देखते कहा - 'बच्ची तेरी उम्र तो बहोत छोटी है, पच्चीस साल की ही है। ऐसा आपकी हस्त रेखायें कह रही है। हो सकता है योग बल से तेरी आयु बढ जायें। योगीयों की आयु योगबल से बढती है। तुम्हें तो बचपन में ही सन्यासी बनना था। अब घरबार छोड ब्रह्माकुमारी बन गई तो सन्यासी तो हो ही गई।' फिर बाबा ने कहा - 'बच्ची, आज शाम चार बजे ऑफिस में आ जाना बाबा तुझे पढायेंगे।' शाम को चार बजे मैं बाबा की ऑफिस में पहुँची (जहाँ अभी इशूदादीजी का ऑफिस है)। बाबा ने कागज पर सिन्धी अक्षरों में लिखवाना शुरु किया। दो-तीन लाईन ही लिखी होंगी इतने में फोन की घंटी बजी। रुकमणी दादीने जयपुर से फोन किया कि कैलास बहन को जल्दी भेज दो यहाँ पर खूब सेवा है। बाबा मेरे को देखने लगा। बाबा ने कहा - 'बच्ची तुम्हें तो जयपुर बुला रहे हैं।' मैं बोली - 'बाबा, मैंने कहा था ना पढना मेरा ड्रामा में नूँध नहीं है।' इतने बोल बोलते-बोलते मैं रो पडी। बाबा ने बोला - 'देखो बच्ची, कोई भी माँ-बाप बच्चों की आँखों में आँसू नहीं देख सकते हैं।' बाबा स्नेह भरी दृष्टि दे रहे थे। फिर बाबा ने मुझे पूछा - 'बच्ची, जयपुर में तेरी दिनचर्या क्या है?' मैंने बाबा को सारी दिनचर्या सुनाई। बाबा ने बोला - 'देखो बच्ची, सारा दिन तो तुम्हें टाइम नहीं मिलता इसलिए जब सब सो जाए तब तुम कॉपी-पेन लेकर एकांत में बाबा की याद में बैठ जाना। शिवबाबा तुझे पढायेगा।' मैं तो मूँझ गई कि - 'कैसे शिवबाबा पढायेगा। बाबा तो गोल-गोल बिंदी है, परमधाम में रहते हैं, साकार बाबा मधुबन में है और मैं जयपुर में, बाबा मुझे

कैसे पढायेगा ?' मेरे मन के भाव देखकर के बाबा बोले - **'बच्ची, बाबा पर विश्वास है तो बाबा के बोलो पर भी विश्वास रखो।'** मैंने कहा - 'जी बाबा'। उसके बाद बाबा बोले - 'बच्ची, तुम ऐसी जगह पर बैठना जहाँ किसी भी प्रकार का डिस्टर्बन्स न हो और किसी को बताना भी नहीं। अगर किसी को सुना देगी तो तुझे कोई भी शान्ति से बैठने नहीं देगा।' बाबा से छूट्टी लेकर मैं जयपुर पहुँची। उस समय आनंदकिशोर दादा जयपुर में रहते थे। मैंने दादाजी के पास जाकर कहा – 'दादाजी, मुझे कागज और पेन्सिल चाहिए।' दादाजी ने प्यार से हँसेते हुए कहा - 'मूठ्ठी, तेरे को पढना तो आता नहीं है। तुम कागज पेन्सिल लेकर क्या करोगी ?' मैंने कहा - बस, मेरे को चाहिए। दादाजी ने मेरे को कागज और पेन्सिल दिया। रात्रि को कचहरी होने के बाद सब सो गए मेरी आँख में तो नींद थी ही नहीं। मैं अंदर ही अंदर बाबा को याद कर रही थी। बाबा के बोल मेरे मन में गूँज रहे थे कि - 'जब सब सो जाए तब तुम एकांत में बाबा की याद में कॉपी-पेन लेकर बैठ जाना।' ऐसा सोचते-सोचते मेरा मन थक गया था। मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था कि बाबा मुझे कैसे पढायेगा ? मैं खूब सोचती थी। कमरे में सभी बहनें सोई हुई थी। मैं शान्ति से खडी होकर कागज-पेन लेकर रुकमणी दादीजी की ऑफिस में चली गई। वहाँ बैठकर बाबा को याद करने लगी। थोडे समय के बाद बाबा ने मुझे ट्रान्स में बुला लिया। वतन में पहुँचते ही देखा कि बाबा मेरी ओर आ रहे थे। बाबा के चहरे पर मुस्कान और दृष्टि में प्यार था। मैंने कहा - 'बाबा, मैं बहोत मुंझ रही थी कि आप मुझे कैसे पढायेंगे ?' बाबा बोले - 'बच्ची बाबा तेरे को वतन में रोज पढाने आयेगा फिर तो तुम पढोगी न ?' मैंने कहा - 'जी बाबा'। फिर बाबा ने मेरा हाथ पकडकर कागज पर लिखाना शुरु किया। बाबा ने मुरली में जैसे शब्द आते हैं ऐसे पढाना शुरु किया। जैसे कि शिवबाबा, ब्रह्माबाबा, ध्यान, योग, मम्मा, मधुबन, आत्मा, परमात्मा..... आदि आदि। आठ दिन तक रात्रि को हमारी पढाई चली। शिवबाबा मुझे ट्रान्स में बुलाकर हर रोज १०-१२ मिनट तक पढाते रहे। उसके बाद मैं हर रोज बाबा की मुरली लेकर अकेली बैठती थी और उसे पढती थी। एक दिन मैं काउन्टर पर बैठकर बाबा की मुरली पढ रही थी इतने में किसी बहन ने देखा तो उसने कहा - अरे पगली, तेरे को पढना तो आता नहीं है फिर क्यों मुरली लेकर बैठी हो ? मैं तो मुस्कराती रही। मैंने उसके बाद बाबा को मधुबन एक खत भी लिखा, जिसमें मैंने बाबा का खुब दिल से शुक्रिया अदा किया। बाबा मुझ अनपढ को आपने प्यार से पढाया यह मेरे लिए कितने सौभाग्य की और खुशी की बात है।

4. जानी जाननहार बाबा

जब विश्वकिशोर भाऊ ने अपना पुराना शरीर छोड कर वतन में बाबा की गोद में गए। तब मैं जयपुर में रहती थी उस समय जयुपर सेन्टर पर तेरा दिन तक हर रोज विश्वकिशोर दादाजी के लिए भोग लेकर जाते थे। एक दिन अचानक रूकमणी दादी ने मेरे को कहा - कैलास बहन, आज आपको विश्वकिशोर दादाजी के लिए भोग लेकर जाना है। मैं जल्दी-जल्दी तैयार होकर के भोग लगाने बैठी। जब मैं बाबा के पास वतन में पहुँची तो बाबा ने वतन में बहोत सुंदर नदी दिखाई। उस नदी में तीन नाँव थी एक नाँव नदी के उस पार थी। दूसरी नाँव बिल्कुल खाली थी, जो मेरे नजदीक में खडी थी। तीसरी नाँव बीच में जा रही थी जिसमें विश्वकिशोर दादा और बाबा नाँव में बैठे हुए थे। नाँव नदी के उस ओर जा रही थी और बाबा बहोत ही प्यार से जैसे छोटे बच्चे को प्यार से खिलाते हैं उतना प्यार से बाबा विश्वकिशोर दादा को भोग खिला रहे थे। फिर मेरा घ्यान जो खाली नाँव थी उस ओर भी गया और मैं सोचने लगी यह खाली क्युँ है ? इसमें कौन जायेगा ? यह नाँव कब जायेगी ? मैं अंदर ही अंदर मन में सोच रही थी और बाबा ने मेरे से पूछा - 'बच्ची, आप क्या सोच रही हो ?' मैंने कहा - 'बाबा, मैंने इस नदी में तीन नाँव देखी। एक तो उस किनारे पर खडी है और एक बीच में थी जिसमें आप और विश्वकिशोर दादा थे और एक मेरे पास एकदम खाली है। बाबा इस खाली नाँव में कौन जायेगा ? कब जायेगा ? यह अब तक क्यूँ खडी है ?' तो बाबा ने बोला - 'बच्ची, अगर बाबा इसके बारे में अभी ही बता देंगे तो बहोत बडा नुकसान हो जाएगा इसलिए इस नॉव में कौन जायेगा वो मैं अभी नहीं बताऊँगा। जो उस पार नाँव खडी है उसमें मम्मा बैठी हुई है। दूसरी नाँव जो बीच में जा रही थी उसमें बाबा विश्व किशोर बच्चे को छोडने जा रहे थे और तीसरी नाँव यह एक वर्ष के अंदर-अंदर जायेगी उसमें जो जायेगा वो तेरे को तो क्या, मेरे सभी बच्चों को पता चल जायेगा'। मैंने बाबा को कहा - 'बाबा, आप मेरे को अभी ही बताओ कि इस नाँव में कौन जायेगा ? मैं आज आप से पूछकर ही जाऊँगी।' बाबा ने कहा - 'नहीं बच्ची, यह अभी बताने में कल्याण नहीं है।' ऐसा कहकर बाबा ने मुझे नीचे भेज दिया। एक वर्ष के अंदर हम सभी के प्यारे बाबा अव्यक्त वतनवासी बन गए।

5. बाबा साकार में होते अव्यक्त नजर आते थे

मुझे बाबा ने बडे प्यार से जयपुर भेजा था, मैं कई साल से जयपुर सेन्टर पर रहती थी, और बहोत खुशी मौज से बाबा की सेवा करती थी। लेकिन अचानक ही मेरी शारीरिक तबियत बीगडी। काफी दवाईयाँ की, डॉक्टरों को दिखाया लेकिन दिन-

प्रतिदिन तबियत ज्यादा खराब होती गई। एक दिन अचानक मुझे साकार बाबा ने फोन करके मधुबन बुलाया। बाबा के बुलाने पर मैं मधुबन गई। साकार बाबा को भी बडे स्नेह से मिली। बाबा ने भी बडे ही स्नेह से मिले। मिलने के बाद बाबा ने बहोत अच्छी-अच्छी बातें की फिर मैंने बाबा को बोला कि 9बाबा, मैं आपको एक बात बताना चाहती हूँ" । बाबा ने बोला - 'नहीं बच्ची, अभी नहीं। कल सुबह को जब बाबा पोस्ट लिखकर फ्री हो जाए बाद में बाबा की झोंपडी में मिलने आना।' मैंने बाबा को कहा - 'जी बाबा, मैं जरूर आऊँगी।' मैं बाबा के पास दूसरे दिन झोंपडी में गई तो बाबा ने बोला कि 'बच्ची, बोलो जयपुर में रहते हुए आपके मन में क्या संकल्प चलते हैं? क्या सोचती हो? बाबा को साफ-साफ और सच-सच बता दो।' मैंने बाबा को बोला - 'बाबा, मेरे को एक ही संकल्प चलते, फिरते, उठते, बैठते, खाते, पीते चलता रहता है।' बाबा ने बोला बच्ची, और बताओ, फिर मैंने मेरे मन में चलता हुआ जो संकल्प था वो बाबा को सुनाया। मैंने बाबा को कहा कि 'मुझे बार-बार यही ख्याल आता है कि बाबा आप हमारे साथ बहोत समय नहीं रहने वाले हो। बहोत जल्दी इस शरीर से बाबा आप हम से दूर हो जायेंगे।' ऐसे बोल सुनने के बाद बाबा थोडे समय तक मेरी ओर देखते रहे, फिर बाबा ने कहा - 'नहीं बच्ची, आप और भी स्पष्ट बोलो। देखो, बच्ची जो ख्याल आता है, वो बाबा को साफ-साफ बोल दो।' फिर बाबा को बोला - बाबा, मैं कैसे बोलुं, बाबा ने कहा - 'देखो बच्ची, बाबा को तो सबकुछ बता सकते है ना? बच्ची, बाबा पूछ रहे है, तो जो है, जैसा है वो संकल्प बाबा को बता दो।' बाबा के बहोत कहने पर मैंने बाबा को बोला - 'बाबा, मैं जब भी योग में बैठती हूँ तो मुझे यही ख्याल आता है कि आप यह शरीर छोडकर चले जायेंगे।' तो बाबा ने तुरंत ही मेरे को कहा - 'बच्ची, पता है यह संकल्प तेरे को क्युँ आता है? देखो, मेरे कितने सारे बच्चे है उनको ऐसा संकल्प नहीं आता है, सिर्फ तेरे को ही आता है। तो बच्ची, तेरा योग अच्छा नहीं है ना, इसलिए यह संकल्प तेरे को आता है। अभी बाबा को बता दिया ना अब निर्संकल्प हो जाओ। अब आपको यह संकल्प नहीं आयेगा। बच्ची, अब विशेष बाबा की याद में रहना और जो भी संकल्प आपने अपने बाबा को सुनाये वो दो-तीन मास और किसी को भी नहीं सुनाना और विशेष बाबा को याद करते रहना।' बाबा ने ऐसा कहकर मेरी बुद्धि को एकदम निर्संकल्प बना दिया। फिर **बाबा ने बडे प्यार से कहा - 'बच्ची, बाबा के पास वतन में जाकर आओ, बाबा को उपर मेरी याद देना और देखकर आना कि मेरे में और उपर वाले बाबा में क्या फर्क है।'** मैं बाबा के पास गई। बाबा को मिली फिर जब नीचे आई तो साकार बाबा ने मेरे से पूछा - 'बच्ची, बाबा को देखा?' मैंने कहा 'जी बाबा।' बाबा ने बोला - बाबा को याद दी थी? मैंने कहा - 'जी बाबा, बाबा को याद दी थी।' **बाबा ने बोला - 'बच्ची, उपर वाले बाबा जिसको तुम वतन में देखती हो वो कैसे थे?' मैंने बोला - बाबा, आप ही उपर थे।** बाबा ने बोला - 'बच्ची, मैं तो ध्यान में जाता ही नहीं हूँ, मैं तो यहाँ का यहाँ ही था। उपर वाले बाबा और मैं अलग-अलग है, वो तो मेरी सम्पूर्ण स्टेज है।' फिर **मैंने बाबा को बोला - 'बाबा, उपर में और कोई अलग बाबा नहीं है, बाबा आप ही वतन में थे।'** बाबा समझ गये कि मेरे में और उपर वाले बाबा में बच्ची को कुछ अंतर नहीं दिखाई दे रहा है। हो सकता है, बाबा की सम्पूर्ण स्टेज में और बाबा में कुछ अंतर होगा पर मुझे कुछ पता नहीं चल रहा था। यह संदेश बाबा के अव्यक्त होने से दो-तीन महिने पहले ही बाबा ने पूछवाया था। मैं लगभग बाबा के साथ १८-२० दिन साथ-साथ रही बाबा ने बहोत ही अच्छी तरह से खिलाया, पिलाया, बहलाया, घुमाया फिर बडे प्यार से बाबा ने मेरे को जयपुर में भेज दिया। उसके दो महिने के बाद ही बाबा अव्यक्त हो गये। लेकिन मुझे क्या पता था कि वो संकल्प मेरा सच्चा ही था लेकिन बाबा ने मुझे निर्संकल्प बनाने के लिए बडी युक्ति से समझा दिया। और मैं सच मान गई कि सचमुच मेरा योग अच्छा नहीं लगता होगा। यही तो बाबा की विशेषता थी।

6. वो दिन आज भी हमें याद है

मधुबन से १८ जनवरी को रात्रि को बडी दादीजी का रुकमणी दादीजी पर फोन आया। बडी दादीजी ने बताया हमारे मीठे-प्यारे बाबा साकारी सो आकारी हो गए हैं जिसको भी मधुबन आना हो वो सभी आ जाएँ। लेकिन आकारी और साकारी की बातें उस समय उतनी समझ में नहीं आती थी। रुकमणी दादीजी ने कहा कि कैलास बहन, आप अभी ही बाबा के पास वतन में जाओ और यह जो फोन आया है यह सही है? जो यह समाचार सुना है यह सच्चा है? यह आप बाबा से पूछ कर आओ। मै बाबा की याद में बैठी बाबा को याद करते-करते मैं वतन में पहुँची तो मुझे न तो बाबा-मम्मा मिले, न ही वतन दिखाई दिया। वतन में अंधेरा ही अंधेरा था। रात ही रात थी। और कुछ वतन में दिखाई नहीं देता था तो मैं वापस आ गई। जैसे ही मैं वापस पहुँची तो रुकमणी दादीजी ने मेरे को अपने पास बिठाया और पूछा - बोलो कैलास बहन, बाबा मिले? बाबा ने क्या बताया? मेरे को तो कुछ समझ में आ नहीं रहा था। मैंने दादी को कहा - 'दादी उपर वतन नहीं है। वतन भी नहीं मिला और बाबा-मम्मा भी नहीं मिले। वतन में तो रात ही रात दिखाई देती है, अंधेरा ही अंधेरा है।' दादियाँ तो वतन के मेसेज को समझ जाती थी। उपर वतन नहीं है इसका मतलब

बाबा नहीं रहे। वतन में कभी रात नहीं होती है। तुरंत ही रुकमणी दादी और सभी भाई-बहनें मधुबन जाने के लिए निकल पडे। और हम दो बहनें सेन्टर पर रुके। हम हर रोज बाबा को भोग लगाते लेकिन बाबा भोग स्वीकार नहीं करता था। तो हम सब भी खाना नहीं खाते थे। तीन दिन तक हम सभी ने भी खाना नहीं खाया। जब हम लोग दो-तीन दिन से खाना नहीं खाते थे तो हमारे साथ एक दादाजी थे। दादाजी भी हमें प्यार से खाना खाने के लिए समझाते थे लेकिन हमने खाना नहीं खाया। दादाजी ने मधुबन फोन किया और रुकमणी दादीजी से बात की। दादीजी, ये बहनें भी दो-तीन रोज से कुछ खा-पी रही नहीं है। ये कह रही है बाबा भोग स्वीकार नहीं करता है तो हम कैसे खाना खायेंगे ? दादीजी ने कहा बहनों को बोल दो बाबा के सामने सिर्फ भोग रखकर ले लेवें, और खाना खा लेवें। क्योंकि मधुबन में भी अभी खाना नहीं बन रहा है सिर्फ चाय-पानी सभी पी रहे हैं। वतन से संदेश में बाबा ने भी यही कहा है कि जब तक बच्चे खाना नहीं खायेंगे तब तक बाबा भी कैसे भोग स्वीकार करेगा। सभी बच्चों को बाबा की बहोत याद आ रही है। सभी बच्चे बाबा की याद में डूबे हुए हैं क्योंकि हम बच्चों का प्यारा बाबा अब साकार में नहीं रहे है। बाबा अपने सारे व्यक्त बंधन छोड चुके है। बाबा की अंतिम क्रिया अभी तक नहीं हुई हैं, इसलिए बाबा के सामने सिर्फ भोग रखकर के खाना खा लेवें। बाबा के साकार देह को तीन दिन तक मधुबन में रखा गया था। बाबा की अंतिम क्रिया कहाँ पर करनी उसके लिए मधुबन में सरकार के साथ बातचीत चल रही थी। सरकार से परमीशन मिलने के बाद अभी जहाँ शान्ति स्तंभ है वहाँ मीठे-प्यारे बाबा की अंतिम क्रिया की गई। शान्ति का स्तंभ आज भी हमें साकार पिता की याद दिलाता है। बचपन से लेकर बाबा के संग बिताये हुए दिन, यादें स्मृतिपटल पर उभर आती हैं। शान्ति स्तंभ आज भी सारे विश्व को सुख-शान्ति-पवित्रता की सकाश दे रहा है। बाबा के अंतिम दिन के बोल भी जब बाबा ने लास्ट मुरली चलाई थी, बाबा की तबियत ठीक नहीं थी फिर भी मुरली चलाने के बाद बाबा जब दरवाजे के पास पहुँचे तो बाबा बच्चों से इस साकार दुनियाा से अंतिम विदाई लेने से पहले कहा - **'मीठे बच्चे, निराकारी भव:, निर्विकारी भव:, निरअहंकारी भव:।'**

मातेश्वरी जी की शारीरिक यात्रा और देह मुक्ति

- बी.के. शीलइन्द्रा बहन, मुम्बई

ब्रह्माबाबा और मातेश्वरी सरस्वती जी द्वारा ज्ञानमुरली तथा ज्ञान विस्तार के सुखद साज सुनते हुए यज्ञ-वत्स, अतिन्द्रिय सुख में रमण करते हुए, अपने आध्यात्मिक पथ पर आगे बढ़ रहे थे। अनायास ही मातेश्वरीजी को तन की एक विकट परीक्षा ने आ धेरा। डॉक्टरों के परामर्श से और बाबा के निर्देशानुसार उन्हें तुरंत ही कानपूर से मुम्बई के एक प्रसिद्ध अस्पताल में औषधि उपचार के लिये ले जाया गया। डॉक्टर लोगों ने कहा कि - 'यह व्याधि विकट मालूम होती है परंतु परीक्षण करने पर पूरा मालूम होगा कि वास्तव में यह क्या है ?' कुछ भी हो परंतु तब भी माँ की आध्यात्मिक स्थिति पूर्ववत् आनन्दमय और हर्ष-युक्त ही थी। वे बडी से बडी शारीरिक व्यधि को भी एक छोटी-मोटी परीक्षा मानते हुए, उसमें से शत-प्रतिशत सफलता सहित पारित होने के लिये पूरी तरह तैयार थी।

1. विकट रोगी की परिस्थिति में स्थिति कैसी हों?

मातेश्वरी जी तो सदा अपनी ज्ञान वीणा के द्वारा कहा भी करती थी कि - 'ज्ञान एवं योग के इस मार्ग पर चलते हुए, मंजिल पर पहुँचने से पहले, कई परीक्षायें आयेंगी जिन्हें हमें पार करना होगा। हमें चाहिए कि उन्हें अपने ही पूर्व कर्मो का हिसाब-किताब माने और इस दृष्टि-कोण के द्वारा हम हर्षोल्लास को कायम रखते हुए उन्हें पार कर डालें। परंतु यह तभी सम्भव होगा जब हम इस ज्ञान बिन्दु को अपनी बुद्धि में धारण किये रहेंगे कि यह बीमारी एक प्रकार से हमारा पुराना कर्म खाता चुक्त करने का एक साधन मात्र है।' माँ कहती - 'जब किसी का ऋण चुकता है तो तब उसे तो खुशी ही होती है और हल्का-पन भी महसूस होता है। इसी प्रकार आपको भी ऐसा अनुभव होना चाहिए कि हम ऋण मुक्त हो रहे हैं।' कभी वह समझाती कि - 'रोग के सामने घबराने की जरूरत नहीं बल्कि इस अवस्था में तो याद करना चाहिये कि अन्य सब कर्मो से फारिग कराके हमें शिवबाबा की निरंतर स्मृति में स्थित होकर आनन्द और शक्ति प्राप्त करने के लिये यह रोग तो एक निमित्त कारण बना है, वरना तो मनुष्य कभी फुर्सत पाता ही नहीं है। अत: इस रोग की बलिहारी है कि इसने हमें प्रभु मिलन का सुख लूटने के लिये हमें फारिग करा दिया है। अत: इस अवस्था को योग द्वारा अविनाशी कमाई के लिये मिला सुअवसर मानकर ईश्वरीय लगन में मगन होने के पुरुषार्थ में लग जाना चाहिये । दु:ख देने वाली परिस्थिति में तो प्रभु की याद स्वत: ही आती है।'

मातेश्वरी जी ये भी कहा करती थी कि - 'हम यह तन तो अब प्रभु को दे चुके हैं, अत: इसमें हमारा ममत्व अथवा हमारी आसक्ति तो हो ही नहीं सकती। और अब जब कि हम जान चुके हैं कि शरीर हमारा रथ है और हम इस पर रथवान है, तो हम साक्षी

होकर ही इस रथ की देख-रेख अथवा सम्भाल करनी चाहिये। इसके कारण से कभी भी लेश मात्र भी दु:ख की लहर हमारे मन में अथवा हमारे चेहरे पर नहीं आनी चाहिये।' मातेश्वरी जी ने कई बार समझाया था कि - 'आध्यात्मिक पथ पर हर एक के सामने पहले या पीछे ये परीक्षा आती अवश्य है और जितना-जितना हम आध्यात्मिक क्षेत्र में रुस्तम के समान बडे योद्धा बनते हैं, उतनी-उतनी ये परीक्षाएँ भी रुस्तम जैसे ही बलवान रूप में हमारे सामने आती है। अत: ये तो हमारे पुरुषार्थ की तीव्रता को प्रतिबिम्बित करती है और इनसे हमें अपनी स्थिति का ज्ञान है। इस लिये इनसे घबराने की जरूरत नहीं।'

2. बाबा की वाणियों में अग्रिम शिक्षा

शिवबाबा ने ब्रह्माबाबा द्वारा भी ज्ञान के ये गहन तत्त्व अनेक प्रकार से समझाये थे। मानो कि वह हरेक को पहले ही से इस प्रकार की परिस्थिति से भी पार होने के लिये मानसिक रूप से तैयार कर रहे थे। बाबा ये कहा करते थे कि 'अब आप लोग अपने इस उच्च आध्यात्मिक पुरुषार्थ के द्वारा मानव से देवता बनने का पुरुषार्थ कर रहे हो जिसका अर्थ यह होता है कि अब आप सम्पूर्ण पवित्रता के द्वारा सदा निरोगी, सदा शान्त, सदा सुखपूर्ण अवस्था को प्राप्त कर लेंगे। अत: वे रोग-शोक, इत्यादि आप से गोया अन्तिम विदाई लेने के लिये आते हैं। आप इसी दृष्टि से इन्हें देखिये, इन्हें सलाम करिये। और इस हर्ष में रहिये कि इसके बाद तो हम इनसे मुक्त हो जायेंगे और फिर जब काया मिलेगी भी तो देवताओं के समान सदा निरोगी, कंचन समान काया मिलेगी, जो सबसे सुन्दर होगी और जिसे काल, दुर्घटना, रोग इत्यादि आतंकित नहीं कर सकेंगे।' अत: इस प्रकार के ज्ञान के अस्त्रों-शस्त्रों से सुसज्जित मातेश्वरी सरस्वती जी सदा प्रसन्न मुद्रा में दिखाई देती। उनका चेहरा सदा एक ताजे फूल की तरह खिला हुआ दिखाई देता। उनके मुख-मण्डल पर ऐसी आभा बनी रहती है कि बिना बताये कोई भी न कह सकता कि उनका शरीर रोगी है। माँ तो इस परीक्षा पत्र को हल्के रूप में लेते हुए इतना मानसिक सन्तुलन बनाये हुए थी कि जो सब यज्ञ-वत्सों के सामने एक अनुकरणीय एवं उज्वल उदाहरण था और सामान्य लोगों के लिये तथा डॉक्टरों के लिए एक चमत्कार था।

3. यह ईश्वरीय संस्था क्या है?

अस्पताल में कानों-कान अन्य लोगों को यह खबर हो गई थी कि इस अस्पताल में एक अलौकिक शक्ति समपन्न पेशन्ट भी है। उनसे मिलने जब श्वेत वस्त्रधारी ब्रह्माकुमारीयाँ तथा ब्रह्माकुमार आते थे तो अस्पताल में आने-जाने वाले तथा वहाँ रहने वाले लोग ये जानने के लिए सदा उत्सुक रहते थे कि - 'आखिर यह ईश्वरीय संस्था क्या है?' उन सफेद वस्त्रों को तथा हर्षित चेहरों को देखकर वे समझते थे कि ये अवश्य ही कोई ऐसे लोग हैं जिन्होंने अपने जीवन में किसी अनुशासन और विधि-विधान को अपनाया है तथा जिन्होंने पवित्रता और शान्ति को पाया हे। इसलिए वे बडी उत्कंठा से अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करते। उन्हें परचिय भी दिया जाता और साथ में साहित्य भी। गोया माँ के वहाँ जाने से कितनों ही की ईश्वरीय सेवा कि निमित्त बनी हुई थी। कुछ दिन के बाद लोग माँ से मिलने आने लगे। वे माँ के ज्ञान युक्त वचनों को सुनकर गद्-गद् होते तथा उनके कमल हस्तों से प्रसाद प्राप्त करते। इधर डॉक्टरों ने भी जो औषधि - इलाज करना था सो कर दिया। लगा कि माँ स्वस्थ हो गई है - वे स्व में स्थित तो सदा रहती ही थी।

4. माँ से सभी प्रभावित, सभी संतुष्ट

अब माँ फिर से पूरी तरह ईश्वरीय सेवा में जुट गयी। सेवा कार्य में वे सदा अथक तो थी ही। वे मुम्बई से बैंगलोर गयी, बैंगलोर से फिर मुम्बई आयी तथा मधुबन एवं अन्य कई स्थानों पर भी उन्होंने ज्ञान का शंख नाद किया। उनकी वाणी में बडा ओज और उतना ही माधुर्य था। इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के विरोधी भी जब उनके सामने आते तो हत-प्रभ रह जाते। वे उनके अपार वात्सल्य, उनकी अमिट हर्ष-मुद्रा उनके पवित्रता पूर्ण व्यक्तित्व, उनके दिव्य तेज, ज्ञान के समझाने के उनके अति सरल एवं सरस तरीके और माँ-बाप के सम्बन्ध की अनुभूति से इतने प्रभावित हो जाते कि सहसा उनके मुख से ये शब्द निकलते कि - 'हम तो ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के बारे में कई आक्षेप सुन रहे थे। परंतु अब मातेश्वरी जी के जीवन की झलक को देखकर तो हमें बहुत ही प्रसन्नता हुई है। इनका जीवन तो सचमुच महान है। हमें यहाँ आकर ऐसा लगा है कि सचमुच ये हमारे आत्मन की माँ है। इनकी ज्ञान की वाणी माँ की मीठी लोरी है, नहीं-नहीं वो सुषुप्त आत्मा को जगा देने वाली, माँ के प्यारे-प्यारे स्वर हैं।' कोई कहता - 'मुझे तो ऐसा लग रहा था कि जिस वैष्णों देवी का मैं पूजारी हूँ, आज मेरे नैनों ने साक्षात् उस देवी को इस धरा पर देखा है।' कोई-कोई तो भरी सभा में एक छोटे बच्चे की तरह - माँ-माँ, कहने लगता और माँ के प्रति श्रद्धा एवं प्यार से उसके नैन भी गीले हो जाते। तब माँ कहती - 'हाँ, बच्चे, अब तो सभी आन मिले हैं। हम सभी उस देवी-देवता घराने के ही तो हैं जो स्वयं को भूल गये थे और अपने कर्म खाते को साथ लिए हुए बिछुडकर कोई कहीं और कोई कहीं चले गये थे। अब तो शिवबाबा ने आकर आत्मा की और जन्म-जन्मांतर के पार्ट की पहचान दी

है और हमारे लिए पुरुषार्थ का फल भी हमें प्रत्यक्ष कराया है। अत: अब तो अतिन्द्रिय सुख प्राप्त करने तथा ज्ञान एवं योग द्वारा प्रभु मिलन मनाने एवं पवित्रता का सच्चा सुख पाने का मौसम है....।'

5. माँ में सम्पूर्णता के चिह्न

सचमुच, उन दिनों माँ का व्यक्तित्व आध्यात्म की पराकाष्टा पर पहुँचा हुआ भासित होता था। उनकी ज्ञान की गहराई, योग की ज्वाला, दिव्य गुणों की शीतलता और ईश्वरीय सेवा की सूझ, स्फूर्ति और रीति, माँ की सम्पूर्णता की ओर संकेत कर रही थी परंतु किसी के मन में ये न आया था कि वे सम्पूर्णता के चिह्न कुछ भावी वृतान्तों के संकेतक भी हैं।

6. चिकित्सकों की घोषणा

सभी वत्स माँ की उच्च स्थिति से प्रेरणा पाकर जीवन को दिव्य बनाने तथा दूसरों को भी ईश्वरीय संदेश देने के अलौकिक कार्य में, माँ को अपनी प्रमुख सेनानी मानकर, माया पर विजय पाते हुए, पवित्रता की स्थापना रूपी मंजिल की ओर बढ़ रहे थे। अचानक मातेश्वरी जी के तन में वह पुरानी व्याधि फिर से प्रगट हो गई और वो दिनों-दिन उग्र रूप धारण करने लगी। चिकित्सकों ने जब शरीर का निरीक्षण किया तो वे निराशा भरे शब्दों में बोले कि - 'अब तो यह व्याधि असाध्य हो गयी हैं।' उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि - 'मातेश्वरी जी अब कुछ ही दिनों की मेहमान हैं।'

7. माँ की अभय एवं निश्चिंत अवस्था

इधर स्वयं शिवबाबा से जब माँ के बारे में पूछा गया तो उन्होंने भी कहा कि - 'अब इस स्थूल शरीर में माँ का पार्ट शीघ्र ही पूरा होने वाला है।' बाबा ने यह भी कह दिया कि - 'भले ही ये बात माँ को बता दी जाय और कि माँ की स्थिति इतनी ऊँच है कि इस बात को सुनकर भी उनकी स्थिति में रंच भी अंतर नहीं आएगा।' हुआ भी ऐसे ही माँ को न किसी प्रकार की चिन्ता थी, न उनके मन में किसी प्रकार का भय। उनके मन में कोई आशा-तृष्णा तो थी ही नहीं और वे तो योग द्वारा सम्पूर्णता की दहलीज पर पहुँच ही चुकी थी। अत: वह तो हर हाल में खुश ही थी।

8. विदेही अवस्था और प्रेरणा दायक नियमित जीवन

अब मुम्बई से प्रभु प्रेरणा एवं डॉक्टरों के परामर्श के अनुसार मातेश्वरी जी को मधुबन में लाया गया था। माँ मधुबन में जिस कमरे में निवास कर रही थी, उस कमरे में एक एम्पलीफायर लगा हुआ था। जिसके द्वारा वे नित्य प्रति प्रजापिता ब्रह्मा के मुखारविन्द द्वारा शिवबाबा की मुरली सुना करती थी। मातेश्वरी जी ने मुरली सुनने में एक भी ना नहीं किया होगा। वे अपने व्यावहारिक जीवन में सदा ही दूसरों के लिए प्रेरणा और शिक्षा का स्त्रोत थी और इस प्रकार प्रतिदिन नियमित ज्ञान श्रवण की उनकी अचूक टेव भी बडी प्रेरणादायक थी। डॉक्टर लोग जिसे असह्य कष्ट मानते थे, उसे वे शान्ति और खुशी से सहन कर रही थी। यद्यपि शरीर को अपने शिकंजे में लिये हुए थी तथापि मातेश्वरी जी साक्षी अवस्था में स्थित थी। जिससे ये स्पष्ट था कि वे विदेही अथवा अशरीरी स्थिति में थी। व्याधि का शरीर पर काबू होते हुए भी अपने मन पर तो मातेश्वरी जी का अपना ही अधिकार था।

9. बाबा की गम्भीरता और दिव्य कार्य विधि

ब्रह्माबाबा को भी शिवबाबा ने ये संदेश दिया था कि १५ दिन में मातेश्वरी जी कर्मभोग से मुक्त होने वाली हैं। परंतु यह पेशगी समाचार पाकर भी बाबा के चेहरे से किसी भी वत्स को कोई ऐसी सूचना नहीं मिलती थी। कर्तव्य पूर्ति के तौर पर बाबा जब सेवा-केन्दों पर उपस्थित ब्रह्माकुमारियों व ब्रह्माकुमारों को पत्र लिखते थे तो वे ये लिख भी दिया करते थे कि - 'मधुबन में आकर बाबा से मिल जाओ और माँ का भी मुख देख जाओ।' परंतु उनकी रीति एवं विधि ऐसी थी जिससे दिव्य वातावरण में हलचल या चिन्ता की लहर व्याप्त नहीं थी। बाबा ने पूर्णतया कर्तव्य भी निभाया परंतु अंतर्मुखता, गम्भीरता तथा उच्च आत्मिक स्थिति को कभी नहीं छोडा।

कुछेक संदेश पुत्रियों ने भी समाचार ऐसे साक्षात्कार किये थे जिनसे वे समझ गयी थी कि - 'अब मातेश्वरी जी शीघ्र ही इस शरीर से विदा लेंगी।' उदाहरण के तौर पर ब्रह्माकुमारी संदेशी ने संदेश लाया कि - 'माँ तीन दिन में मुक्त हो जायेगी।' परंतु सामन्यत: यज्ञ-वत्स यही समझते थे कि माँ ठीक हो रही हैं और सम्भवत: थोडे समय के बाद वे रोग-मुक्त अर्थात् स्वस्थ हो जायेगी।

10. व्याधि और शारीरिक उपाधि से विदा की घडी निकट

आज बृहस्पतिवार था जिसे सद्-गुरुवार भी कहा जाता है। ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणी ने मुम्बई में अमृतवेले योगाभ्यास में देखा कि - 'मातेश्वरी जी को अधिक तकलीफ है और वह जा रही है। यह देखकर उनका किंचित विचार चला और उन्होंने मधुबन में फोन पर समाचार पूछा। तब उन्हें भ्राता: विश्वकिशोर जी ने कहा कि माँ तो कहती है कि मैं ठीक हूँ परंतु मैं समझता हूँ कि व्याधि उग्र रूप ले गई है। आप आयें तो अपने साथ ऑक्सिजन लेते आयें।' इससे ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणी जी ने समझा कि अवश्य ही स्थिति गम्भीर

है। उससे एक दिन पहले, सायंकाल को बाबा भी मातेश्वरी जी को काफी देर योग-दृष्टि देते रहे थे और आज भी बाबा बार-बार माँ के कमरे में जाते थे और योग द्वारा मातेश्वरी जी को एक प्रकार से मदद दे रहे थे। बाबा ब्रह्माकुमारी सन्तरी जी को भी बार-बार भेजते थे कि - 'माँ को देखकर आओ।' उस दिन ब्रह्माकुमारी पुष्पशान्ता जी ने भी मुम्बई में ध्यानावस्था में माँ को एक सफेद चादर में लिपटे हुए देखा था।

11. यज्ञ निवासियों से मुलाकात

आज बृहस्पतिवार तो था ही। बृहस्पतिवार को मातेश्वरी जी वत्सों से मिला करती थी और उन्हें 'टोली' (प्रसाद) दिया करती थी। इस बार भी सभी वत्स एक पंक्ति बाँधे, एक दूसरे के बाद माँ के वरद हाथों से स्नेह और पवित्रता भरी टोली लेने आ रहे थे। उन्हीं दिनों मधुबन के बगीचे में अँगूरों के गुच्छे उतारे गये थे। बाबा मातेश्वरी जी के हाथ में अँगूर देते जा रहे थे और मातेश्वरी जी सबको योग दृष्टि से देखते, मुस्कराते और प्यार करते अँगूर देती जा रही थी। वत्सों के बाद, यज्ञ के माली, मिस्त्री इत्यादि सभी ने भी आज माँ के हाथों से प्रसाद पाया। पहले तो सदा बाबा भी टोली दिया करते और माँ भी परंतु आज बाबा माँ के हाथ में दे रहे थे और माँ स्वयं वत्सों को टोली देती जा रही थी। अवश्य ही इसमें कोई रहस्य समाया हुआ था।

उस दिन मधुबन में सेवाकेन्द्रों से काफी लोग आकर रहे हुए थे। अत: 'टोली' लेने वालों की पंक्ति भी बहुत बडी थी और सबको टोली प्रसाद देने-देने में ही काफी समय लग गया। परंतु माँ की आकृति-प्रकृति से और उनके कार्य-कलाप से ये बिल्कुल भी भासित नहीं होता था कि - 'आज विश्व इतिहास में एक बहुत बडी घटना होने वाली है। बल्कि उनका मुख आज बहुत ही क्रान्तियुक्त दिखाई देता था।' सभी लोग माँ से मिलकर और उनसे प्रसाद लेकर ही अपने-अपने स्थान की ओर प्रस्थान करने लगे। माँ में आत्म-बल, मनोबल, अथवा नियंत्रण शक्ति इतनी जबरदस्त थी कि शरीर के असह्य कष्ट को वह ऐसे तो छिपा लेती थी कि जैसे कुछ हुआ ही न हो। घंटों तक वह योग युक्त अवस्था में स्थिर रहकर सभी को योग-युक्त शक्ति का वरदान देती रही और मातृत्व मौन स्नेह भी व्याप्त करती रही।

12. अन्तिम विदा

अब मध्यानोत्तर काल था। सब लोग अपना भोजन इत्यादि भी प्राप्त कर चुके थे। यज्ञ का दैनिक कार्य भी प्राय: हो चुका था। तब मातेश्वरी जी को ऐसा महसूस होने लगा कि अब अन्तिम विदा लेने का समय आ पहुँचा है। इस विश्वनाटक में से कैसी अद्‌भूत व्यवस्था है कि माँ सबके दिव्य एवं विधिवत मुलाकात तो कर ही चुकी थी और अब उनका आत्मन विश्व की व्यापक सेवा के लिए अशरीरी होने को आतुर हो रहा था। मातेश्वरी जी में कुछ इस प्रकार के चिह्न प्रगट हेते देखकर तुरंत ही बाबा को सूचना दी गई और बाबा क्षण भर में ही मातेश्वरी जी के पास पहुँच कर उन्हें अत्यंत प्रबल योग शक्ति देने लगे। आखिर भावी को जो मंजूर था, वही हुआ। मातेश्वरी जी अपनी काया-कलेवर को त्याग कर देह मुक्त हो गयी। इस प्रकार विश्व के इतिहास में '२४ जून १९६५' को एक अन्यंत महान आत्मा का जगदम्बा सरस्वती नाम से सर्व ज्ञात कर्तव्य साकार रूप में समाप्त हो गया और माँ के मुखारविन्द से जो मधुर, गहन अनमोल ज्ञान के स्वर निकलते रहे थे, वे यादगार बन गये। और माँ इस सृष्टि मंच पर अपने दिव्य कर्तव्यों की एक ऐसी अमिट छाप डाल गयी कि जिसके कारण वह अमर हो गयी।

13. सभी यज्ञ वत्सों को सूचना देने में बाबा की दिव्य युक्ति

सभी यज्ञ वत्सों को तो क्षणांश में ही यह समाचार मिल गया। अन्य सभी सेवाकेन्द्रों पर भी तार, टेलिफोन इत्यादि द्वारा यह समाचार दे दिया गया परंतु बाबा का तो हर एक कर्तव्य सदा अलौकिक ही होता था और इस द्वारा सबकी उन्नति ही होती थी। अत: जब यह समाचार सबको दिया गया, तब साथ ही साथ सभी को यह भी कह दिया गया कि शिवबाबा ने मानो सभी के लिये यह एक प्रैक्टिकल परीक्षा का पश्न-मात्र रखा है, जिसमें सभी को उत्तीर्ण होने का भरसक प्रयत्न करना है। बाबा ने ये भी कहलवा दिया कि 'यदि सभी बच्चे, अखण्ड योग-युक्त अवस्था में रहेंगे और मन में कोई भी सांसारिक या दु:खपूर्ण संकल्प विकल्प नहीं लायेंगे तो हो सकता है कि शिवबाबा मातेश्वरी जी के आत्मन् को इस रथ में वापिस भेज दें।' अब माँ के शरीर रूपी रथ को योग हाल में लाया गया था।

बाबा के उपरोक्त कथन को सुनकर सभी यज्ञ-वत्स उसी हाल में अचल योगावस्था में स्थित होने के संकल्प से योग कक्ष में जाकर बैठ गये। माँ से सभी का अपार स्नेह तो था ही। अत: सभी का प्रयत्न यही था कि आज हमारे योग की सहज समाधि ऐसी शक्तिशाली और स्थिर हो कि शिवबाबा हमारी प्यारी माँ को हम नन्हें-मुन्ने बच्चों के बीच फिर से भेज दें। सभी सेवाकेन्द्रों पर जब ये समाचार पहुँचा था तो वहाँ का वातावरण अव्यक्त हो गया था और सभी सामूहिक रूप से योग की उच्च अवस्था में स्थित होने में लग

गये थे। कहीं भी ऐसी कोई हलचल, कोई शोक, कोई बोल, मृत्युलोक की इस घटना का कोई चिह्न, किसी अत्यंत स्नेही के देहावसान के कारण कोई विलाप, मुख पर अपनी अति प्यारी माँ से बिछुडने की कोई रेखा, नैनों में कोई अनमोल चीज खो बैठने सम्बन्धी कोई मौन इशारे, कुछ भी तो नहीं था क्योंकि ये सभी उस योग की महौर्मि में लीन हो गए थे अथवा योग ने इनका हरण कर लिया था और यही तो बाबा की युक्ति थी। इस युक्ति द्वारा ही तो बाबा बच्चों को इस परिस्थिति से पार ले जाना चाहते थे। देखिये तो, वातावरण में कोई भी ऐसी लहर नहीं थी, जो सांसारिक वृत्ति वाले लोगों के यहाँ ऐसी घटना घटने से होती। गोया बाबा ने ये प्रैक्टिकल शिक्षा दी कि किसी स्नेही अथवा निकट सम्बन्धी के शरीर छोडने पर हमारी अवस्था कैसी होनी चाहिए।

14. पहले ही से वत्सों को तैयार करना

वास्तव में, बाबा तो पिछले डेढ-दो वर्षो से ही वत्सों को अप्रत्यक्ष रूप से तैयार करते चले आ रहे थे। बाबा कहते - 'बच्चे, हम सबकी माता और हमारे पिता तो शिव ही हैं। वह हमारी चमकीली माँ हैं। उस जैसी तो दूसरी कोई माँ होती ही नहीं। इसलिए वत्सों, देहधारीयों से बुद्धियोग हटाकर एक ही से लगाओ।' कभी बाबा कहते - 'बच्चों, साकार रूप में आपकी माँ तो ये ब्रह्मा ही है, क्योंकि शिवबाबा, जो आत्माओं का पिता है, इसी के ही मुख से ज्ञान देकर आपको यह मरजीवा जन्म देता है। अत: यद्यपि ब्रह्मा शारीरिक दृष्टिकोण से पुरुष तनधारी है तथापि ज्ञान के इस सूक्ष्म दष्टिकोण से वह आपकी माता हैं और आप सभी उस के मुख वंशज ब्राह्मण बच्चे हैं। क्योंकि अब माता गुरु का सिलसिला जारी होता है और अब माताओं ही को आगे रखना है तथा इस ज्ञान यज्ञ में मातायें अधिक हैं, अत: उनको संभालने के लिए तथा यज्ञ के कार्य का सुचारु रूप से वहन करने के लिए सरस्वती जी को निमित्त बनाया गया है। इसलिए ही वे यज्ञ की माता हैं क्योंकि वे आपको ज्ञान की मीठी लोरी देती हैं और यज्ञ माता के तौर पर इसे चलाती हैं।'

कभी बाबा ये भी कहते - 'बच्चों, अब जब आपको त्रिमूर्ति, त्रिकालदर्शी, त्रिलोकीनाथ, स्वर्गिक राज्यभाग्य के देने वाले तथा दिव्य बुद्धि और दिव्य दृष्टि का वरदान देने वाले शिवबाबा मिल गये हैं तो आपको सदा ही खुश रहना चाहिए और अपने सौ-भाग्य को देखकर हर्ष से सराबोर रहना चाहिये।' यहाँ तक कि, 'चाहे जैसी भी घटना घटे, आपकी खुशी का पारा नहीं उतरना चाहिये।' बच्चे, इस ज्ञान और योग के फल स्वरूप आपको अतिन्द्रिय सुख से फूला नहीं समाना चाहिये। यहाँ तक कि - 'यदि कुछ ऐसा हो जाय जो न आपके मन में था न चित्त में, तो भी आपके आनंद की पराकाष्टा बनी रहनी चाहिये।' इसलिए याद रखो, 'बच्चे कि अम्मा मरे तो भी हलवा खाओ और अब्बा मरे तो भी हलवा खाओ।' क्योंकि अब तो आपको शिवबाबा मिल गए हैं, जो अमर पिता है और जिनसे ही हमारे सर्व सम्बन्ध हैं। यदि अन्य किसी भी देहधारी का देहावसान होने पर कोई जरा भी आँसू बहाएगा तो मानो कि अभी वो देह अभिमानी है और ईश्वरीय पढ़ाई में फेल है।' - तब उस समय बाबा के ये महा-बोल सुनते समय भला कोई क्या समझ सकता था कि आगे चलकर क्या होने वाला है और बाबा की ये वाणी किसलिये चलती है ?

15. बाबा की ज्ञान युक्त, स्नेह युक्त काव्यमयी वाणी

उधर सबके मन में ये उत्सुकता बनी रही कि अब इस विश्वनाटक में आगे कौन-सा दृश्य आता है ? योग के प्रोग्राम के समापन से पहले अमृतवेले ब्रह्माबाबा ने ज्ञान के कई अनमोल रहस्य समझाये। बाबा बोले - 'वत्सो, जो कुछ भी होता है, उसे साक्षी होकर देखते चलो। अपनी बुद्धि की डोरी शिवबाबा के हाथ में दे दो। मैं जानता हूँ कि आप बच्चों को माँ से बहुत प्यार था परंतु माँ मेरी भी तो माँ थी क्योंकि वे तो जगत् अम्बा थी और जगत में तो मैं भी तो सम्मिलित हूँ। देखो, बाबा ने जब इस ज्ञान यज्ञ की स्थापना के समय तन-मन-धन शिवबाबा को समर्पित किया था तब बाबा ने भी स्थूल रूप में इन माताओं के ही सामने तो अपना सब-कुछ रखा था और इनमें माँ तो अग्रगण्य थी। अत: यदि माँ के शरीर के त्याग से किसी को कुछ क्षति का आभास होना चाहिए तो वह तो सबसे अधिक मुझे ही होना चाहिए, विशेषकर इसलिए भी कि वे तो यज्ञ के कार्य को सम्भालने में मुझे अनुपम सहयोग देती थी। परंतु बाबा तो यही सोचता है कि इस ज्ञान-यज्ञ का रचयिता तो शिवबाबा ही हैं और इसलिये वह कल्याणकारी परमपिता हमें जैसे चलायेगा हम वैसे ही चलेंगे।'

फिर पिताश्रीजी ने शिवबाबा को सम्बोधित करके अपने नैनों और मुख को ऊपर करते हुए, मानो सब वत्सों की ओर से कहा - 'शिवबाबा, ओ मीठे शिवबाबा। हमारी माँ को वापस भेज दो न बाबा ! ये कैसा विचित्र ड्रामा है ! कल्प के बाद मिली हमारी ये माँ भी हमसे छीन ली गई। बाबा, अभी तो महाविनाश में कुछ समय पडा ही है। अत: इस संगमयुग में अभी तो माँ का पार्ट और कुछ समय चलना ही चाहिये।' बाबा इस प्रकार से बडे अलौकिक स्वर से एवं आत्मिक स्मृति से शिवबाबा के दरबार में आवेदन-निवेदन कर रहे थे मानो उन द्वारा सब वत्सों के मन की पुकार अति उत्तम शब्दों में शिवबाबा के दरबार में सुनाई जा रही थी। अपने अत्यंत निकटतम एवं अलौकिक साथी को, यज्ञ के अपरितम कार्य में एक अथक सहयोगी को, अपनी इस आध्यात्मिक सेना की एक अत्यंत कुशल

सेनानी को, अपनी मुख रचना - ब्रह्माकुमारीयों और ब्रह्माकुमारों में से एक अत्यंत उत्तम कुमारी रत्न को इस ज्ञान यज्ञ के इतिहास में आये बडे-बडे तूफानों के बीच में भी एक दृढ़ निश्चयवान, फरमानवरदार, वफादार एवं कार्यकुशल, मुख्य कार्य कर्ता को, अपने परिश्रम और सेवा द्वारा तैयार किए गए एक सर्व श्रेष्ठ नमूने को साकार रूप में खोकर भी बाबा के नैन-चैन इत्यादि से ऐसा लेशमात्र चिह्न नही मिलता था कि बाबा के मन पर दु:ख की कोई परछाई पडी हैं।

16. बाबा के न्यारे और प्यारे पन की स्पष्ट झलक

बाबा का समस्त व्यवहार एक आख्यान के प्रसिद्ध मोहजित राजा के समान था। इस घटना से ये दो टूक स्पष्ट हो गया था कि बाबा का प्यार सदा आत्माओं से रहा, शरीर से नहीं। उनका स्नेह लौकिक माता-पिता से भी बढ़कर था परंतु इस घटना ने स्पष्ट कर दिया कि वह प्यार नि:स्वार्थ और निर्मल था। बाबा का प्यार सदा एक झर-झर करते झरने की अविरत धारा के समान होता था परंतु वह जितना ही उन्मुक्त था, उतना ही बाबा उसका संवरण करने में भी कमाल करते थे।

विश्व मंच पर एक दृश्य को देखते-देखते उस पर पर्दा पड जाने पर जब दूसरा दृश्य सामने आता था तो बाबा अपने मन में पिछले दृश्यों का चिंतन छोडकर अब के दृश्यों को साक्षी-दृष्टा होकर देखते चलते थे। इसलिये वे सदा न्यारी और प्यारी अवस्था में रहते थे। उनमें एक उत्तरदायित्व तथा बुजुर्ग होने के अतिरिक्त एक अजीब हल्का-पन भी रहता था और इस घटना ने बाबा के अलौकिक जीवन के इस पहलू पर प्रकाश केन्द्रित किया था। इससे विदित होता था कि बाबा का शिव बाबा में अटल निश्चय था और इस विश्व नाटक की नियति में भी अटूट निश्चय था, उनकी अवस्था हर परिस्थिति में स्थिर थी।

बाबा ने सर्वोत्कृष्ट प्रकार की रुहानियत से और एक उच्च कोटि के मनोवैज्ञानिक की सूझ से एक अलौकिक पिता, अलौकिक शिक्षक एवं मार्ग प्रदर्शक के नाते से, बहुत ही निराले ढ़ंग से यज्ञ-वत्सों को इस परीक्षा से पार करवाया और एक दैदीप्यमान एवं क्रान्तिमान सूर्य की तरह सामने आये बादलों को बिखेर कर हटा दिया।

17. मातेश्वरी जी के बारे में शिववाबा द्वारा स्पष्टीकरण एवं संदेश

इधर शिवबाबा ने भी संदेश दिया कि इस कायिक रूप में मातेश्वरीजी का इतना ही पार्ट था, बाबा ने कहा - 'बच्चों, सरस्वती के चित्र सदा युवा अवस्था के ही प्राप्त होते हैं ? उसकी मूर्तियाँ भी कभी वृद्धावस्था की नहीं बनाई जाती। वत्सो, क्या आपने सोचा कि इसका कारण क्या है ? इसका तो यही कारण है कि इस नाम एवं रूप से उन का कर्तव्य इस अवस्था तक ही चला है। प्रजापिता ब्रह्मा के तो सदा वृद्धावस्था ही के चित्र मिलते हैं परंतु जगदम्बा के सभी स्मरण - चिह्न ढलती आयु से पहले ही के हैं। कयोंकि उन्होंने इस सृष्टि मंच पर ज्ञान के राजों तथा साजों से मनुष्य आत्माओं को पवित्र बनाने का कर्तव्य इसी आयु तक किया। परंतु वत्सो, सरस्वती तो जगत् की अम्बा हैं, अर्थात् उनहोंने तो जगत् भर के नर-नारीयों को ज्ञान देने का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कार्य करना हैं, अत: अब वे प्रकाशमय, दिव्य एवं सूक्ष्म रूप से कुछ समय तक यह अलौकिक कार्य करेंगी और बाद में सतयुगी सृष्टि की स्थापना के ईश्वरीय कार्य में अन्य रीति से भी निमित्त बनेंगी।'

18. यह जगदम्बा की यात्रा है, जरा ध्यान से निकले

इस प्रकार त्रिकालदर्शी शिवबाबा ने तो मातेश्वरी जी के बारे में बता ही दिया था और संदेश पुत्रियों ने भी ध्यानावस्था में माँ को सम्पूर्ण प्रकाशमान अवस्था में सूक्ष्म दिव्य लोक में देखा था। पिताश्रीजी को तो यह ज्ञात था ही, वे तो वत्सों की अवस्था को योग-युक्त बनाये रखने के लिये ही विभिन्न प्रकार की अलौकिक युक्तियों से उन्हें इस घडी तक ला रहे थे। अब बाबा ने शव यात्रा की तैयारी के लिये वत्सों को आज्ञा देते हुए कहा - 'देखो बच्चे, यह एक ऐसी योगिन आत्मा थी जिसकी कोई दूसरी मिसाल नहीं हैं। इसने सचमुच ईश्वरीय ज्ञान को अपने जीवन में युक्ति-युक्त रीति से ढाल लिया था। ये बाल-ब्रह्मचारिणी थी जिन्हें कभी अपवित्र वृत्ति से किसी ने स्पर्श भी नहीं किया। इनकी स्थिति महान इतनी थी कि इनके ओजस्वी भाषण से, इनकी रुहानी दृष्टि से, इनकी दिव्य-कृति से और इनके पवित्र आत्मिक प्रकम्पनों से कितने अपवित्र जनों के मन का मैल धुल जाता था। इनकी योग साधना बहुत ही उच्च कोटि की थी और नियमों का पालन अभंग और अटूट था। अत: हे वत्सों, देखना कि ये शव यात्रा का सारा कार्यक्रम बहुत ही योग युक्त रीति से हो इन अन्तिम क्षणों में भी योग-युक्त वत्सों के हाथों द्वारा ही यह सारा कार्य सम्पन्न हो और यह तो अर्थी निकाली जाये, इसके साथ केवल वही जायें, जो हंस के समान मति और गति वाले हों। वत्सो, यह याद रख लेना कि यदि आप शिवबाबा की याद में रहेंगे तो हो सकता है कि अंतिम संस्कार की तैयारी के सिर पर पहुँच जाने पर भी शिवबाबा मम्मा को लौटा दें। यह तो आपने भी सुना होगा कि कई बार ऐसा होता है कि लोग शव को मरघट पर ले जाते हैं परंतु वहाँ जाकर मृतक का शरीर फिर से चेतना सम्पन्न हो जाता है और लोग खुश होते-होते उसे वापिस ले आते हैं। अत: वत्सो, अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए योग-युक्त रहना।'

सचमुच बाबा का भगीरथ नाम सार्थक हो रहा था। बाबा का पुरुषार्थ अथक, अतुल और सर्वांगीण होता था। जब डॉक्टरों ने मातेश्वरीजी के रोग को असाध्य घोषित किया था और दवा-दारु को व्यर्थ बता दिया था तब भी बाबा लौकिक और अलौकिक दोनों रीति से औषधि, उपचार कराने से पीछे नहीं हटे थे। तब भी उन्होंने सभी की उम्मीद बँधाये रखी थी और ये कहा था कि - 'मनुष्यों को कभी भी हिम्मत नहीं हारनी चाहिए और पुरुषार्थ कभी भी नहीं छोडना चाहिये क्योंकि इस विराट विश्व-क्रीडा में बहुत बार 'न' की बजाय 'हाँ' हो जाती है और घोर निराशा का स्थान सफलता ले लेती हैं।' अब भी हाल ये था कि बाबा सब लौकिक प्रयत्न समाप्त होने पर भी अलौकिक प्रयोग को बनाये रखना चाहते थे और बच्चों को यहाँ तक जीवन में बनाना चाहते थे कि - 'जहाँ तक आशा की रंच भी गुँजाइश हो। वे मायूसी एवं पुरुषार्थ हीनता को सदा के लिए और सम्पूर्ण रीति से वत्सों के जीवन से समाप्त कर देना चाहते थे।'

अब मातेश्वरी जी के शरीर को अंतिम यात्रा के लिए तैयार कर लिया गया था। दिव्य गुणों की मूर्त माँ की देह को पवित्रता एवं गुणों के प्रतीक पुष्प मालाओं से शृंगारा गया। कुछेक अन्य नगरों के सेवाकेन्द्रों से ब्रह्मा-वत्स भी आ पहुँचे थे। आखिर सभी योगीजन मातेश्वरी जी की काया यात्रा में सम्मिलित होकर चल पडे। मंजिल पर पहुँच कर उन्होंने अपने स्थूल नेत्रों से उसकी छवि को अंतिम बार निहारा। सबके मन रूपी नेत्र के सामने माँ के अलौकिक चरित्रों की एक फिल्म शीघ्रता से घूम गई। उनके चरित्रों द्वारा प्राप्त ज्ञान सेवाओं के लिए मानों कोटि-कोटि बार श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे थे। उन्हें लगता था कि यदि मानव देह में मनुष्य का इस विश्व मंच पर पार्ट हो तो ऐसा हो।

आखिर चन्दन की सेज ने माँ की देह को अपनी गोद में ले लिया और मातेश्वरी जी का शक्तिशाली, पवित्र आत्मन् तो देह रूपी आशियाने से पहले उडान भर ही चुका था। अब कायिक तत्त्व भी तत्त्वों में मिल गये और सृष्टि के तत्त्वों को पावन करने की सेवा में लग गये। विश्व इतिहास का एक प्रमुख अध्याय समाप्त हुआ। विधि की लेखनी ने अग्नि की लपटों से ज्वलन्त शब्दों में अंतिम पंक्तियाँ भी लिख डाली। परंतु यद्यपि माँ स्थूल नेत्रों से अंर्त-ध्यान हो चुकी थी, वे विश्व के कल्याण का संकल्प साथ ले जाने के कारण विश्व के कल्याणकारी शिवबाबा के पास अपने आगे के पार्ट के लिए तैयार होने गयी थी। इस धरा के आँचल पर बैठी ध्यान मग्न ब्रह्माकुमारीयों, संदेश पुत्रियों ने अपने दिव्य चक्षुओं से अनेक बार माँ को शिवबाबा के साथ अव्यक्त रूप में साक्षात् देखा था।

इधर एक ओर तो आहवान करने पर शिवबाबा योग-युक्त वत्सों के बीच माँ को किसी संदेश पुत्री के रथ में भेजते थे और दूसरी ओर पिताश्रीजी ने अब माताश्री के रूप में भी पार्ट अदा करना शुरु किया था। वे वत्सों को मातृवत स्नेह, सुख, सुविधा, सुव्यवस्था और सहयोग देते थे और उन्होंने ये पार्ट ऐसा खूबी से निभाया कि यज्ञ वत्सों को मातेश्वरी जी की अनुपस्थिति अखरती न थी।

मातेश्वरी जी के दिव्य जीवन की झाँकी

- वी.के.रमेश भाई, मुम्बई

कई बार जब मैं अपनी मस्ती में मस्त होता हूँ तब अपने आपसे उल्टे-सीधे प्रश्न पूछता हूँ। एक बार ऐसी ही अवस्था में मैंने अपने आपसे पश्न पूछा कि रमेश तुझे बाबा से ज्यादा प्यार है या ममा से ? यह प्रश्न हँसी में पूछा था। अन्दर से जवाब मिला कि ज्यादा प्यार ममा से था। जैसे घर में भी छोटे बच्चों से कई बार पूछते हैं कि तुझे मम्मी ज्यादा मीठी लगती है या पप्पा ? इसी तरह से यह भी छोटे बच्चों की तरह का प्रश्न था। इसका कारण भी कई बार सोचता हूँ तो मालूम पडता है कि मातेश्वरीजी हमारे साथ अठारह मास हमारे लौकिक घर में रहे। रोज मोटर में जाना, सेन्टर पर रोज मातेश्वरीजी का मुरली सुनाना तथा रात को साथ में भोजन खाना, आदि कई बातों के कारण मातेश्वरी जी से ज्यादा श्रद्धा युक्त प्रेम हो गया। जब मैं और ज्यादा सोचता हूँ तो लगता है कि अहो ! मातेश्वराजी जैसे कि पुरुषार्थ की प्रतिक थी। पिताश्री जो परमपिता परमात्मा के भाग्यशाली रथ भागीरथ थे इसलिए तथा साठ वर्ष का उनका अनुभवी तन था, बडे-बडे राजा-महाराजाओं के साथ उनका धन्धा था और खुद भी अपार सम्पत्ति के स्वामी थे, इसलिए मेरी समझ में तो उन्हें पहले नम्बर का पद पाने के लिए इतने पुरुषार्थ करने की जरूरत ही नहीं थी। वह पद तो उन्हीं के लिए स्वाभाविक ही था। मातेश्वरीजी जब इस यज्ञ में आई, उनकी तो आयु भी छोटी थी, ना उन्हें गृहस्थ व्यवहार का अनुभव था और ना ही पैसे आदि से मददगार बन सकी। उनकी पढाई भी इतनी ज्यादा न थी। अर्थात सभी दृष्टि से देखें तो परिस्थिति उनके लिए विपरीत ही थी, और पिताश्रीजी को सभी प्रकार से परिस्थिति अनुकूल थी।

एक बार पूना में हम मातेश्वरीजी के साथ पानशोन डैम जो टूट गया था। और जिसके कारण वहाँ बहुत नुकसान हुआ था वह देखने के लिए गए। वहाँ थोडा चलना पडा। चलते-चलते हम सब आगे चले गए तो अकेले ममा पीछे रह गयी। तो हम सब रूक गये ममा के लिए और ममा को कहा - अरे, ममा, आप तो चलने में पीछे रह गये। हमारे साथ कई बार बाबा भी घूमने आते थे परंतु वह

इतने वृद्ध होते हुए भी सदा साथ में रहते थे या कई बार हमसे आगे भी चले जाते थे। ममा ने भी हँसते-हँसते कहा - 'रमेश जी, बाबा की बात निराली है वहाँ तो एक तन में दो आत्माएँ और उनमें भी एक तो परमात्मा और दूसरी उनकी आत्मा, तो जरूर दो इन्जीन वाली गाडी एक इन्जिन वाली गाडी से फास्ट जायेगी। यहाँ पूना आने के लिए भी देखो रास्ते में दो इन्जिन लगाते हैं तो जरूर उसमे रहस्य भरा हुआ है। बाबा तो जरूर आगे जायेंगे हम सबसे क्योंकि हम सब तो एक इन्जिन वाले हैं। फिर बाबा तो है ही इन्जिन और हम सब हैं डिब्बे तो जरूर इन्जिन आगे रहेगा, तब तो डिब्बों को खींच कर ले जावेगा।'

मातेश्वरीजी का यह उत्तर जरूर सत्यता पर विशेष रोशनी डालता है और इसी कारण समझो मुझे ज्यादा प्रेम ममा से है, क्योंकि उनहों ने अपना विश्व-महारानी श्री लक्ष्मी का पद बहुत ही पुरुषार्थ से पाया है। अथक संकल्पातीत पुरुषार्थ का चैतन्य रूप हमारी मातेश्वरी जी थी। इसका कारण ? कारण के जवाब बहुत है :-

एक कारण यह था कि ममा कभी ज्ञान के बारे में अपना तर्क-वितर्क नहीं करती थी अर्थात् जितना वह जानती थी, उतना ही दूसरों को बताती थी। हम लोगों को ज्ञान की कई ऐसी बातें हैं जो परमात्मा ने समझो अब तक स्पष्ट नहीं बताई होंगी। तो उनके बारे में हम तर्क-वितर्क करते हैं कि ऐसा होगा या वैसा होगा। मतलब अपनी मत को ईश्वरीय मत में मिलाने की चेष्टा हम बच्चे करते हैं। उदाहरणार्थ - मैंने १९६२ में मधुबन में मातेश्वरी जी से प्रश्न पूछा कि ममा यह सब सन्देशी कहाँ जाती हैं ? उस समय उनकी आत्मा शरीर में होती है या कहीं और स्थान पर होती है ? ममा ने फौरन कहा था कि 'इस पर अब तक बाबा ने रोशनी नहीं दी हैं।' हमने कहा आपने विचार किया होगा ना ? आपका विचार क्या कहता है ? तब ममा ने कहा कि 'हम तो विद्यार्थी हैं और पढ़ते हैं इसलिए जितनी पढ़ाई शिक्षक ने कराई है उसका ही सोचते हैं। जब कि पढ़ाने वाला सामने सन्मुख बैठा है तब क्यों नहीं उनसे पूछ लें। मैं जो भी मत सुनाउँगी वह मन-मत हो जायेगी कयोंकि उसके लिए ईश्वरीय मत क्या है वह मालूम नहीं और आज रात को ही आप बाबा को यह प्रश्न पूछना ड्रामा प्लेन अनुसार यह रहस्य आज ही खुलेगा ऐसा लगता है। और रात्रि क्लास में बापदादा ने वह रहस्य खोला जो आज सबको मालूम है। ज्ञान का अर्थ है अपनी शक्ति और अशक्ति दोनों का ज्ञान और ममा के पास दोनों बातों का पूर्ण ज्ञान था इसलिए वह आगे निकली और बाकी सब पीछे रहें।

दूसरा कारण यह है कि ममा में तीव्र संकल्प शक्ति थी। संकल्प शक्ति का माप करना मुश्किल है। परंतु कम या ज्यादा यह कह सकते हैं। ममा ने जो एक बार नक्की किया, वह हमेशा करके ही रहती थी।

एक बार क्या हुआ कि कानपुर से वहाँ के अनन्य बहन-भाईयों ने ममा को निमंत्रण आदि के बहुत ही मीठे प्यार भरे गीत टेप करके बम्बई में भेजे। गीतों में दर्द भी था और उसी कारण सब सुनने वालों को उन गीतों ने घायल किया और सबकी आँखों से पानी बहने लगा। ममा की आँखों में पानी भर आया परंतु ममा ने कहा कि यह बूँद पानी का आँखों से बाहर नहीं आयेगा। इतनी प्यार भरी आवाज को सुनकर भी अश्रुजल बूँद बनकर आँखों से बाहर तक नहीं आये। वह बूँद अपने आप अन्दर ही वापिस छिप गये। हमने ममा से पूछा कि आपकी आँखों से क्यों नहीं आँसू बाहर आये ? ममा ने तब अपने पुरुषार्थ का शब्द चित्र दिखाया। कहा कि ''यज्ञ की शुरुआत थी। करांची में बाबा अलग क्लीफ्टन पर रहते थे और ममा आदि अलग स्थान पर रहते थे। रात को अचानक बाबा की याद आई और ममा की आँखों से सारी रात अश्रुजल बहता गया। इतने तक वह अश्रुजल बहा कि ममा का पिलो (तकिया) सारा भीग गया। बाद में बाबा को मालूम पडा तो बाबा ने ममा को एकान्त में समझाया कि 'बच्ची, रोना नहीं चाहिए।' ममा ने कहा कि 'उसी दिन से मैंने बाबा से वायदा किया है कि मेरी आँख से बूँद नहीं गीरेगी। तब से आज तक मैं इस बात में फेल नहीं हुई हूँ।' इसी कारण आज जब कानपुर के गीत सुने तब मैंने अपने को बताया कि ये जल आँखों से बाहर नहीं निकलेगा।''

हम सब तो कई बार संकल्प करते हैं कि गुस्सा नहीं करेंगे या तो कहते हैं कि रोयेंगे नहीं या रोज प्रात: योग के लिये चार बजे उठेंगे आदि-आदि। परंतु हम संकल्प के वश होते हैं और हमारे वश हमारे संकल्प नहीं रहते। जिसके संकल्प मजबूत होंगे उसकी रचना भी मजबूत होगी। ममा को हमने एक बार पूछा कि बचपन में आपने अपना भविष्य कुछ सोचा होगा। आप क्या बनना चाहते थे ? ममा ने कहा उस समय तो भक्तिमार्ग की कल्पना थी। मैं सोचती थी आज देखो मीरा आदि का गायन अभी तक सब कोई करते हैं तो मैं भी ऐसा श्रेष्ठ कर्तव्य करके जाऊँ कि सारी दुनिया मेरे कर्तव्य के कारण मुझे याद करें ? तो मुझे ऐसे महान कर्तव्य करने की इच्छा थी और उसी के पुरुषार्थ में मैं लगी रही।

और देखो सचमुच ममा ने अपने बचपन के संकल्प को सिद्ध कर दिखाया। हम सभी भी अभी संकल्प करते हैं। क्लास में जब प्रश्न पूछा जाता है कि 'लक्ष्मी-नारायण' बनेंगे या 'राम-सीता ?' तो हम सब हाथ खड़ा करते हैं लक्ष्मी-नारायण बनने के लिए अर्थात संकल्प रखते हैं श्रेष्ठ पद पाने के लिए परंतु क्या इतना पुरुषार्थ करते हैं ?'

तीसरी बात यह है कि मातेश्वरी जी के पास तीव्र तर्क शक्ति थी। आरग्युमेन्टस करने की जबरदस्त शक्ति ममा के पास थी। सामने वाले को दो सेकण्ड में बन्द करना ये गुण ममा के पास था। वकालत में सफलता उसी वकील को मिल सकती है जिसके पास विशेष यह तर्क-शक्ति हो। मुझे याद है कि हमने अपने लौकिक घर पर मुम्बई की एक सांसारिक गीता पाठशाला के बहुत से शास्त्र पढे लिखे मित्रों को ममा से मिलने के लिए बुलाया। मुझे मन में प्रश्न था कि 'ममा ने तो शास्त्र पढे ही नहीं है फिर कैसे उन्हें ममा ज्ञान से संतुष्ट करेंगी?' पहला-पहला प्रश्न यही निकला कि 'आप क्या इस गीता को झूठी गीता कहते हो?' ममा ने तुरंत ही कहा कि ''आप प्राप्ति को देखो। पाण्डवों ने यह गीता सुनकर क्या प्राप्ति की? गीता समाज के लिए थी परंतु समाज क्या बन गया। पाण्डव हिमालय चले गये यादव यादवास्थली में खत्म हो गये। कौरव तो कुरुक्षेत्र के युद्ध में खत्म हो गये। ज्ञान इतना ऊँचा होते हुए भी क्यों समाज में विकृति पैदा हुई। और यहाँ अब परमात्मा कहते हैं कि 'मैं सतयुग की स्थापना गीता ज्ञान सुनाकर करता हूँ अर्थात् गीता से विश्व परिवर्तन करता हूँ।' तो बोलो जिस गीता से विश्व परिवर्तन हुआ, उसे मानें या जिससे समाज में विकृति पैदा हुई हो उसको मानें? इसमें अन्धश्रद्धा की बात नहीं है। आप तो पढ़े लिखे हो तो जरूर अन्धश्रद्धा से परे जाकर सत्यता के बारे में निष्पक्ष होकर सोचेंगे।'' यह सुनकर एक ने दूसरे को कान में कहा कि 'अरे, इन्हों ने प्राप्ति की बात को लेकर हम सबका मुँह बन्द कर दिया। और सचमुच बाद में चर्चा का रूप ही बदल गया। वाक-स्पर्धा में सामने वाले को जीतना यह बडी बात है। हमारे सामने कोई चर्चा करने आता है तो चर्चा घण्टों तक चलती जाती है। और परिणाम कुछ नहीं निकलता।

मातेश्वरी जी ने अपने पद को अन्त तक निभाया। थी तो वह एक कन्या परंतु जिस क्षण उनको ममा का पद या तख्त या सीट मिली उसी क्षण के बाद वह पद, तख्त या सीट से कभी नीचे नहीं उतरी। सदा सर्व के प्रति माँ की शुभ दृष्टि उन्हों ने रखी। हम बच्चों को भी बाबा ने पद, तख्त या सीट दी है कि 'आपस में भाई-भाई की या भाई-बहन की दृष्टि तथा वृत्ति रखो। क्या हम सदैव ये दृष्टि या वृत्ति रख सकते हैं?' हम शुभ दृष्टि, वृत्ति नहीं रख पाते। इसका कारण यह है कि हम अपने पद को घडी-घडी छोड देते हैं।

बहन-भाई का प्रेम क्या होता है इसका बहुत ही सुन्दर मिसाल स्वामी विवेकानन्द ने दिया है। काश्मीर में जब वह श्रीनगर में थे तब वहाँ शंकराचार्य की टेकरी है वहाँ विवेकानन्द जी अपने मित्रों के साथ चढ़ रहे थे। चढ़ाई काफी कठिन थी इसलिए स्वामी जी का श्वास घुटने लगा और थोडे आराम के लिये वह थोडे समय के लिये एक वृक्ष की शीतल छाया में बैठ गये। इतने में एक ९-१० साल की लडकी अपनी गोद में ६-७ साल के अपने भाई को उठाकर गीत गुन-गुनाती ऊपर चढ़ती हुई स्वामी जी ने देखी। स्वामी जी से रहा नहीं गया और उन्होंने फौरन उस बच्ची को कहा कि 'यह बोझ क्यों उठा कर चलती हो?' तब उन बच्ची ने अपनी निगाह चारों ओर घुमाकर पूछा -'बोझ? कहाँ है बोझ?' स्वामी जी ने कहा कि 'यह बच्चा, इसको क्यों गोद में उठाया हैं? वह तो आसानी से चल सकता है। इतनी कठिन चढ़ाई पर तुमने यह बोझ उठाया हैं?' बच्ची ने दो ही शब्दों में स्वामीजी को जवाब दिया - 'अरे, यह बोझ कहाँ है यह तो मेरा भाई है। और इतना कहकर वो हँसती गाती आगे बढ़ गई।'

हम आत्माओं को शिवबाबा ने कहा कि 'सबके प्रति भाई-भाई की दृष्टि रखो। अलौकिक प्यार से चलना है।' फिर भी कई बार गलती हो जाती है। इस कमी के कारण हम कईयों से और कई हम से असंतुष्ट हो रहते हैं। एक-दूसरे की कमी को न देखकर गुण ग्राहक दृष्टि से चले तो हम अपने लौकिक-अलौकिक दोनों सम्बन्धों में अति प्रेम से सफलता पूर्वक चल सकते हैं। मातेश्वरी जी से सब सन्तुष्ट थे और मातेश्वरी जी सभी से संतुष्ट थी। एक बार उन्होंने बताया कि 'रमेश जी, मेरे पास तो सभी बच्चों के गुण-अवगुण आते हैं। कोई किसी से तो कोई किसी से रुठता है या कुछ आपस में नहीं बनती है तो रिपोर्ट तो हमारे पास आती है। अगर हम दोष-दृष्टि रखें तो फिर वह बच्चा कहाँ जायेगा? हम भी कमी को फौरन पहचान सकते हैं परंतु कमी को, कमी ना समझकर उसी कमी को भरतु करने में मददगार बनते हैं। गिरे हुए को उठाना, यही तो कमाल है। बाकी जो आगे हैं उनको आगे करने में कौन-सी बडी बात हैं। इसलिए हम कभी किसी से रुठते नहीं और ना ही किसी की निन्दा करते हैं।'

चौथी बात ममा में थी गजब की सहन शक्ति। उनकी सहन शक्ति का वर्णन करना मेरे लिये बहुत कठिन है। असंख्य बार मैंने ममा में यह गुण प्रत्यक्ष देखा है। मृत्यु का डर बाकी सबको डराता है। हम सब चाहते हैं कि हम निर्भय होकर चलें। परंतु मृत्यु के शब्द से सब डरते हैं। ममा ने मृत्यु का आह्वान शान्ति से किया। ममा को केन्सर की व्यधि थी। एक बार ऑपरेशन हो चुका था, बाद में वह बैंगलोर तथा पूना जा करके आई। मुम्बई में १८ अप्रैल १९६५ को ममा को फिर से चैकिंग करने की एपोइन्टमेन्ट थी। परंतु पूना से बम्बई जाने में एक हप्ता ज्यादा लग गया और उसी कारण चैकिंग १९ अप्रैल को हुई। रात को मेरी लौकिक बडी बहन डॉ. अनीला ने अस्पताल के बडे डॉ. की रिपोर्ट बताई कि 'अब कैन्सर की व्याधि फेफडों की ओर फैल रही है और यह मरीज ४-५ मास में खत्म हो जायेगा।' मुझे यह सुनकर बहुत धक्का लगा और इसी कारण बम्बई में शीलेन्द्रा बहन जो संदेशी है उन्हों के पास गया और

कहा कि 'मुझे शिवबाबा से व्यक्तिगत जरूरी काम है। और कुछ पूछना भी है तो आप वतन में जाकर ये संदेश दें कि शिवबाबा से मैं यहाँ नीचे बात करना चाहता हूँ।' कुछ ही मिनटों में शिवबाबा की पधरामणी हुई और मैंने मातेश्वरी जी के रोग के बारे में डॉ. की सब बातें बताई। बाबा ने कहा 'बच्चे, यह भी ड्रामा में नूँध है तो जरूर इसी प्रकार होगा। इसे भी साक्षी बनकर देखो।' मैंने पूछा कि 'क्या ये समाचार मैं ममा तथा साकार बाबा को बताऊँ?' तो कहा 'जरूर बताओ। परंतु अन्य कोई भी नहीं जाने यह ध्यान रखना। यह बात इस संदेशी को भी मालूम न पडे।' शिवबाबा वापस फिर अपने वतन चले गये।

रात को घर जाकर एकान्त में मैंने डॉ. तथा शिवबाबा का संदेश मातेश्वरी जी को सुनाया। 'सृष्टि रूपी नाटक की इस भावी को सुनते हुए भी उनके मुख पर दु:ख की कोई लहर न उठी, उनकी एकरस अवस्था में कोई परिवर्तन नहीं आया।' बाद में ३-४ मास तक बाकी सभी ने उनकी अवस्था अच्छी हो जाये इसके लिए बहुत प्रयत्न किया। तब भी उन्होंने कभी भी मुख से आवाज या कोई शब्द उच्चारण नहीं किया और न ही दवाई आदि लेने से इन्कार किया। आहिस्ता-आहिस्ता मृत्यु के काले बादल घेराव डालने लगे। तबियत बिगडती गई। परंतु फिर भी रात को २-३ बजे उठकर शिवबाबा को याद करना आदि उन्होंने बन्द नहीं किया। व्यक्तिगत पुरुषार्थ की मात्रा में अंत तक फर्क नहीं किया। हर्षितमुख से उन्होंने मृत्यु पर जीत पाई। संकल्पातीत होकर उनहोंने कर्मातीत बनने का शुभ प्रयत्न किया। और उसमें उन्होंने सम्पूर्ण विजय प्राप्त की।

अवगुण का वर्णन किसी के पास करते हैं। हर एक के भाव तथा स्वभाव को जानने से फिर भाव-स्वभाव की टक्कर नहीं चलेगी। मातेश्वरी जी इस भाव-स्वभाव के जंजाल में फँसते नहीं थे। सबको प्रेम से वह जीतते थे, इसीलिए कोई उनका दुश्मन नहीं बनता था। ज्ञान की नई बातों को न मानने वाले भी मातेश्वरीजी के व्यक्तित्व की महिमा करते थे। ऐसी सबको मातृप्रेम की मीठी लोरी से जीतने वाली हम सबकी मातेश्वरीजी जगदम्बा थी।

मैं और मातेश्वरी

- बी.के. ब्रिजमोहन भाई, दिल्ली

मैं उन सौभाग्यशाली बच्चों में से हूँ जिन्हों ने मातेश्वरी जी से साकार में अलौकिक स्नेह और पालना ली है। माँ के सम्पूर्णता दिवस को पुनीत स्मृति के इन दिनों में तो उनके लाड-प्यार और ज्ञान, शिक्षाओं को सारी यादें विशेष तौर पर मन में ताजा हो उठती है और उनके साथ बिताई हुई घडियों के दृश्य ह्रदय के पट पर उभर कर एक फिल्म की तरह चलने लगते हैं। इस अवसर पर यही उचित होगा कि मैं उन स्मृतियों का आनंद आपके साथ मिलकर उठाऊँ।

मातेश्वरीजी से मेरी पहली मुलाकात सन् १९५५ में हुई थी। तब मैं चार्टर्ड एकाउण्टैंट की पढ़ाई पढ़ रहा था और इस इश्वरीय विश्व-विद्याालय के दिल्ली (कमलानगर) सेवाकेन्द्र पर ईश्वरीय ज्ञान-योग की शिक्षा प्राप्त करते मुझे कुछ महीने ही हुए थे। सभी अपने लौकिक माता, पिता और भाई के साथ मैं पिताश्रीजी और मातेश्वरीजी (जिन्हें हम स्नेह से बाबा और ममा कहकर पुकारते हैं) से मिले आबू पर्वत पर स्थित मधुबन स्वर्गाश्रम में गया था। प्रथम मिलन के समय हाल में सामने एक सन्दली पर पिताश्री जी और दूसरी पर मातेश्वरीजी विराजमान थी। मैंने दोनों की औरबारी-बारी से देखा। ममा एक अलौकिक छवि से मुस्करा रही थी। उनके मुखमण्डल से रुहानियत टपक रही थी। उनके नयनों से असीम स्नेह बरस रहा था। बच्चे पूरे कल्प के बाद जो जाकर मिले थे। ममा का व्यक्तित्व अति प्रभावशाली और सहज ही आकर्षण करने वाला था। मुझे अच्छी तरह याद है कि उन्होंने न तो कुछ कहा था और न ही कुछ बाह्य संकेत किया था। वह तो बस बैठी हुई मुस्कराये जा रही थी। परंतु उनकी उस मुस्कराहट में ही कुछ ऐसा जादू था कि मुझे उनकी ओर से बुलाने की स्पष्ट महसूसता हुई। मैं स्वत: ही उठा और जाकर अलौकिक माँ के पास बैठ गया। कितना तपत बुझाने वाला था उनका सानिध्य! उसी क्षण मैंने जान लिया कि भक्तजन माँ को 'शीतला' कहकर क्यों पुकारते रहे हैं। माँ ने अपने पंख समान कोमल और कमल समान पवित्र हस्तों से मुझे प्यार की थपके देते हुए मेरा मुख मीठा कराया था।

जितने दिन मैं आबू में रहा, मैंने एक अजीब सी उलझन महसूस की, जिसका जिक्र मैंने आज तक किसी से भी नहीं किया हैं। आप सोचते होंगे कि ऐसी भी कौन-सी अनोखी उलझन हो सकती है जिस को मैंने अब तक अपने पास ही रख छोडा हैं? वह बात दर-असल यह थी कि चाहे क्लास में, 'चैम्बर' में (उन दिनों बाबा और ममा क्लास के बाद बच्चों के साथ ज्ञान की चिट-चैट करने दूसरे कमरे में जाकर बैठा करते थे जिसको 'चैम्बर'कहते थे। 'टोली' भी वहीं पर मिला करती थी।) या जहाँ कहीं भी बाबा और ममा दोनों विराजमान होते, तो मैं इस दुविधा में पड जाता कि दोनों में से किस-से दृष्टि लूँ और किसकी दृष्टि से वंचित रहूँ? एक ओर ज्ञान सूर्य का तेज और प्रकाश होता तो दूसरी ओर ज्ञान चन्द्र 'माँ' की चान्दनी और शीतलता होती। मैं दोनों को ही इकट्ठा प्राप्त करना चाहता

था। खैर, बाद में तो मै ने उसका यही हल निकाल लिया और दोनों से बारी-बारी से दृष्टि लेता रहता।

यों तो ममा एक युवा अवस्था की कन्या ही थी। परंतु यज्ञ माता का कार्यभार संभालते ही उनकी शारीरिक आकृति में भी इतनी आश्चर्यजनक तबदीली आ गई थी कि - 'वृद्ध से भी वृद्ध व्यक्ति को उनसे स्वाभाविक तौर पर ही माता की भासना आती थी।' वेसे तो मैंने उसी दिन अपने लौकिक पिता तथा अन्य बडी आयु वाले बच्चों को उनसे 'ममा, ममा' कहकर मिलते और बुलाते हुए देखा ही था परंतु इसका एक और अनोखा अनुभव होना अभी बाकी था। गुरुवार के दिन मधुबन स्वर्गाश्रम से ध्यानावस्था में जाकर शिवबाबा के पास भोग ले जाने वाली 'संदेशी' शारीरिक नाते से ममा की लौकिक माता थी, जिनका नाम 'रोचा' था। उस लौकिक माता को अपनी ही लौकिक बच्ची को अपनी 'अलौकिक माँ' और ममा का उसके साथ 'अलौकिक बच्ची' के ईश्वरीय ज्ञान योग बल द्वारा बदले हुए सम्बन्ध से व्यवहार करना तो बस देखते ही बनता था। पहली बार जब मैंने इस दृश्य को देखा, तो मेरे तो रोमांच खडे हो गये थे। ममा के सामने उनकी लौकिक माता वृद्धा होने के बावजूद भी सचमुच उनकी बच्ची के समान ही लग रही थी। किस प्रकार संस्कार, स्वभाव और कर्तव्य के बदले जाने से मनुष्यात्मा का सारा वातावरण तथा उसके सारे सम्बन्ध ही बदले जाते हैं, इस सत्यता की छाप मुझ पर उसी घडी लग गई थी। मैं सौ-भाग्यशाली था कि मेरा भी सारा ही लौकिक परिवार ज्ञान मार्ग में चल पडा था। परंतु उसी क्षण के अनुभव से 'लौकिक' नातों को 'अलौकिक' में परिवर्तित करने में मुझे बडी मदद मिली थी।

ममा का जीवन इस बात का आदर्श उदाहरण था कि ईश्वरीय ज्ञानयोग की शक्ति से मनुष्य में कितना पलटा आ जाता है और दिव्य गुणों की धारणा करने से सहज ही उसका जीवन कितना श्रेष्ठ और हीरे तुल्य बन जाता है। भविष्य के २१ जन्मों अर्थात् सतयुग-त्रेता की पावन, श्रेष्ठाचारी नई दैवी सृष्टि में २५०० वर्षो के लिए जीवनमुक्त देवी-देवता पद की प्राप्ति की बात किसी नये जिज्ञासु की समझ में अभी न भी बैठी हो, परंतु प्रत्यक्ष को क्या प्रमाण ? ममा के बोल-चाल और एक कर्म से चहकती हुई दिव्यता को देखकर उनके सम्पर्क में आने वाला हर व्यक्ति यह सोचने पर मजबूर हो जाता था कि जिस ज्ञान से ऐसा - ममा जैसा ऊँचा जीवन बनता हो, वह अवश्य ही ईश्वर द्वारा प्रदत्त होगा। उसके तर्क-बहस समाप्त हो जाते और वह ज्ञान द्वारा अपने वर्तमान जीवन को ममा जैसा दिव्य बनाने के लिए सोचने लगता। इस तरह ममा का प्रभावशाली व्यक्तित्व अनेक आत्माओं की इस ईश्वरीय ज्ञान मार्ग की ओर आकर्षित करने के निमित्त बना। इस मार्ग पर चलने वाली अनेकानेक आत्माओं को भी अपने पुरुषार्थ को अधिक तीव्र करके ममा जैसे सर्वगुण मूर्त बनने की प्रेरणा हर बार उससे मिलने पर प्राप्त होती थी। पिताश्री के लिए तो फिर भी कोई सोच सकता था कि शिवबाबा का साकार रथ होने के हेतु शायद उन्हें कोई असाधारण ईश्वरीय शक्ति प्राप्त होगी (हालाँकि ऐसी कोई बात थी नहीं) परंतु ममा के जीवन को तो नि:संकोच और स्पष्ट शब्दों में ईश्वरीय ज्ञान-योग की चमत्कारी शक्ति का एक अद्वितीय नमूना कहा जा सकता है।

ममा दिव्यगुणों से सम्पूर्ण साक्षात देवी थी। उनके संकल्प चट्टान की तरह मजबूत, बोल मीठे, सार-युक्त और कर्म श्रेष्ठ तथा युक्ति-युक्त थे। ममा की द्रढ संकल्प एवं सहन शक्ति का एक मिसाल ब्रह्माकुमारी मोहिनी बहन ने सुनाया था, जो कुछ समय तक ममा की ब्राह्मणी रही थी। 'एक बार ममा को बहुत सख्त शारीरिक व्याधि थी, पर क्लास का समय हो रहा था। ममा अपनी व्याधि की परवाह न करते हुए क्लास में गई और उन्होंने नित्य प्रति की तरह ज्ञान मुरली सुनाई। मोहिनी बहन यह देखकर चकित रह गई कि ममा के चेहरे पर उस व्याधि की पीडा की रेखा तक दिखाई न देती थी और क्लास को उनकी उस व्याधि के बारे में पता तक न पडा था। इतनी गजब की सहन शक्ति ममा में थी।' ममा इतनी योगयुक्त गम्भीर और शान्त रहती थी कि - 'उनके आस-पास के वातावरण में सन्नाटा छाया रहता था, जो सभी को प्रत्यक्ष महसूस होता था। ऐसा लगता था कि मानो वह कोई चलता-फिरता लाईट हाऊस और माईट हाऊस हो।' ममा की चाल फरिश्तों जैसी थी। आश्रम वासियों को पता भी नहीं चलता था कि - 'कब ममा उनके पास से गुजर गई अथवा कब से वह उनके पीछे खडी हुई उनकी एक्टिविटी को जाँच रही थी।' ममा के बोल बहुत ही मधुर, स्नेह युक्त और सम्मान पूर्ण होते थे। ममा ने मुझे सदा 'ब्रिजमोहनजी' कहकर ही बुलाया। पत्र में वह सदा 'लाडले ब्रिजमोहनजी' लिखती। पत्र में या व्यक्तिगत मिलने पर वह सबसे पहले शारीरिक तबियत का हाल-चाल अवश्य पूछती। उस अलौकिक माता का बच्चों से कितना असीम प्यार था। उतना किसी लौकिक माता का क्या होगा ? मुझे तो ऐसे लगने लगा था कि - 'जैसे कि मेरी लौकिक माँ भी ममा ही हो।' (आशा है कि मेरी लौकिक माता मेरे भाव को समझते हुए ऐसा लिखने के लिए मुझे क्षमा करेगी)

ममा शिव बाबा के ज्ञान को तुरंत धारणा में ले आती थी और अपना विचार सागर मंथन करके अपने अनुभव के आधार पर उस ईश्वरीय ज्ञान को बहुत सहज बनाकर बच्चों को सुनाती थी। ममा ज्ञान के एक गुह्य रहस्य का इतना विस्तृत स्पष्टीकरण करती कि - 'कोई अहिल्या जैसी पत्थर बुद्धि(मोटी बुद्धि) वाली आत्मा भी उसे झट समझ जावे।' शुरु-शुरु की बात है कि एक दिन मैंने ममा से प्रश्न पूछा कि - 'ममा, हमारे ज्ञान की तो सभी बातें नई-नई हैं, लोग यह सब कैसे मानेंगे ?' ममा ने प्रश्न के रूप में ही उत्तर दिया कि

- 'आप कैसे माने हो ? जैसे आपने समझा और माना है, वैसे ही अन्य लोग भी मान लेंगे।'

हम बच्चे जब भी ममा से प्रेम में नेम(नियम) नहीं, की उक्ति के अनुसार कोई ऐसा कार्य करने को कहते जिससे हमारा अलबेलापन दिखाई देता हो, तो वह हमें बहुत ही मीठे ढ़ंग से कर्मो की गुह्य गति के बारे में सावधान कर देती। एक बार जब ममा अम्बाला छावनी के सेवाकेन्द्र पर पधारी थी तो मैं नंगल (जहाँ मैं सर्विस करता हूँ) से उन्हें मिलने के लिए गया और वहीं उनसे नंगल चलने का अनुरोध करने लगा। ममा कह रही थी कि कुछ दिनों बाद का प्रोग्राम बनाओ परंतु ममा के भावार्थ को न समझने के कारण जहाँ मैंने उनसे दुबारा अनुरोध किया कि - 'ममा आप कल ही चलो न।' तो फिर ममा ने कहा कि - 'मैं तो चल सकती हूँ परंतु जो अन्य आत्माएँ पंजाब के भिन्न-भिन्न केन्द्रों से मुझे अम्बाला में मिलने आयेंगी और निराश होंगी। उसका बोझ तुम पर पडेगा।' तब मैंने समझा कि वह कुछ दिन बाद नंगल चलने को इसलिए कह रही थी कि सबको उनके प्रोग्राम की सूचना मिल सके। फिर तो मैंने उनकी बात मान ली और वह थोडे दिनों के लिए नंगल पधारी थी। इससे स्पष्ट होता है कि ममा 'लवफुल' और 'लॉ-फुल' की दोनों योग्यताओं को इकट्ठा प्रयोग किस कुशलता से करती थी। वह प्रेम के लिए नेम और नेम के लिए प्रेम की तिलांजलि नहीं देती थी।

साकार में ममा ने तो रुद्र ज्ञान यज्ञ का कारोबार संभालने में पिताश्रीजी का साथ अन्त तक दिया ही, पर ममा के सम्पूर्ण होने के बाद जब अव्यक्त ममा की पधरामणी संदेशी के तन में हुई तो आप जानते हैं कि उन्होंने पहले-पहले क्या कहा ? ममा ने उस समय उपस्थित बच्चों से यही कहा कि - 'अब आप बच्चों को यज्ञ का कार्य-भार संभालने में पिताश्रीजी का पूरा हाथ बँटाना है। पिताश्रीजी वृद्ध हैं, उन पर ममा के रुकने से अधिक बोझ न पडे।' कितनी पिता स्नेही थी हमारी ममा।

उस घटना कोतो मैं कभी ही नहीं भूल सकता जो ममा के सम्पूर्ण होने से थोडा ही समय पूर्व मेरे आबू जाने पर घटी थी। एक दिन प्रात: मैं क्लास के बाद नक्की झील का चक्कर लगाने निकल गया। सारा चक्कर लगाकर (जिसमें कुछ हिस्सा मैंने दोड भी लगाई थी।) लौटते हुए जब मैं आश्रम के समीप पहुँचा ही था तो क्या देखता हूँ कि ममा अपनी ब्राह्मणी जमुना बहन के साथ पाण्डव भवन से निकल झील की ओर जा रही हैं। ममा को देखते ही मेरी तो खुशी का ठिकाना न रहा। जमुना बहन के बताने पर कि ममा थोडी पैदल जा रही हैं, मैं पलट कर उनके साथ पुन: घूमने चल पडा। चलते-चलते हम उस जगह पहुँच गये जहाँ से अनादरा पाईन्ट को रास्ता जाता है। ममा ने कहा कि चलो आज अनादरा पाइन्ट तक चलते हैं। मैं तो बहुत ही खुश हो गया और ममा के साथ तरह-तरह की बातें करके फुला नहीं समा रहा था। मैंने कहा - 'ममा अब तो आप जानती हो कि मैं ब्रिजमोहन हूँ और मैं जानता हूँ कि आप ममा हैं, पर सतयुग में तो यह सब याद नहीं रहेगा।' ममा रहस्यपूर्ण रीति से मुस्कुराती रही। ममा से वह मिलना बहलाना इतना सुखद प्रतीत हो रहा था कि सारे रास्ते खुशी से मेरे रोमांच खड़े रहे और मुझे बिल्कुल पता ही नहीं लगा कि मैं दुबारा इतना चल लिया हूँ। जमुना बहन ने बताया कि ममा भी रोज इतनी दूर नहीं आती है। अगले दिन ममा और बाबा ने मेरे साथ फोटो निकलवाया जो आज भी मेरे कमरे में लगी हुई है। पर... पर तब मुझे स्वप्न में भी यह विचार नहीं था कि -'कुछ ही दिनों बाद माँ हम से विदाई लेने वाली थी और इस कल्प की हमारी यह अन्तिम मुलाकात थी। पर लगता है कि ममा को यह सब ज्ञात था और शायद इसीलिए उस दिन मुझ पर इतना प्यार लुटाया जा रहा था।

यज्ञ माता श्री सरस्वती

- वी.के. शारदा बहन, पटना

शास्त्रों में गायन है कि द्रौपदी यज्ञ से उत्पन्न हुई थी। अत: एक नाम यज्ञसेनी भी है। यज्ञ में आहुति डालने से कैसे एक युवा स्त्री उत्पन्न हो सकती है, यह सर्व साधारण के लिए एक अबूझ पहेली है। वस्तुत: इसका आध्यात्मिक रहस्य है। जिसे न जानने के कारण लोग इसे एक पौराणिक अतिशयोक्ति मानते हैं। पौराणिक गाथाओं के सूक्ष्म रहस्यों को भूलकर पंडितों ने अर्थ का अनर्थ कर डाला है।

पतित, तमोप्रधान कलियुगी सृष्टि की जगह पावन, सतोप्रधान सतयुगी सृष्टि के स्थापनार्थ जब निराकार परमपिता परमात्मा शिव ने प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा ज्ञान यज्ञ रचा तो सर्व प्रथम प्रजापिता ब्रह्मा ने उसमें पाँच विकारों की तथा कलियुगी तन-मन-धन की आहुति डाली। इससे उनका दिव्य अलौकिक जन्म हुआ और वे यज्ञ-पिता कहलाये। उनका अनुकरण कर अनेकानेक माताओं ने इस ज्ञान-यज्ञ में अपना सर्वस्व समर्पण किया। मातेश्वरी जी उनमें अग्रगण्य थी। उनके सारे सम्बन्ध, संस्कार और स्वभाव परिवर्तित हो गये। वे जीते जी इस दुनिया से मर गई और उनका एक नूतन मरजीवा जन्म हुआ। इस तरह परमपिता परमात्मा द्वारा रचित रुद्र ज्ञान यज्ञ से यज्ञ माता श्री सरस्वती का अलौकिक जन्म हुआ जिसका गायन शास्त्रों में हैं।

मातेश्वरी जी ने यथार्थ रूप से सम्पूर्ण समर्पण किया था। धन का समर्पण तो सहज है और बहुतों ने किया। तन भी अनेकों ने पूर्ण रूपेण यज्ञ सेवा में लगा दिया। लेकिन मन का समर्पण सहज नहीं है क्योंकि वह अत्यंत चंचल है। मातेश्वरी जी ने चंचल मन को अचल बना कर पूर्ण रूपेण परमपिता परमात्मा की पावन स्मृति में लगा दिया था। समर्पण के पश्चात उनहों ने परमात्मा और उनके ईश्वरीय कार्य के अतिरिक्त किसी सांसारिक वस्तु का चिन्तन नहीं किया। वे परमात्मा पर बलिहार जाकर उनके गले का बहुमूल्य हार बन गई। सांसारिक वस्तुएंउन्हें अंश मात्र भी आकर्षण नहीं कर सकी। माया की आकर्षण सीमा से वे परे उठ गई थी। उनकी मानसिक वृत्तियाँ पूर्ण सतोप्रधान थी। अत: उनमें एक रुहानी कशिश थी जो सर्व साधारण को अपनी तरफ आकर्षित कर उनकी कमजोरियों को निकाल देती थी।

'संशय बुद्धि' तमोगुण का लक्षण है। विकारों का थपेडा खाती जीवात्मा स्वयं संशय ग्रस्त होती है और हर कार्य तथा हर व्यक्ति में संशय रखती है। गीता में भगवानुवाच है - 'संशयात्मा विनश्यन्ति।' मातेश्वरी पूर्ण निश्चय बुद्धि थी। ईश्वरीय कार्यो में उन्हें कभी संशय नहीं उत्पन्न हुआ। यज्ञ की कठिन से कठिन परीक्षा की घडी में वे अडिग, अडोल और निश्चिंत रही। निश्चय-बुद्धि सदा निश्चिंत रहता है। निश्चयात्मा को किसी प्रकार की चिंता नहीं हो सकती, क्योंकि उसे निश्चय है कि ईश्वरीय कार्य असफल नहीं हो सकता। सत्य की नाँव डोलेगी अवश्य पर डूबेगी नहीं। पिताश्रीजी ने कठिन से कठिन कार्य के लिए उन्हें आदेश दिया होगा तो भी उन्हों ने कभी प्रतिवाद नहीं किया कि यह कार्य कैसे होगा। उनका सदा उत्तर था - 'जी बाबा' वे सफलता मूर्त थी। जिस कार्य में वे हाथ डालती वह अवश्य सफल होता था। परमपिता परमात्मा के साथ-साथ अपनी शक्ति पर भी उन्हें अटूट निश्चय था।

मातेश्वरी जी परमपिता परमात्मा के प्रत्येक कार्य में पूर्ण सहयोगी थी। परमात्मा के मुख्य तीन कार्य हैं - 'स्थापना, विनाश और पालना।' दिव्य योग-बल तथा प्राय: लोप ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा द्वारा पतित, तमोप्रधान जीव आत्माओं को पावन, सतोप्रधान बनाकर पावन सतयुगी सृष्टि की स्थापना के ईश्वरीय कार्य में वे सर्वोत्तम सहायक थी। ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा द्वारा उन्होंने अनेकानेक शुद्रों को ब्राह्मण बनाया। इस महान कार्य के लिए परमपिता ने उनको ज्ञान की देवी सरस्वती का उच्चतम पद दिया। भक्ति मार्ग में आज भी लोग उनसे ज्ञान की भिक्षा माँगते हैं। लेकिन अन्त में जब वे प्रत्यक्ष रूप में ज्ञान में आई तो लोग उन्हें पहचान न सके। योग-अग्नि में उन्होंने अपने विकर्मो को भस्म कर डाला। साथ ही अपनी अलौकिक योग-शक्ति से दूसरी जीवात्माओं के विकर्मो का विनाश करा कर उनको पावन बनाया। उन्होंने सबसे विकारों की बलि ली और फल स्वरूप काली रूप में प्रतिष्ठित हुई। आध्यात्मिक पालना के कार्य में तो वे अद्वितीय थी। अनेकानेक जीवात्माओं की उन्होंने दिव्य पालना की तथा उनकी 'अलौकिक माँ' बन गयी। 'माँ' रूप से बच्चों की पालना करना नारीत्व की सफलता मानी जाती है। जिसने सारी सृष्टि की जीव आत्माओं के लिए 'माँ' का वात्सल्य पैदा कर लिया हो उसके जीवन की सफलता का वर्णन किन शब्दों में किया जा सकता है? 'माँ' में दो गुण होते हैं - 'समाने का और सहन करने का।' मातेश्वरी जी सर्व जीव आत्माओं के अवगुणों को अपने में समा लेती थी और उनके अपकारों तथा अनुचित कार्यो को सहन करती हुई उनके प्रति कल्याण की भावना रख कर उनकी आध्यात्मिक पालना करती थी। उनके शीतल, ईश्वरीय पालना में सभी असीम शक्ति मिलती थी। ईश्वरीय ज्ञान द्वारा स्थापना के कार्य के लिए सरस्वती के रूप में, विकारों की बलि लेने के लिए काली के रूप में तथा पालना करने में श्री लक्ष्मी के रूप में वे आज भी पूजी जाती है।

माँ तपस्या की जीवन्त प्रतिमा थी। वे नियमित रूप से अमृतवेला (ब्रह्ममूहुर्त) में उठकर परम प्रियतम परमात्मा की आनन्दमयी स्मृति में टिक जाती थी। सारा दिन आध्यात्मिक सेवा कार्य करते हुए वे योगस्थ रहती थी। स्वयं आत्म स्वरूप में स्थित होकर वे सभी को आत्मा के रूप में ही देखती थी। तथा आत्माओं की कमजोरीयों को दूर करने का प्रयत्न करती थी। उनकी योग-युक्त दृष्टि में अमोघ शक्ति थी जो अन्त:स्तल में प्रवेश कर मूर्च्छित आत्माओं को अनुप्राषित कर देती थी। उनके हँसने-बोलने, खाने-पीने, बैठने-चलने आदि हर कर्म से अलौकिकता तथा दिव्यता की भासना आती थी। त्याग, तपस्या, क्षमा, दया, करुणा, प्रेम उनका सहज स्वभाव बन गया था। वे आत्मा की उस उँचाई पर पहुँच गयी थी जहाँ से ये गुण स्वत: प्रवाहित होते थे, गुण सागर परमात्मा से उनका सतत सजीव सम्पर्क जो था।

मातेश्वरीजी की निर-अहंकारीता आज के युग में अकल्पनीय है। वे विनम्रता की साकार प्रतिमा थी। इतने बडे यज्ञ का सर्वे-सर्वा होते हुए भी उन्हें अहंकार छू तक नहीं गया था। यज्ञ में सभी स्वभाव और संस्कार के लोग थे तथा उन्होंने उनका सब तरह से सामना किया लेकिन माँ में कभी बदले की भावना नहीं उत्पन्न हुई। उन्हों ने सदा सबके कल्याण की वृत्ति रखी। न किसी को दु:ख दिया और न किसी से दु:ख लिया। सबके प्रति उनमें असीम करुणा तथा प्रेम की भावना थी। उनकी सहनशीलता क्षमा शीलता तथा प्रेम से प्रभावित होकर तमोगुणी आत्माओं के स्वभाव और संस्कार को दृष्टा बन कर देखती थी और अपकारी के प्रति पूर्ण उपकार की भावना

रखती थी। कमजोर आत्माओं की कमजोरी को न देखकर वे उन्हें भी आत्मिक शक्ति प्रदान करने का प्रयत्न करती थी। बने बनाये विविधता पूर्ण ड्रामा के कल्याणकारी विधान पर उनका इतना अटूट निश्चय था कि कभी उन्होंने किसी बात पर क्या, क्यों, कैसे का प्रश्न नहीं उठाया। इस अनादि निश्चित सृष्टिनाटक में जो भी नूँध हैं, हमारे कल्याण अर्थ ही हैं।

मातेश्वरी जी भव-सागर में थपेडा खाती भूली-भटकी जीवात्माओं के लिए चैतन्य प्रकाश स्तम्भ थी उन्हों से पथ प्रदर्शन प्राप्त कर अनेकानेक जीवात्माएँ शिव शक्ति स्वरूप बन गयी और उन्होंने माया के पाँच विकारों को युद्ध के लिए ललकार दिया। जगदम्बा श्री सरस्वती इस शिव-शक्ति सेना की सेनानी थी। उनके आसपास का वातावरण आध्यात्मिक शक्ति से ओत-प्रोत रहता था। उन्होंने अतिन्द्रिय सुख का प्याला भर कर पिया था। वे निरन्तर अव्यक्त स्थिति में रहकर परम प्रियतम परमात्मा से अव्यक्त मिलन मनाया करती थी। उनके नेत्रों और मुख मण्डल से दिव्यता तथा अलौकिकता की भासना आती थी। इस लोक में रहते हुए भी उनकी बुद्धि निरन्तर शिव लोक और देव लोक में विचरण करती थी। ऐसा प्रतीत होता था कि वे देवलोक की एक फरिश्ता हैं जो इस लोक में जन कल्याणार्थ विचरण कर रही हैं। वे सांसारिकता से पूर्ण अनासक्त थी तथा उनका जीवन कमल पुष्प समान था। तभी तो भक्ति मार्ग में सरस्वती को कमल पुष्प पर आसीन दिखाते हैं।

शास्त्रों में ब्रह्मा को सदा वृद्ध दिखाया जाता है और सरस्वती को युवावस्था में। निराकार परमात्मा शिव ने पावन सृष्टि के स्थापनार्थ एक वृद्ध अनुभवी तन का आधार लिया। अत: वृद्ध ब्रह्मा का गायन है लेकिन बाल ब्रह्मचारिणी सरस्वती ने युवावस्था में ही ज्ञान-यज्ञ में अपने को समर्पित कर दिया और कर्मातीत बन वृद्धावस्था से पूर्व ही वे अव्यक्त हो गयी। उनके अव्यक्त होने के पुण्य दिवस पर हमारा पुनीत कर्तव्य है कि हम स्थापना-विनाश-पालना के इस ईश्वरीय कार्य में पूर्ण सहयोगी बनें तथा स्वयं पवित्र और कर्मातीत बन सारी सृष्टि को पावन बनाने का पान का बीडा उठायें।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करे:-

स्पार्क – आध्यात्मिक अनुप्रयोग अनुसन्धान केन्द्र

(SpARC – Spiritual Applications Research Centre)

बेहतर विश्व निर्माण अकादमी,

ज्ञानसरोवर, आबू पर्वत–307501

राजस्थान, भारत

मोबाईलः +919414003497, +919414082607

फैक्स – 02974-238951

ई-मेल – bksparc@gmail.com

sparc@bkivv.org